आत्म विकास
सफलता का रहस्य

मौलाना वहीदुद्दीन खान

आत्म विकास
सफलता का रहस्य

आत्म विकास
सफलता का रहस्य

लेखक
मौलाना वहीदुद्दीन खान

Goodword Books

First published 2025
This book is copyright free

Goodword Books
A-21, Sector 4, Noida-201301, Delhi NCR, India
Mob. +91 8588822672
info@goodwordbooks.com
www.goodwordbooks.com

CPS International
Centre for Peace and Spirituality International
1, Nizamuddin West Market, New Delhi-110 013, India
Mob. +91-9999944119
info@cpsglobal.org
www.cpsglobal.org

Center for Peace and Spirituality USA
2665 Byberry Road, Bensalem, PA 19020, USA
Mob. 617-960-7156
kkaleemuddin@gmail.com

विषय-सूची

अध्याय एक

सोच का फर्क: उलझन या समाधान 9

सोचने का सही अंदाज़ 11

फ़र्क को जानें 11

एक मात्र हल 12

सकारात्मक सोच 13

जीवन एक कला 15

आदर्श संभव नहीं 16

सोच: सफलता का आधार 17

ख़ामोशी ही जवाब है 19

टकराव नहीं, प्रगति चुनो 20

काल्पनिक ख़तरा, हकीकी ख़तरा 21

अनुभव का अभाव या ग़फलत 22

गिरकर संभलना 23

तुलनात्मक सोच की गलती 24

नज़र-अंदाज़ करना 26

समझदार कौन? 28

गलत सोच का मसला 30

अध्याय दो

प्रकृति सबसे बड़ी शिक्षक 37

प्रतिस्पर्धा का नियम 39

फलदायक बनो 40

सीखने का दौर 41

प्रकृति की शिक्षा 42

चैलेंज का नियम 43

वास्तविकता का वर्णन 45

हकीकतपसन्दी 46

खामोश रहना 47

सहनशीलता: प्रकृति का नियम 49

सच्चाई की कसौटी 50

सबसे अधिक सफल 52

विनम्र स्वभाव 53

साज़िश नहीं, प्रतिस्पर्धा 54

प्रकृति के अनुरूप 55

उचित शिक्षा हासिल करें 56

हर हाल में संतुलन 57

शांति या विनाश 59

अख्लाकी गिरावट 60

हानि में लाभ 61

ख़ास दूरी बनाये रखें 63

इंसान की दो किसमें 64

स्वयं की पहचान 65

हार के बाद जीत 67

प्रारंभ और अंत 68

रास्ते बन्द नहीं 69
अपने हक के अनुसार 70
संभावनाओं का अंत नहीं 72
उजाले की आस 73
अत्यधिक कठिन, अत्यधिक सरल 74
विनाश की ओर पहला क़दम 76
पौधे की मिसाल 77
इरादे की मज़बूती 79
जीवन एक संघर्ष 80
बैलेंस बनाए रखें 81
कठिनाइयाँ उन्नति की सीढ़ी 82
नई सुबह 84
ज्ञान का संसार 85
जीवन की गाड़ी कैसे चलाएँ 86
घरोंदे की मिसाल 88
सब्र बहादुरी है 89
आगे की सोचिए 90
एक वास्तविकता 92
इंसानी फ़ितरत 93
बाग़ रातों-रात नहीं उगते 95
हिकमत का सवाल 96
नाकामी से कामयाबी 97

अध्याय तीन

जीवंत घटनाएँ और प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अनुभवों की दुनिया 99
अपने कल को जानिए 101
धैर्य का फल 102
अनथक प्रयास 103
एक और मौका 104
एक वैज्ञानिक 106
सेवा करने से सम्मान 107
डायरी साथ रखिए 108
अमन की ज़रुरत 110
सीखने का मेजाज़ 111
आप क्या हैं 112
इंतेख़ाब की कसौटी 113
रचनात्मक ज़ेहन 115
तीन मिनट का सब्र: शांति और दंगे के बीच की दूरी 116
कामयाबी का रहस्य 118
कर्म से कामयाबी 119
लालच बुरी बला 120
काबिलियत, न कि सिफ़ारिश 121
बोलने और करने का फ़र्क 124
धैर्य की शक्ति 125
सब्र का करिश्मा 127
साज़िश के बावजूद 129
शालीनता की शक्ति 130

संघर्ष से महानता 132
नए युग की राह पर 133
ईश्वर का अटल नियम 134
काँटे भी, फूल भी: समाज की दो तस्वीरें 136
निर्बल भी बलवान है 137
मौत कि छलाँग 138
माहौल शांत हो गया 139
तरक्क़ी के मौक़े 141
बीते कल से आज तक 142
हिम्मत न हारें 143
सफलता की कुंजी 145
पचीस साल 147
मनुष्य की कथा 148
उन्नति की राह 150
चुनौती स्वीकार कीजिए 151
शहर की स्थापना 153
रुकावट अंत नहीं 154
शिकायतों के बावजूद 155
तरक्क़ी की राह 157
हर एक के स्थान को जानिए 158
मुस्तकबिल को देखें 159
अपना उत्तरदायित्व 160
संघठन या अराजकता 162
अवचेतन संदेह 163

अध्याय चार

कामयाबी के खुले ख़ज़ाने 165
समझदारी से हल 167
अवसर सिर्फ़ एक बार 168
कामयाबी के पीछे 169
अगले अध्याय पर नज़र 170
मुश्किलें सिखाती हैं 172
विचार और आचरण में एकता 173
अपना आज सवारें 174
कठिनाईयां और संभावनाएं 176
कामयाबी : 50% मेहनत, 50% मौका 177
कठिनाईयों का सामना करना होगा 178
दिल बड़ा कीजिये 179
सबके लिए भलाई 181
ऊँचा लक्ष्य 182
रास्ता तलाश कीजिये 184
पराजय नाकामी नहीं 185
चेतना का विकास 186
बदले से समाधान नहीं 188
ख़ुद पर जीत 189
हर रात के बाद सवेरा 190
इल्म की अहमियत 192
मुहब्बत से जीत 193
सूझबूझ से व्यापार 194

निरंतर संघर्ष 195
दो तरह के लोग 197
धैर्य की प्रतिकिर्या 198
बेवजह टकराव 200
लक्ष्य एक हो 201
उत्साह: असली पूंजी 202
जो दोगे वही मिलेगा 204
मुश्किल के साथ आसानी 205
समझदारी 206
हार मान लेना 208
प्रतिक्रिया नहीं 209
कामयाबी के दस सूत्र 210
मूर्खता और बुद्धिमानी 212
अग्रिम सावधानी 213
अष्टक का क़ानून 215

अध्याय पाँच

जीवन का प्रकाशमय मार्ग 217
जहाँ समस्या वहां हल 219
चरित्र ही पहचान है 221
डाँडी का सबक़ 223
सेवा का फल 226
आत्मिक बल 229
ज्ञान ही असली दौलत 231
वंचित होने के बावजूद 234
फासला रखें 237
भड़काएं नहीं 240
हर एक संभावित दोस्त 242
ख़ामोशी हल है 245
चुनौती अवसर है 248
निर्माण की ताक़त 250
कल्पना और हक़ीक़त 253
मूल समस्या 255
संघर्ष से बचिए 258
जीवन की शिक्षा 261
समय बहुत क़ीमती है 263
भविष्य को अपना निशाना बनाएं 265
चुनौती योग्यता बढ़ाती है 267
गुस्से का जवाब पानी से 270
गिर कर उठना 273
सूझ-बूझ विकसित करें 275
चैलेंज कुबूल करें 278
वक़्त की क़ीमत 281
निरंतर पर्यास 284
उपाय से हल 286
जानने की जिज्ञासा 289
अनदेखे लाभ 292
इंतज़ार में हल 294
दुश्मन से भी मुहब्बत 295
घर से वंचित होना 296
संयम रखें 297
उपेक्षा ही हल है 299
जिन्दगी की सड़क 301
सही सोच 305
निबाह करना सीखें 307
बोझ न बनें 310

अध्याय एक

सोच का फर्क: उलझन या समाधान

किसी भी इंसान के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ है कि उसकी सोच सही हो। सही सोच ही इंसान को आगे बढ़ने और कुछ अच्छा करने की तरफ़ ले जाती है। लेकिन यदि सोच में ही भ्रम हो या उसका दृष्टिकोण ही सही न हो, तो इंसान तरक़्क़ी की राह छोड़कर पिछड़ेपन और असफलता की ओर बढ़ने लगता है।

सोचने का सही अंदाज़

इंसान की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह सूझ-बूझ रखने वाला प्राणी है। इसके विपरीत, जानवर अपनी प्रकृति के अधीन होता है और वही करता है जो उसकी स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ उससे कराती हैं। इंसान की महानता इसी में है कि वह सोच सकता है, और अपनी सोच के आधार पर अपने कार्यों की योजना बनाता है। जानवरों के लिए गलती करने की कोई संभावना नहीं होती, क्योंकि वे अपनी जैविक प्रवृत्ति के अनुसार ही व्यवहार करते हैं। लेकिन इंसान के साथ ऐसा नहीं है—वह सही भी करता है और गलत भी। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हर इंसान अपनी सोचने की क्षमता को जीवन के अंतिम क्षण तक जागरूक रखे, ताकि उसकी सोच सही दिशा में अग्रसर रहे और उसी के अनुरूप उसके कार्य भी सही और सार्थक हों।

फ़र्क को जानें

बोलने की कला या चिन्तन-मनन की शैली (art of thinking) से संबंधित एक महत्वपूर्ण पहलू यह है— किसी एक चीज़ और दूसरी चीज़ के बीच के अन्तर को पहचानना। इस दुनिया में बहुत-सी चीज़ें ऐसी होती हैं जो देखने में तो एक जैसी प्रतीत होती हैं, लेकिन वास्तव में वे एक-दूसरे से भिन्न होती हैं। जब कोई व्यक्ति इस अन्तर को समझ नहीं पाता, तो कई बार उसे गंभीर नुकसान का सामना करना पड़ता है।

उदाहरण के तौर पर, एक आदमी नौकरी करता है और दूसरा आदमी व्यापारी है। नौकरी करने वाले आदमी को महीना पूरा होने पर जो रुपये मिलते हैं वह पूरी की पूरी उसकी अपनी आमदनी होती है। अगर वह मिले हुए पूरे रुपये ख़र्च कर दे तो उससे उसकी नौकरी को कोई हानि नहीं होगी।

इसके विपरीत व्यापारी के पास पूरे महीने में जो रुपये आए, अगर वह इन सारे रुपयों को अपनी व्यक्तिगत ज़रूरत में ख़र्च कर दे और हर महीने ऐसा ही करता रहे तो उसकी तिजारत समाप्त हो जाएगी और वह दिवालिया होकर रह जाएगा। क्योंकि व्यापारी के पास जो रुपये आते हैं उसमें मुश्किल से दस प्रतिशत उसकी अपनी आय होती है, शेष रुपये मार्किट के होते हैं, जिन्हें उसे दूसरों को लौटाना होता है। ऐसी हालत में ज़रूरी है कि नौकरी और तिजारत (business) के अन्तर को समझा जाए, वरना आदमी को बहुत नुक्सान उठाना पड़ेगा। इस उसूल का सम्बन्ध जीवन के मामलों से है।

आदमी को चाहिए कि जब भी कोई मामला पेश आए तो प्रत्यक्ष या आंशिक समरूपता के आधार पर वह ग़लत राय कायम करने की गलती न करे। वह दो चीज़ों के भेद को जाने और उसके अनुसार अपनी राय कायम करे। जो आदमी इस युक्ति को न समझे उसका हाल एक ऐसे ड्राइवर का सा होगा, जो ख़ाली सड़क और भरी सड़क के अन्तर को बगैर जाने दोनों जगह अपनी गाड़ी एक ही रफ़्तार से दौड़ाने लगे।

एक मात्र हल

इंसानी समाज में टकराव की स्थिति बार-बार आती रही है। लेकिन यह टकराव कोई अनिवार्य वास्तविकता नहीं हैं। सोचने वाला व्यक्ति खुद यह तय कर सकता है कि वह चाहे तो अपने आपको इन झगड़ों में उलझा ले, और चाहे तो इनसे दूर रहकर शांति की राह अपनाए। यही बात न केवल व्यक्ति पर लागू होती है, बल्कि जातियों और हुकूमतों पर भी समान रूप से लागू होती है।

मैं एक व्यक्ति के साथ घटित एक घटना जानता हूँ। उन्होंने व्यापार किया और उसमें अच्छी-खासी सफलता पाई। उनके एक रिश्तेदार, जिन्होंने

उन्हीं के साथ व्यापार की शुरुआत की थी, वे इस राह में सफल नहीं हो सके। इसी असफलता के कारण उनके मन में इस सफल व्यापारी के प्रति ईर्ष्या उत्पन्न हो गई। एक व्यक्ति ने उस सफल व्यापारी को आकर बताया कि आपका अमुक रिश्तेदार आपके बारे में यह-यह बातें कहता है। व्यापारी ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने कई बार अपनी बात को दोहराया। अन्त में उसने कहा कि मैं आपको बार-बार बता रहा हूँ कि आपका फ़लाँ रिश्तेदार आपके विरुद्ध बुरी-बुरी बातें फैला रहा है मगर आप उसका कोई जवाब ही नहीं देते! उपरोक्त व्यापारी ने बड़े विश्वास से कहा : यह उनकी परेशानी है, मेरी परेशानी तो नहीं।

उस व्यापारी ने अपने द्वेषी रिश्तेदार की बात को सुना और टाल दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि दोनों के बीच और कोई मसला पैदा नहीं हुआ। बात शब्दों में समाप्त हो गई। इसके विपरीत अगर यह व्यापारी उस रिश्तेदार की बात पर भड़क उठता तो दोनों के बीच ऐसी लड़ाई छिड़ जाती जिसमें दोनों की बर्बादी पक्की थी।

सकारात्मक सोच

वर्तमान संसार में कोई आदमी अकेला नहीं है। यहाँ हर आदमी को दूसरे बहुत से लोगों के साथ जीवन गुज़ारना होता है, ठीक वैसे ही जैसे सड़क पर हर आदमी अपनी गाड़ी को दूसरी बहुत-सी गाड़ियों के साथ चलाता है। ऐसी हालत में प्रतिक्रिया की नीति कभी लाभप्रद नहीं हो सकती। इस दुनिया में कामयाबी केवल उस व्यक्ति के लिए है जो नकारात्मक स्थितियों में भी सकारात्मक जवाब देना जाने।

इस प्रसंग की एक रोचक मिसाल यह है कि स्वामी विवेकानन्द (मृत्यु 1902 ई.) के एक मसीही मित्र ने उन्हें परखने की कोशिश की। उसने

स्वामीजी को अपने घर आमंत्रित किया। घर के बैठक कक्ष में एक मेज़ रखी थी। उस मसीही मित्र ने विभिन्न धर्मों की पवित्र पुस्तकें उस मेज़ पर एक के ऊपर एक रख दी थीं। उनका क्रम यह था कि सबसे नीचे हिन्दुओं की धार्मिक पुस्तक गीता रखी थी और उसके ऊपर अन्य धर्मों की किताबें।

जब स्वामीजी उस कमरे में पहुँचे, तो उनके मसीही मित्र ने मेज़ की ओर संकेत करते हुए कहा, "स्वामीजी, मेज़ पर रखी इन पुस्तकों को देखिए और इनके क्रम पर अपनी राय दीजिए।"

मसीही मित्र का अनुमान था कि स्वामीजी इस स्थिति को देखकर नाराज़ हो जाएँगे — कि उनके धर्म की पुस्तक को सबसे नीचे रखा गया है और अन्य धर्मों की पुस्तकों को उसके ऊपर। क्योंकि प्रत्यक्षतः यह उनके धर्म के अपमान और अन्य धर्मों के सम्मान को दर्शाता था।

मगर स्वामीजी इस दृश्य को देखकर गुस्से में नहीं आए। उन्होंने इस स्थिति को संयमित भाव से स्वीकार किया। इस सकारात्मक दृष्टिकोण के आधार पर वे इस बात के योग्य बने कि एक संभावित नकारात्मक घटना का सकारात्मक उत्तर दे सकें।

उन्होंने किताबों की ओर देखा, मुस्कराए और बोले:

The foundation is really good.

"नींव तो बहुत ही अच्छी है।"

यह घटना इस बात का सटीक उदाहरण है कि आदमी अगर गुस्सा न हो और सन्तुलित रहे तो वह अपने 'नहीं' को 'है' बना सकता है। वह एक प्रतिकूल घटना को एक अनुकूल घटना में बदल सकता है।

इन कुछ उदाहरणों से प्रतीत होता है कि सोचने की प्रक्रिया का कितना ज्यादा महत्त्व है। वास्तविकता यह है कि विचार ही के द्वारा आदमी की हर कामयाबी और नाकामी का फ़ैसला होता है। उच्च जीवन नाम है उच्च सोच

का। अगर आप जीवन में कामयाब होना चाहते हैं तो अपने अन्दर सही सोच पैदा कीजिए। सही सोच ही का दूसरा नाम सही अमल है और सही अमल का दूसरा नाम कामयाबी।

जीवन एक कला

कहते हैं की जीवन एक कला है। इस दुनिया में वही लोग एक सफल जीवन जी सकते हैं, जो इस कला से परिचित हों। जो इस कला को नहीं जानते, उनके भाग्य में इस संसार में नाकामी ही आती है।

यदि इस कला को एक ही शब्द में समेटना हो, तो उसे *सकारात्मक सोच* (Positive Thinking) कहा जा सकता है। इसका मतलब है—प्रतिक्रिया की मानसिकता से ऊपर उठकर खुले ज़ेहन के साथ सोचना, और निष्पक्ष दृष्टिकोण अपनाकर उसी के आधार पर योजना बनाना।

इसके विपरीत सोचने की जो प्रक्रिया है, वह *नकारात्मक सोच* (Negative Thinking) कहलाती है। अगर सकारात्मक सोच का मतलब है अपनी विचार शक्ति को क्रियाशील बनाना, तो नकारात्मक सोच का अर्थ यह है कि व्यक्ति अपने विवेक का उपयोग न कर सके और केवल बाहरी माहौल के असर में आकर सोचे और अपना विचार बनाए।

इस आधार पर देखा जाए, तो जीवन का पूरा मसला सही और ग़लत सोच का है। जहाँ सही सोच सफलता की कुंजी है, वहीं ग़लत सोच निश्चित असफलता की ओर ले जाती है। यही सिद्धांत न केवल व्यक्तियों पर लागू होता है, बल्कि समाज पर भी उतना ही सटीक बैठता है।

अगर व्यक्ति अपने मस्तिष्क को बंद न रखे, तो सही समझ तक पहुँचना कोई कठिन कार्य नहीं है। स्वयं मानव की प्रकृति उसे इस दिशा में प्रेरित करती है। सृष्टि में बिखरे चिन्ह भी यही मार्ग दिखाते हैं। इतिहास के

अनुभव भी इसी बात की पुष्टि करते हैं। समस्त ज्ञान भी इसी ओर इशारा करता है। ऐसे में केवल वही व्यक्ति सही सोच से वंचित रह सकता है, जो आँखों के होते हुए देखे नहीं, कानों के होते हुए सुने नहीं, और समझदारी के होते हुए समझने से इंकार कर दे।

आदर्श संभव नहीं

हर व्यक्ति जन्म से आदर्शवादी (idealist) है। वह हमेशा उच्च स्तर की तलाश में रहता है। वह हर मामले में भलाई को हासिल करना चाहता है। इस प्रकार की आदर्शवादिता सामान्य रूप से बहुत अच्छी मालूम होती है, मगर व्यावहारिक रूप से यह अक्सर दुःखदायी होती है।

इसकी वजह यह है कि कोई भी व्यक्ति इस दुनिया में अकेला नहीं है। हर किसी को यहाँ दूसरों के साथ मिलकर जीवन व्यतीत करना होता है। हर इंसान के अपने हित होते हैं। हर व्यक्ति की अपनी-अपनी आवश्यकताएँ होती हैं। लाभ और हानि को लेकर हर किसी का एक अलग व्यक्तिगत दृष्टिकोण होता है। यही स्थिति आज की दुनिया में हर व्यक्ति के लिए आदर्श परिस्थिति तक पहुँचना बेहद कठिन बना देती है। ऐसे में व्यावहारिक दृष्टिकोण केवल यही हो सकता है— कि हम लगातार दूसरों के साथ समायोजन करते हुए अपने जीवन की राह तय करें।

असल सच्चाई यह है कि आज की दुनिया में किसी व्यक्ति के पास जो चयन (choice) है, वह भलाई और बुराई के बीच नहीं होता, बल्कि वह *छोटी बुराई* (lesser evil) और *बड़ी बुराई* (greater evil) के बीच होता है। ऐसे में सही सोच या उचित मार्ग यही हो सकता है कि जब कोई मामला सामने आए, तो व्यक्ति बड़ी बुराई से बचे और छोटी बुराई को स्वीकार करके आगे बढ़ जाए।

सोच: सफलता का आधार

मनुष्य को एक विवेकशील पशु (thinking animal) कहा गया है। यह बात एक सच्चाई है कि उसकी हर क्रिया उसकी सोच के अधीन होती है। वह पहले सोचता है, और फिर उस सोच के अनुसार कार्य करता है। यदि सोच ठीक हो, तो उसका कार्य भी सही दिशा में होता है। लेकिन अगर सोच ही गलत हो, तो उसकी पूरी प्रक्रिया शुरुआत से अंत तक गलत हो कर रह जाती है। सही सोच ही सही आरंभ का कारण बनती है, और एक सही आरंभ ही सही परिणाम तक ले जाती जाता है।

जब कोई सेब या कोई अन्य फल अपनी डाली से गिरता है, तो वह सदैव ज़मीन की ओर ही गिरता है। यह प्रक्रिया हज़ारों वर्षों से चल रही थी। मगर लोगों ने इसे हमेशा एक सामान्य घटना के रूप में देखा। वे यह मानते रहे कि इसमें सोचने जैसी कोई बात नहीं है, क्योंकि वही हो रहा है जो होना चाहिए।

लेकिन न्यूटन (मृत्यु 1727) वह पहला व्यक्ति था, जिसने सेब के फल को डाल से टूट कर नीचे गिरते हुए देखा और इस पर विचार किया कि ऐसा क्यों हुआ। उसके मन में यह असामान्य प्रश्न आया: जब सेब डाली से टूटा तो वह ऊपर क्यों नहीं गया? वह नीचे ही क्यों आया? यह विचार देखने में नया था, लेकिन इसी सोच के ज़रिए न्यूटन इस वास्तविकता को जान सका कि पृथ्वी में एक गुरुत्वाकर्षण बल (gravitational pull) होता है। यही वह शक्ति है, जो ऊँचाई से नीचे की ओर खींचती है। यही वजह है कि जो चीज़ ऊपर होती है, वह नीचे आती है, और जो नीचे होती है, वह ऊपर नहीं जाती।

आदमी को हज़ारों वर्षों से प्रत्यक्ष रूप में यही दिखाई देता रहा कि ज़मीन चपटी है, जैसे कोई समतल मैदान हो। प्रत्यक्ष अनुभव में यह दृष्टिकोण सही प्रतीत होता था। इसलिए इसे एक सुनिश्चित तथ्य मान लिया गया।

एक बार ऐसा हुआ कि एक गहरी सोच वाला आदमी समुद्र के किनारे तट पर खड़ा हुआ था। दूर समुद्र आकाश-सीमा से मिलता हुआ नज़र आता था। अचानक उसने देखा कि समुद्र के दूसरे सिरे पर एक आकार दिखाई दिया। यह एक समुद्री जहाज़ का पाल-पट (बादबान, जहाज़ को आगे बढ़ाने वाला कपड़ा) था। धीरे-धीरे पाल-पट उभरता गया और यहाँ तक कि पूरा जहाज़ समुद्र के ऊपर दिखाई देने लगा।

वह व्यक्ति सोचने लगा कि ऐसा क्यों हुआ। उसने विचार किया कि यदि ज़मीन वास्तव में चपटी (flat) होती, तो जहाज़ दूर से भी संपूर्ण दिखाई देता और पास से भी। फर्क सिर्फ़ इतना होता कि पहले वह धुँधला नज़र आता और पास आने पर साफ़।

लेकिन जो घटित हुआ, वह कुछ और था—पहले जहाज़ का थोड़ा हिस्सा दिखा और फिर धीरे-धीरे वह पूरा सामने आया। इस निरीक्षण से उस आदमी को यह बोध हुआ कि ज़मीन में वास्तव में घुमाव (curvature) है। अर्थात् ज़मीन कोई सपाट तख़्ता नहीं, बल्कि एक गोलाकार गेंद की तरह है।

और यही कारण है कि जहाज़ ज़मीन के घुमाव के साथ ऊँचाई की ओर बढ़ता गया, जब तक कि वह संपूर्ण रूप में सामने न आ गया।

यह अनुभव हमें यह प्रेरणा देता है कि जीवन में सोचने का स्थान कितना ऊँचा और महत्त्वपूर्ण है। अगर हम विज्ञान के इतिहास की ओर दृष्टि डालें, तो यह सच्चाई बिलकुल उजागर हो जाती है कि हर नई खोज की शुरुआत सोच से ही होती है। कोई भी योजना तब तक नहीं बन सकती जब तक सोच सक्रिय न हो। सोच ही वह शक्ति है जो असफलता को सफलता में बदल देती है। सोच की ताक़त से ही यह संभव होता है कि कोई व्यक्ति अपने अतीत और वर्तमान पर विचार कर सके और फिर भविष्य के लिए एक श्रेष्ठ योजना तैयार कर सके।

ख़ामोशी ही जवाब है

आज़ादी के पहले के हिन्दुस्तान की एक घटना है। एक गाँव में दो ज़मींदार रहा करते थे। उनमें से एक का स्वभाव धार्मिक था और वह दाढ़ी रखता था। दूसरा ज़मींदार बिना दाढ़ी वाला था। एक बार बेदाढ़ी ज़मींदार ने दाढ़ी रखने वाले ज़मींदार के लिए मिठाई का एक उपहार भेजा। लेकिन दाढ़ी वाले ज़मींदार ने उस उपहार को यह कहकर लौटा दिया कि वह दाढ़ी काटने वालों के उपहार स्वीकार नहीं करता।

उपहार भेजने वाला ज़मींदार इसे सहन न कर सका। उसने उपहार की वापसी को अपना अपमान समझा। उसके अन्दर बदले की भावना भड़क उठी। इसके बाद दोनों के बीच लड़ाई शुरू हो गई। एक-दूसरे का खेत काटना, एक-दूसरे के आदमी मार डालना, एक-दूसरे के विरुद्ध मुक़दमे चलाना, एक दूसरे को बदनाम करना। इस तरह की नकारात्मक कार्रवाइयाँ दो दशक से ज़यादा चलती रहीं। लड़ाई का यह सिलसिला तब बन्द हुआ जबकि दोनों के घर के गहने तक बिक गए। दोनों में यह सामर्थ्य ही न रहा कि वे एक-दूसरे के विरुद्ध कोई और कार्रवाई कर सकें।

मानव समाज में अधिकतर झगड़ों की शुरुआत शब्दों से ही होती है। लोग जब विरोध में कुछ सुनते हैं तो तुरंत भड़क उठते हैं। इसके बाद उनकी सोच बदले की दिशा में मुड़ जाती है। और फिर वे तमाम हालात सामने आने लगते हैं, जिन्हें आपसी संघर्ष कहा जाता है। नकारात्मक क्रियाएं हमेशा नकारात्मक सोच का ही परिणाम होती हैं। इसका समाधान यही है कि नकारात्मक परिस्थितियों में भी सकारात्मक सोच को बनाए रखा जाए। और नकारात्मक कार्यवाही का उत्तर भी सकारात्मक व्यवहार से दिया जाए।

इन परिस्थितियों से बचने का आसान तरीका यह है कि जब भी, आप किसी अप्रिय बात को सुनें तो यह सोचें कि क्या यह केवल शाब्दिक

मामला है या वास्तविक अर्थों में आपको कोई हानि पहुँचाने वाला है। अगर इससे किसी वास्तविक हानि का भय हो तो उस मसले का सकारात्मक हल खोजिये। अथवा आसान रूप से केवल यह कीजिए कि उसको अनदेखा कर दीजिए।

टकराव नहीं, प्रगति चुनो

ग़लत सोच का एक उदाहरण वह है जिसे 'यह या यह' वाली सोच (Dichotomous thinking) कहा जा सकता है अर्थात् किसी मामले में केवल दो तरह से सोचना, जबकि वहाँ तीसरी ज़्यादा बेहतर सूरत भी मौजूद हो।

जैसे एक आदमी आपके विरुद्ध अपशब्द कहे। वह आपकी प्रतिष्ठा को घायल करे। ऐसी स्थिति में लोग सामान्य रूप से सहन नहीं कर पाते, और गुस्सा होकर दूसरे पक्ष से लड़ जाते हैं। इसकी वजह यह होती है कि वे यह समझते हैं कि सहन करना कायरता है और उसके मुक़ाबले में लड़ पड़ना बहादुरी। अब चूँकि कायरता के मुकाबले में बहादुरी ज़्यादा बेहतर चीज़ मालूम होती है इसलिए उस रास्ते को छोड़ देते हैं जिसे वे बुज़दिली समझते हैं और उस रास्ते को अपना लेते हैं जिसके बारे में इनका विचार होता है कि यह एक बहादुरी का रास्ता है।

मगर यह सोच एक भ्रम है। वास्तविकता यह है कि उपर्युक्त परिस्थिति में एक तीसरा रास्ता भी संभव होता है, जिसे व्यक्ति अनदेखा कर देता है। इसका आशय यह है कि व्यक्ति, लड़ाई में समय गंवाने के बजाय, अपने आप को सकारात्मक अमल पर टिकाए रखे। यही तीसरा रास्ता उस प्रसिद्ध कहावत में स्पष्ट किया गया है— *कुत्ते भौंकते रहते हैं और हाथी चलता रहता है।*

यह कोई मात्र नैतिक उपदेश नहीं, बल्कि जीवन की एक अत्यंत महत्वपूर्ण सच्चाई है। यह संसार अनेक प्रकार के लोगों से भरा हुआ है। इसी कारण यहाँ बार-बार अप्रिय अनुभव सामने आते रहते हैं। ऐसी स्थिति में यदि कोई व्यक्ति हर असंतोषजनक बात पर उत्तेजित हो जाए या हर बात पर भावना में बहकर प्रतिक्रिया देने लगे, तो वह किसी भी महान कार्य को अंजाम नहीं दे सकता। वह अपनी योग्यता और समय को केवल दूसरों के विरुद्ध प्रतिक्रिया में व्यर्थ करता रहेगा। जबकि सच्ची समझदारी यह है कि अपनी क्षमताओं और सामर्थ्य को पूरी तरह अपने रचनात्मक कार्यों में लगाया जाए।

इस जीवन में समय सीमित है। साथ ही, संसाधन भी बहुत सीमित हैं। ऐसी स्थिति में कोई विवेकशील व्यक्ति यह मूर्खता नहीं करेगा कि वह दूसरों को सबक सिखाने या उनसे बदला लेने के लिए उनके पीछे भागता फिरे। ऐसे रास्ते की कीमत आदमी को यह चुकानी पड़ती है कि उसका अपना निर्माण व प्रगति का कार्य रुक जाता है।

काल्पनिक ख़तरा, हकीकी ख़तरा

इस कड़ी की एक दिलचस्प मिसाल यह है कि अँगरेज़ 19वीं सदी में इराक़ में दाख़िल हो चुके थे। 1917 ई. में उन्होंने बग़दाद पर विजय प्राप्त की। उसके बाद वहाँ एक अँगरेज़ कौंसलर रहने लगा।

जब अँगरेज़ कौंसलर ने बगदाद में अपने कार्य की शुरुआत की, तो एक दिन सुबह के समय उसे ऐसा लगा कि उसके निवास के बाहर बहुत तेज़ आवाजें आ रही हैं। उसने तुरंत अपने स्थानीय सचिव को बुलाया और पूछा — यह शोर जैसी आवाजें कैसी है?

सचिव ने उत्तर दिया कि यह मुसलमानों की सुबह की नमाज़ का समय है, और वे मस्जिदों में उसके लिए अज़ान दे रहे हैं।

कौंसलर ने फिर पूछा — क्या इससे ब्रिटिश साम्राज्य को कोई ख़तरा तो नहीं है?

सचिव ने जवाब दिया — नहीं, इसमें किसी तरह का कोई ख़तरा नहीं है।

यह सुनकर कौंसलर ने कहा — फिर जो वे कर रहे हैं, उन्हें वह करने दो।

किसी मतभेद के विषय में यह बेहतरीन नीति है। अगर कोई व्यक्ति आपके लिए वास्तविक ख़तरा बन रहा हो तो उससे मुकाबला कीजिए और उसको रोकने की कोशिश कीजिए। लेकिन वह बात केवल शब्दों की हद तक हो तो चाहे आपकी भावना कितनी भी आहत होती हो, उसे अनदेखा कीजिए। भावनाओं का आहत होना कोई हानि का मसला नहीं है। वह केवल एक काल्पनिक बात है। और काल्पनिक बात पर व्यावहारिक कदम उठाना सूझ-बूझ वाले व्यक्ति का काम नहीं है।

अनुभव का अभाव या ग़फलत

इस कड़ी का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत यह है कि आदमी अपने मस्तिष्क को इस तरह प्रशिक्षित करे कि वह आस-पास की घटनाओं से शिक्षा ले सके। शिक्षा लेने का स्वभाव एक तरफ़ आदमी के लिए मानसिक विकास का साधन है और दूसरी तरफ़ वह उसे अनावश्यक नुक्सान से बचाता है।

शहर में एक नौजवान ने दुकान खोली। कुछ दिनों के बाद उस दुकान में चोरी हो गई। एक बुज़ुर्ग ने नौजवान से घटना की पूरी जानकारी ली। नौजवान ने बताया कि मुझे अनुभव नहीं था, मैंने दुकान में एक मामूली ताला लगा

दिया। वह बड़ी आसानी से खुल सकता था। कोई आदमी रात को आया और ताला खोल कर आराम के साथ चोरी की और भाग गया।

बुज़ुर्ग ने यह सुनकर कहा कि ऐसे मामलों में हर चीज़ खुद अनुभव करने की ज़रूरत नहीं होती। सैकड़ों लोगों के अनुभव पहले से मौजूद हैं, जो यह बताते हैं कि दुकान में मज़बूत ताला लगाना ज़रूरी होता है। एक मामूली ताला लगाना, दरअसल चोर को खुद न्यौता देना है।

हमारी दुनिया प्रेरणा और उपदेशों से भरी हुई है। हर तरफ़ कोई न कोई ऐसी चीज़ मौजूद है जिससे आदमी अपने लिए अच्छी शिक्षा ले सकता है और बेहतर तरीके से अपने जीवन का निर्माण कर सकता है। ज़रूरत केवल यह है कि चीज़ों को खुली आँख से देखा जाए और खुले मन के साथ इन पर विचार किया जाए।

गिरकर संभलना

न गिरना कोई बड़ी बात नहीं है। असली कमाल तो यह है कि आप गिरें और उठकर फिर से खड़े हो जाएं। जिसने कभी गिर कर संभलना नहीं सीखा, उसने कोई बड़ा कारनामा किया ही नहीं। असली कारनामा तो उसका है जो गिरने के बाद भी हार न माने और उठकर फिर से चल पड़े।

जो व्यक्ति कभी नहीं गिरा, वह सच में चल ही नहीं रहा था। क्योंकि इस दुनिया में चलने वाला हर इंसान कभी न कभी गिरता है। ऐसे में गिरना सामान्य बात है, न कि कोई कमजोरी। इंसान की असली महानता इसी में है कि वह चलता रहे। इंसान बैठने के लिए नहीं, चलने के लिए बना है। और जब वह चलता है, तो गिरना भी उसके रास्ते की एक हकीकत है।

न गिरना ठहराव का संकेत है, जबकि गिरना गति और मेहनत का। इसलिए इंसान को अपनी गिरावट पर शर्मिंदा नहीं होना चाहिए, बल्कि इसे

अपनी उच्चता और मानवता का सबूत समझना चाहिए कि वह गिरने के बाद भी उठने का जज़्बा रखता है। जब आप ऐसा सोचेंगे, तो गिरने के बाद तुरंत उठकर फिर से आगे बढ़ेंगे।

न गिरना कोई बड़ी बात नहीं—दरअसल इसका मतलब यह है कि आपने चलने की कोशिश ही नहीं की। असली कमाल तो यह है कि आप गिरने के बाद फिर से उठ खड़े हों, यानी निरंतर चलते रहें। क्योंकि वही नहीं गिरता जो रुका हुआ है। इस दुनिया में जो लोग आगे बढ़ते हैं, वे ठोकर खाते हैं, गिरते हैं—लेकिन हर बार उठते हैं और फिर चल पड़ते हैं। यही चलने वालों की पहचान है।"

आदमी जब गिरता है और फिर दोबारा उठकर चलने लगता है, तो वह इस बात का सुबूत देता है कि गिरना उसके लिए नए हौसले का साधन बन गया। गिरकर उसने दोबारा अपने लिए एक नई ताकत हासिल कर ली।

बैठ रहने की बजाय चलिए, और अगर चलते-चलते गिर भी जाएँ तो उठकर फिर से चलना शुरू कर दीजिये। यही इस दुनिया में कामयाबी का असली राज़ है। आप अपने लिए कोई नई दुनिया नहीं बना सकते, इसलिए गिरने से खुद को बचाना भी संभव नहीं है। क्योंकि इस दुनिया को जिसने बनाया है, उसने इसे इसी तरह बनाया है — गिरना और उठना, ये जीवन के अहम हिस्से हैं।

तुलनात्मक सोच की गलती

बहुत से मुसलामन हिन्दुस्तान से प्रवास करके अब अमेरिका में बस गए हैं। अमेरिका की एक यात्रा के दौरान मेरी भेंट ऐसे ही कुछ मुसलमानों से हुई। जब मैंने उनसे पूछा कि आपने अपने देश को छोड़कर यहाँ आने का निर्णय क्यों लिया, तो हर किसी का उत्तर था— "अमेरिका में हमारे लिए शान्ति

(Peace) है, जबकि हिन्दुस्तान में हमारे लिए शान्ति नहीं।" मैंने उन्हें बताया कि यह एक अधूरी सच्चाई है। शान्ति का संबंध किसी देश विशेष से नहीं है; शान्ति की एक क़ीमत होती है। आप जहाँ भी उस क़ीमत को अदा करें, वहाँ आपको शान्ति मिल जाएगी। यह क़ीमत है— समायोजन (Adjustment)।

मैंने आगे कहा कि अमेरिका में भी मुसलमानों को वही समस्याएँ दरपेश हैं जो हिन्दुस्तान में हैं। फर्क बस यह है कि हिन्दुस्तान में मुसलमान इन समस्याओं को लेकर सहज ही उत्तेजित हो जाते हैं, जबकि अमेरिका में वही समस्याएँ आने पर वे खामोशी अख्तियार कर लेते हैं। यही कारण है कि अमेरिका में उन्हें शान्ति अनुभव होती है, और हिन्दुस्तान में नहीं।

मैंने स्पष्ट किया कि हिन्दुस्तान में मुसलमानों के सामने पर्सनल लॉ में हस्तक्षेप का मुद्दा है, नौकरियों में भेदभाव की शिकायत है, पाठ्यपुस्तकों में ग़ैर-इस्लामी विषयवस्तु का सवाल है— और ये सभी मुद्दे अमेरिका में भी मौजूद हैं। मगर फर्क यह है कि हिन्दुस्तान में मुसलमान इन बातों को लेकर विरोध की राजनीति करते हैं, जबकि अमेरिका में इन्हीं चीज़ों को नजरअंदाज़ कर देते हैं। इसी कार्यशैली के अंतर ने अशान्ति का माहौल बनाया है — इसका कारण देशों के बीच का अंतर नहीं, बल्कि सोचने और प्रतिक्रिया देने की शैली का अंतर है।

इस उदाहरण से यह समझ में आता है कि किस प्रकार अधिकांश लोग ग़लत तुलना का शिकार हो जाते हैं। वास्तव में अधिकांश वैचारिक ग़लतियाँ, ग़लत तुलना के परिणामस्वरूप ही जन्म लेती हैं। सही तुलना, सही सोच को जन्म देती है; और ग़लत तुलना, ग़लत सोच को। इस संसार में सत्य और संतुलित विचार वही लोग स्थापित कर सकते हैं जो इस वैचारिक नीति को समझते हैं। जो लोग इस नीति से अनभिज्ञ रहते हैं, वे सत्य राय तक कभी नहीं पहुँच पाते।

नज़र-अंदाज़ करना

दिनांक 28 सितम्बर, 1999 ई. को एक पत्र मिला। उस पत्र में लिखा हुआ था: मैंने हिन्दी समाचार पत्र 'हिन्दुस्तान' का 28 सितम्बर, 1999 का अंक पढ़ा। उसके संपादकीय में यह उल्लेख था कि हाल ही में सूरत (गुजरात) में 'गणेश विसर्जन' का जुलूस निकला। इस अवसर पर पुलिस और जुलूस के बीच टकराव हो गया। पथराव और फायरिंग के परिणामस्वरूप जुलूस के आठ लोगों की मृत्यु हो गई और कई दर्जन घायल हो गए। यह जुलूस शहर के मुस्लिम मोहल्ले की एक मस्जिद के पास से गुज़र रहा था।

ऐसी स्थिति में होना तो यह चाहिए था कि टकराव मुस्लिम और हिन्दू या मुस्लिम और पुलिस के बीच होता, लेकिन इसके विपरीत एक उल्लेखनीय दृश्य सामने आया। मुसलमानों ने वहाँ पर पूर्ण संयम और धैर्य का प्रदर्शन किया, इसके परिणाम स्वरुप वहां के मुसलमानों को कोई नुक़सान नहीं पहुँचा, क्योंकि संघर्ष प्रशासन और जुलूस में शामिल हिन्दुओं के बीच हुआ।

यह पढ़ते ही आपकी वह बात याद आगई, जिसे आप 'अल-रिसाला' या अपनी अन्य कई पुस्तकों में बार-बार लिख चुके हैं।

— सुहेल अहमद, हसनुल बन्ना मंज़िल, जामिअतुल फलाह, बिलरियागंज, आज़मगढ़

सूरत की यह घटना सारे समाचार पत्रों में आ चुकी है। इस घटना में बहुत बड़ी शिक्षा है। इस शिक्षा की तरफ़ 'अल - रिसाला' में बार-बार ध्यान दिलाया जा रहा है। वह यह कि मुस्लिम विरोधी दंगों का असल कारण जुलूस का निकलना और उसका मुस्लिम महल्ले से गुज़रना नहीं है, बल्कि उसका असल कारण यह है कि जब जुलूस निकले तो महल्ले वाले उसके मुकाबले में नासमझी का रवैया अपनाएँ। समझदार रवैया हमेशा सुरक्षा का पक्षधर होता है और नासमझी का रवैया हमेशा हानि का कारण बनता है।

इस मामले का सार यह है कि जुलूस के समय वहाँ के मुसलमान अगर नकारात्मक प्रतिक्रिया का तरीका अपनाएँ तो मसला मुस्लिम और पुलिस के बीच बन जाएगा। और अगर वहाँ के मुसलमान ऐसे अवसर पर उपेक्षा का रवैया अपनाएँ तो सारा मसला जुलूस और पुलिस के बीच बन जाएगा। इस उसूल की सच्चाई बार-बार दंगों की सूरत में सामने आ चुकी है। सूरत की उपर्युक्त घटना इस नीति का एक सकारात्मक उदाहरण है।

इस्लाम के प्रारम्भिक दौर के मुसलमान विरोधियों की साज़िशों और अत्याचारों में घिरे हुए थे। उस समय नसीहत करते हुए उनसे कहा गया कि : अगर तुम सब्र करो और अल्लाह से डरो तो उनकी कोई चाल तुम्हें कोई नुक़सान न पहुंचा सकेगी। (सूरह आले इमरान, 3 : 120)। अब यह विचार कीजिए कि दुश्मन की साज़िशों के मुकाबले में धैर्य किस तरह ढाल बन जाता है और कुचक्र के शिकार समूह को उसके नुक्सान से सुरक्षित रखता है।

सत्य यह है कि जीवन में जब भी कोई अप्रिय स्थिति उत्पन्न होती है, तो उसके सामने दो प्रकार की प्रतिक्रियाएँ संभव होती हैं। पहली यह कि व्यक्ति उत्तेजित वातावरण को देखकर स्वयं भी भड़क उठे और तत्काल भावनात्मक आवेष में आकर जवाबी कार्रवाई शुरू कर दे।

दूसरी प्रतिक्रिया यह हो सकती है कि भले ही दूसरा पक्ष उत्तेजना में हो, फिर भी व्यक्ति स्वयं को शांत बनाए रखे, अपनी भावनाओं को संयमित करे, और पूरे मामले पर गहराई से विचार करे। और इसके पश्चात जो भी कदम उठाए, वह ठंडे दिमाग़ से सोच-विचार कर, विवेक के साथ उठाए।

उपर्युक्त तरह के मामलों में पहले प्रकार की प्रतिक्रिया का नाम अधैर्यपूर्ण प्रतिक्रिया है और दूसरे प्रकार की प्रतिक्रिया का नाम धैर्यपूर्ण क्रिया। दूसरे शब्दों में इस मतभेद को इस तरह बयान किया जा सकता है कि अधैर्यपूर्ण प्रतिक्रिया मौजूदा स्थिति का भावुक या जज़्बाती जवाब

(emotional response) है। इसके विपरीत धैर्यपूर्ण प्रतिक्रिया यह है कि पेश आने वाली परिस्थिति के मुक़ाबले में जो जवाबी कार्रवाई की जाए, वह एक सोचा-समझा जवाब (considered response) हो।

धैर्य कोई निष्क्रियता नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं कि आदमी के सामने कोई अप्रिय स्थिति उत्पन्न तो वह हिम्मत हारकर बैठ जाए। वास्तविकता यह है कि धैर्य सर्वोत्तम बहादुरी है। जब एक आदमी अधैर्य के साथ भावुक कार्य करता है तो उसका अर्थ यह होता है कि वह अपनी भावना से पराजित हो गया। इसके विपरीत जब एक आदमी धैर्य का रास्ता अपनाता है तो यह इस बात का सुबूत होता है कि उसने अपनी भड़की हुई भावना को काबू में रखा। उसने अपनी भावना को अपनी अक्ल पर हावी होने नहीं दिया।

समझदार कौन?

एक ब्रिटीश लेखक विलियम राल्फ़ इंग (William Ralph Inge–1860-1954) का कथन है कि समझदार व्यक्ति वह है जो चीज़ों के सापेक्षिक महत्त्व (relative importance) को जाने :

The wise man is he who knows
the relative value of things.

ब्रिटीश लेखक के इस कथन के अर्थ को एक मिसाल से समझिए। एक छात्रा को परीक्षा देनी है। वह समय के अनुसार अपने घर से स्कूल के लिए निकलती है। रास्ते में एक दुष्ट युवक उससे उलझ जाता है और उसको गाली देता है, जिसके नतीजे में छात्रा को गुस्सा आ जाता है।

अब छात्रा अगर गुस्सा हो जाए और उस लड़के से को सबक़ सिखाने के लिए उससे उलझ जाए तो यह सम्भव है कि झगड़े में इतनी अधिक देर

हो जाए कि समय पर परीक्षा-कक्ष तक न पहुँचे और नतीजे में उसका एक वर्ष बर्बाद हो जाए।

इसी तरह एक आदमी को ज़रूरी सफ़र करना है। वह घर से रवाना होता है ताकि रेलवे स्टेशन पहुँचे और ट्रेन पर सवार होकर समय पर अपनी मंज़िल तक पहुँच जाए। लेकिन जब वह घर से निकला तो रास्ते में एक आदमी से उसका झगड़ा हो गया। अब अगर वह देर तक उस आदमी से झगड़ता रहे, तो सम्भव है कि उसको इतनी अधिक देर हो जाए कि जब वह रेलवे स्टेशन पहुँचे तो उसको मालूम हो कि उसकी ट्रेन चली गई।

उपरोक्त घटनाओं पर ध्यान दीजिए। इन दोनों व्यक्तियों का एक सामान्य मसला वह था, जो घटनास्थल पर प्रत्यक्ष रूप से मौजूद था — अर्थात् किसी व्यक्ति द्वारा उन्हें गाली देना या उन पर अत्याचार करना। यह उस घटना का वह पहलू था जो उसी क्षण सबके सामने स्पष्ट दिखाई दे रहा था।

लेकिन इसी के साथ, वहाँ एक छुपा हुआ पहलू भी था, जो प्रत्यक्ष रूप से घटनास्थल पर मौजूद नहीं था, मगर एक समझदार व्यक्ति चिंतन-मनन द्वारा उसे समझ सकता था। वह यह था कि यदि इन गवारों से टकराव किया जाए या उन्हें सज़ा देने की कोशिश की जाए, तो इसका परिणाम यह होगा कि एक और अत्यंत महत्त्वपूर्ण उद्देश्य नष्ट हो जाएगा — जैसे समय पर परीक्षा-कक्ष या रेलवे स्टेशन न पहुँच पाना। और इस प्रकार, केवल एक तात्कालिक भावनात्मक सन्तोष के लिए व्यक्ति स्वयं को एक बड़े लाभ से वंचित कर देगा।

उपरोक्त कथन में इसी छिपे हुए या प्रत्यक्ष रूप से न दिखने वाले पहलू को मामले का सापेक्षिक पहलू (relative side) कहा गया है। मामले का जो प्राथमिक पक्ष है — अर्थात् अत्याचार करने वाले का अत्याचार — वह तो हर व्यक्ति अपनी आँखों से देख सकता है। मगर जो व्यक्ति दूरदर्शिता और

विवेक रखता है, वही मामले के दूसरे पक्ष को — अर्थात् उसके सापेक्षिक मूल्य (relative value) को — समझ पाएगा, और अपने निर्णय को तात्कालिक भावना नहीं बल्कि बौद्धिक विचार-विमर्श के आधार पर लेगा।

मौजूदा दुनिया की व्यवस्था इस तरह बनी है कि यहाँ प्रायः मामलों में ये दोनों पहलू मौजूद होते हैं। नासमझ आदमी केवल सामने की परिस्थिति को देख पाता है और उसके अनुसार कार्रवाई करके अपने मामले को बिगाड़ लेता है। समझदार आदमी वह है जो मामले के अन्य पहलुओं को देख सके। जो सामने की परिस्थिति से ऊपर उठकर इन वास्तविकताओं का पता कर ले, जो यद्यपि घटनास्थल पर मौजूद नहीं, मगर अन्ततः प्रस्तुत होकर वही निर्णायक बन जाएँगी।

वर्तमान संसार में असली परीक्षा इसी समझदारी की है। जो व्यक्ति इस दृष्टिकोण से अपने को समझदार साबित करता है, वही इस संसार में सफलता प्राप्त करेगा। और जो व्यक्ति इस समझदारी का प्रमाण न दे सके, उसके लिए यहाँ परिणाम के रूप में नाकामी के सिवाय कुछ और लिखा ही नहीं।

गलत सोच का मसला

प्रस्तुत लेखक के संपादन में प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'अल-रिसाला' के एक पाठक लिखते हैं: "अपने एक लेख में आपने लिखा है कि आदमी के लिए जब कामयाबी का एक अवसर ख़त्म हो जाए तो उसको मायूस नहीं होना चाहिए। क्योंकि उसके बाद दूसरा अवसर वहीं उसके लिए मौजूद रहता है जिससे वह अपनी प्रगति का सफ़र दोबारा शुरू कर सके। सवाल यह है कि आदमी किस तरह जाने कि यहाँ उसके लिए दूसरा अवसर मौजूद है। (सुहेल अहमद, नई दिल्ली)

दुसरे अवसर को पहचानने की केवल एक शर्त है— वो यह कि व्यक्ति संकुचित मस्तिष्क से नहीं, बल्कि खुले मस्तिष्क के साथ सोचने को तैयार हो। वह दूसरों को दोषी ठहराने की अपनी आदत से ऊपर उठ सके। इसकी एक स्पष्ट मिसाल भारत के मुसलमान हैं।

1947 ई. से पूर्व हमारे नेता और समाचार पत्र मुसलमानों को यह बताते थे कि हिन्दुस्तान में उनका सामना हिन्दू बहुसंख्यक से है, और यहाँ वे कभी प्रगति नहीं कर सकते। विभाजन के पश्चात् 1947 के बाद भी यही मानसिकता बनी रही। तमाम वक्ता और लेखक मुसलमानों को निरंतर यही नकारात्मक शिक्षा देते रहे। कुछ तो इस सीमा तक पहुँच गए कि यह कहने लगे— इस देश का बहुसंख्यक वर्ग हिन्दुस्तानी मुसलमानों के लिए हिन्दुस्तान को दूसरा स्पेन बना देना चाहता है।

इस प्रकार के शोर-शराबे ने मुसलमानों की मानसिकता को इस हद तक प्रभावित किया कि वे यह मानने लगे कि हिन्दुस्तान में उनके लिए सफलता और प्रगति के अवसर सिरे से मौजूद ही नहीं हैं। मैं स्वयं 1947 ई. से इस सोच का प्रतिवाद करता आ रहा हूँ— लेखनी और वक्तृत्व दोनों के माध्यम से।

आख़िरकार स्वतंत्रता के लगभग चालीस वर्षों के पश्चात मुसलमानों की सोच में परिवर्तन आने लगा। अब वे यह समझने लगे हैं कि हिन्दुस्तान में उनके लिए हर क्षेत्र में अवसर उपलब्ध हैं। और परिणामस्वरूप, आज यहाँ के मुसलमान प्रत्येक क्षेत्र में निरंतर प्रगति की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

सही बात यह है कि इस दुनिया की व्यवस्था प्रकृति के क़ानूनों के अनुसार चलती है, न कि किसी पक्षपात करने वाले समुदाय की योजना या उसकी साज़िशों के अनुसार। कोई समुदाय या गिरोह यदि ऐसा चाहे भी तो प्रकृति इसके रास्ते में रुकावट बन जाएगी और वह इतिहास के पहिये को उल्टी तरफ़ घुमाने में कामयाब न होगा।

जैसा कि बताया गया, इस दुनिया की व्यवस्था प्रकृति के अटल कानून अनुसार चल रही है न कि किसी समूह की साज़िश के अनुसार। प्रकृति के इस क़ानून का एक उत्साहवर्द्धक पहलू यह है कि वह अधिकांश हालात में कमज़ोर पक्ष का साथ देता है। वह तथाकथित बड़े समूह के मुकाबले में छोटे समूह की हिमायत करता है। यह कानून कुरआन में इन शब्दों में बताया गया है: कितने ही छोटे समूहों को अल्लाह के हुक्म से बड़े समूहों पर श्रेष्ठता प्राप्त हुई है। (सूरह अल-बक़रह, 2:249)।

एक कमज़ोर समूह अपने मुक़ाबले में शक्तिशाली समूह से क्योंकर आगे बढ़ जाता है और प्रकृति का क़ानून किस तरह उसका मददगार बनता है? इसका जवाब यह है कि प्रकृति के सिर्जन्हार ने हर व्यक्ति के अन्दर जन्मजात अथाह सम्भावनाएँ रख दी हैं। हर आदमी पैदाइशी रूप से असाधारण योग्यताओं का मालिक है। मगर आरम्भ में ये योग्यताएँ सोई हुई हालत में होती हैं। ये तमाम उच्च सम्भावनाएँ उसके अन्दर भरपूर मौजूद होती हैं। यह आदमी का अपना मामला है कि वह इस संभावना (potential) को वास्तविकता (actual) में बदल दे।

दोबारा यहाँ प्रकृति का अटल नियम सामने आता है — कि यह परिवर्तन सदैव दबाव के माध्यम से होता है। अर्थात् किसी व्यक्ति या समूह पर जितना अधिक परिस्थितियों का दबाव पड़ता है, उतनी ही तीव्रता से उसकी भीतर छिपी हुई योग्यताएँ उभर कर सामने आती हैं। यह वही प्राकृतिक प्रक्रिया है, जो उदाहरणस्वरूप गन्ने के साथ होती है।

जैसा कि विदित है, हर गन्ना भीतर से मीठे रस से भरा होता है, लेकिन सामान्य परिस्थितियों में यह रस अपने-आप बाहर नहीं आता। गन्ने का रस तभी बाहर आता है जब उस पर असाधारण दबाव डाला जाए। यदि आप गन्ने को केवल कोमल रूई में लपेट दें, तो उसका रस कभी बाहर नहीं

निकलेगा। लेकिन जब आप उसे क्रेशर (crusher) में डालते हैं, तभी वह मीठा रस गन्ने के अंदर से निकल कर बाहर आता है।

यही प्रक्रिया मनुष्य के साथ भी होती है। मनुष्य भी तभी वास्तविक प्रगति करता है जब वह दबावपूर्ण परिस्थितियों से होकर गुजरता है। यही सिद्धांत न केवल किसी एक व्यक्ति पर लागू होता है, बल्कि संगठनों पर भी उतना ही सत्य है।

इसी तथ्य को प्रसिद्ध ब्रिटिश इतिहासकार अर्नल्ड जे. ट्वाइनबी ने अपनी महान कृति '*A Study of History*' (इतिहास का अध्ययन) में अत्यंत स्पष्टता के साथ प्रस्तुत किया है। इस बारह खंडों की विस्तृत कृति में उन्होंने यह बताया है कि इतिहास की जितनी भी महान सभ्यताएँ उभरी हैं, उन्हें आकार देने वाले लोग प्रायः अल्पसंख्यक होते थे। वास्तव में यही अल्पसंख्यक समूह हैं जो इतिहास की निर्णायक घटनाओं के पीछे सक्रिय भूमिका निभाते रहे हैं।

ट्वाइन-बी के अनुसार, उसका उसूल यह है कि बहुसंख्यक समूह की तरफ़ से अल्पसंख्यक समूह को चैलेंज पेश आता है। यह चैलेंज अल्पसंख्यक समूह को मजबूर करता है कि वह बहुसंख्यक समूह के मुकाबले में ज़्यादा काम करे। वह अपने वजूद को बाक़ी रखने के लिए अपनी योग्यताओं को दूसरों से ज़्यादा इस्तेमाल करे। हालात का यह दबाव अल्पसंख्यक समूह को उभारता है, यहाँ तक कि वह हीरो वाले रोल अदा करने के क़ाबिल हो जाता है।

ट्वाइन - बी ने प्रकृति के इस उसूल को इतिहास की इक्कीस सभ्यताओं की व्यावहारिक मिसाल से साबित किया है।

फ़ितरत का यही अटल नियम भारत के मुसलमानों पर भी पूर्ण रूप से चरितार्थ होता है। 1947 ई. से पहले भारत में अंग्रेज़ों का शासन था। वे अपनी राजनीतिक आवश्यकताओं के अनुसार देश के छोटे-बड़े

समूहों के बीच एक संतुलन बनाए हुए थे। परंतु जब 15 अगस्त, 1947 ई. को भारत स्वतंत्र हुआ और यहाँ लोकतांत्रिक युग का आरंभ हुआ, तो अंग्रेज़ों द्वारा स्थापित वह संतुलन टूट गया। अब मुसलमानों की स्थिति एक अल्पसंख्यक समूह की हो गई और हिन्दू समुदाय बहुसंख्यक के रूप में उभर आया। परिणामस्वरूप हिन्दुस्तानी मुसलमानों के लिए अनेक ऐसी समस्याएँ उत्पन्न हुईं, जो अंग्रेज़ी शासन के काल में अस्तित्व में नहीं थीं।

यह परिस्थिति मुसलमानों के लिए प्रत्यक्ष रूप से एक कठिन समस्या के रूप में उपस्थित हुई। किंतु प्रकृति के नियम के अनुसार, यह एक चुनौती थी— ऐसी चुनौती, जो अंततः उनकी सुप्त शक्तियों को जाग्रत करने के समकक्ष थी। यह जागृति की प्रक्रिया 1947 ई. के बाद आरंभ हो चुकी थी। प्रारंभिक चरण में यह प्रक्रिया अधिकतर बिना ठोस सोच के अमल के रूप में सामने आई। फिर धीरे-धीरे दूसरा चरण आरंभ हुआ, जिसमें यह जागृति बौद्धिक धरातल पर प्रवाहित होने लगी। आज यह प्रक्रिया इतनी प्रगाढ़ हो चुकी है कि इसके स्पष्ट चिन्ह हर स्थान पर देखे जा सकते हैं।

कुछ समय पूर्व दिल्ली में मुसलमानों का एक सम्मेलन आयोजित हुआ, जिसका विषय था — *"मुसलमानों का आर्थिक पिछड़ापन क्यों?"* विभिन्न वक्ताओं ने इस मंच पर अपने विचार प्रस्तुत किए। अपने संबोधन में मैंने कहा कि यह धारणा मूल रूप से त्रुटिपूर्ण है कि भारत के मुसलमान पिछड़ गए हैं। मैंने स्पष्ट किया कि यथार्थ इसके विपरीत है — स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इस देश के लगभग प्रत्येक मुसलमान ने प्रगति की दिशा में कदम बढ़ाया है।

मैंने यह भी कहा कि औद्योगिक क्रांति के पश्चात न केवल वैश्विक स्तर पर, बल्कि स्वयं भारत में भी आर्थिक प्रगति की एक लहर (economic explosion) आई। ऐसी स्थिति में यह कहना कि मुसलमान औद्योगिक

रूप से पिछड़े हुए हैं — वस्तुतः अनुचित और तथ्यों के प्रतिकूल है। सच तो यह है कि इस प्रकार की टिप्पणी प्रत्यक्ष रूप से असत्य और अमान्य है।

फिर मैंने अपने भाषण में लोगों को सीधे सम्बोधित करते हुए कहा कि मुझे यक़ीन है कि जो मुसलमान इस हॉल के अन्दर मौजूद हैं, इनमें से हर मुसलमान की आर्थिक हालत 1947 ई. के मुकाबले में आज ज्यादा बेहतर है। और अगर आप में से किसी का मामला इससे भिन्न हो तो वह खड़ा होकर मेरे इस बयान का खण्डन करे। लोगों में से किसी एक मुसलमान ने भी यह नहीं कहा कि 1947 ई. में मेरी जो आर्थिक हालत थी इसके मुक़ाबले में आज मेरी हालत ख़राब हो चुकी है।

मैंने इस मामले का नियमित रूप से सर्वे किया है। इसके अनुसार, हिन्दुस्तान का लगभग हर मुस्लिम संस्थान, हर मुस्लिम संस्था, हर मस्जिद और हर मदरसा 1947 के मुक़ाबले में आज दुगुना और चारगुना प्रगति कर चुका है। लगभग हर मुसलमान ख़ानदान 1947 ई. के मुक़ाबले में आज ज़्यादा बेहतर जीवन गुज़ार रहा है। शिक्षा और औद्योगिक क्षेत्र में हिन्दुस्तानी मुसलमान 1947 ई. के मुक़ाबले में आज बहुत ज्यादा प्रगति कर चुके हैं।

यह तरक्क़ी अब इतनी सामान्य हो चुकी है कि किसी भी मुस्लिम परिवार का अवलोकन करके इसकी पुष्टि की जा सकती है। इस संदर्भ में एक अत्यंत प्रेरक और आँखें खोल देने वाली मिसाल जुलाई 1999 ई. में सामने आई। न्यूयॉर्क से प्रकाशित विश्वविख्यात औद्योगिक पत्रिका *फोर्ब्स* (Forbes) ने उस समय पूरी दुनिया के अरबपतियों का एक सर्वेक्षण किया। इस प्रक्रिया में भारत के अरबपतियों को भी शामिल किया गया।

फोर्ब्स के इस सर्वेक्षण के परिणाम इसके 5 जुलाई, 1999 के अंक में प्रकाशित हुए, जिसके पश्चात यह रिपोर्ट भारत के कई प्रमुख समाचार पत्रों में भी प्रकाशित हुई — जैसे *टाइम्स ऑफ़ इंडिया*, *हिन्दुस्तान टाइम्स* आदि।

इस सर्वे के अनुसार उस समय भारत का सबसे अमीर व्यक्ति एक मुस्लिम उद्योगपति था — बेंगलुरु के अज़ीम हाशिम प्रेमजी। इसके अतिरिक्त, भारत के शीर्ष दस अरबपतियों में तीन मुसलमान शामिल थे। यह एक ऐतिहासिक और महत्त्वपूर्ण संकेतक था।

इंटेलिजेंट इन्वेस्टर (Intelligent Investor) के 14 जुलाई, 1999 के अंक में यह रिपोर्ट 'At the Top' शीर्षक से प्रकाशित हुई। *टाइम्स ऑफ़ इंडिया*, नई दिल्ली के 27 जून, 1999 के अंक में यह रिपोर्ट 'Very Rich' शीर्षक से छपी। अन्य समाचार पत्रों ने इसे 'Richest Indian' जैसे शीर्षकों के अंतर्गत प्रकाशित किया।

अध्याय दो

प्रकृति सबसे बड़ी शिक्षक

इंसान की सबसे बड़ी शिक्षक प्रकृति है। प्रकृति जीवन का शांत पुस्तकालय है। अगर इंसान प्रकृति से सीखने की कला जान ले, तो वही उसके जीवन निर्माण के लिए काफ़ी हो जाएगा।

प्रतिस्पर्धा का नियम

समंदर में तरह-तरह की मछलियाँ होती हैं — छोटी भी और बड़ी भी। ये मछलियाँ लगातार पानी के अंदर तैरती रहती हैं। छोटी मछली को हमेशा यह डर लगा रहता है कि कहीं बड़ी मछली उसे खा न जाए। अगर छोटी मछली समंदर से यह सवाल करे कि ये बड़ी मछलियाँ कब तक छोटी मछलियों को खाती रहेंगी, तो समंदर का जवाब यही होगा कि जब तक छोटी मछली खुद को इतना बड़ा न बना ले कि वह बड़ी मछली के मुँह में न समा सके।

ज़िंदगी इसी दौड़ का नाम है। इस दुनिया का पूरा सिस्टम इसी दौड़ या मुकाबले के नियम पर टिका है। इस समस्या का हल यह नहीं है कि हम इसके खिलाफ़ शिकायतें करें या विरोध प्रदर्शन करें। इस तरह का विरोध किसी काल्पनिक ज़ालिम के खिलाफ़ नहीं होता, बल्कि सीधा-सीधा प्रकृति की व्यवस्था के खिलाफ़ होता है — और यह बात साफ़ है कि प्रकृति के खिलाफ़ कोई भी शिकायत या विरोध कभी कामयाब नहीं हो सकता।

यह भी समझने की बात है कि दौड़ या प्रतियोगिता की यह व्यवस्था कोई ज़ुल्म या अत्याचार नहीं है। यह हर एक के लिए जीवन और कामयाबी का रास्ता है, अगर यह दौड़ की व्यवस्था न रहे तो हर एक ठहराव का शिकार हो जाए। इस दौड़ के अभाव में जीवन की सारी की सारी गतिविधियाँ ठप्प होकर रह जाएँगी।

हर इंसान की दो तरह से पहचान होती है — एक संभावना के स्तर पर और दूसरी हकीकत के स्तर पर। जब कोई इंसान माँ के पेट से जन्म लेता है, तो वह वास्तविक रूप से एक बच्चा होता है, लेकिन संभावना के नज़रिए से वह एक पूरा इंसान होता है। इसी तरह, हर जन्म लेने वाला व्यक्ति दिखने में तो एक अज्ञानी इंसान होता है, लेकिन संभावना के लिहाज़ से उसके दिमाग़ में क्षमताओं का खज़ाना छिपा होता है।

यही बात ज़िंदगी के दूसरे पहलुओं पर भी लागू होती है। हर इंसान के अंदर असाधारण संभावनाओं का भंडार छिपा होता है। लेकिन ये संभावनाएँ तभी हकीकत बनती हैं जब इंसान साहस के साथ जीवन की दौड़ में शामिल हो जाए।

फलदायक बनो

हरी पत्तियां पेड़ की डालियों के लिए एक समय तक शोभा बनी रहती हैं। मगर जैसे ही इनकी हरियाली समाप्त होती है, पेड़ उनको स्वीकार करने से इन्कार कर देता है। यहाँ तक कि वे पेड़ से टूट कर ज़मीन पर गिर पड़ती हैं। केवल इसलिए कि वे मिट्टी में मिलकर अपने अस्तित्व को समाप्त कर लें।

क्यों होता है ऐसा? इसका कारण है — प्रकृति का नियम। जब तक पत्ती हरी रहती है, वह सूरज से ताकत लेकर पेड़ तक पहुँचाती रहती है। लेकिन जैसे ही उसकी हरियाली खत्म होती है, उसकी यह ताकत भी खत्म हो जाती है। इसके बाद वह पेड़ के लिए एक बेकार चीज़ बन जाती है। यहाँ तक कि पेड़ उसे खुद से अलग कर देता है और वह ज़मीन पर गिर जाती है।

यही इस दुनिया का नियम है। आज की दुनिया में सिर्फ़ लाभ पाना एक असंभव कोशिश है। यहाँ की हर चीज़ देने के उसूल पर टिकी है, न कि सिर्फ़ लेने के उसूल पर। सूरज हमेशा बिना किसी स्वार्थ के हमारी दुनिया को रोशनी और गर्मी देता है, लेकिन वह हमारी दुनिया से कुछ भी अपने लिए नहीं लेता। हवा लगातार चलती रहती है ताकि ज़मीन पर रहने वाले लोगों तक ऑक्सीजन पहुँचती रहे। लेकिन हवा इसके बदले में दुनिया से कोई कीमत नहीं माँगती। नदियाँ पहाड़ों से उतरकर ज़मीन पर फैल जाती हैं ताकि लोगों को ज़रूरी पानी मिल सके। लेकिन ये नदियाँ भी इसके लिए लोगों से कुछ नहीं लेतीं।

यही सृष्टि का नियम है। इंसान को भी अपने जीवन में इसी को अपनाना चाहिए। इंसान को भी सिर्फ़ फायदा पाने के बजाय दूसरों के लिए फायदेमंद बनने के उसूल पर अपना जीवन बिताना चाहिए। जो लोग ऐसा करेंगे, वे सृष्टि के अज़ीम काफ़िले में शामिल हो जाएँगे। और जो ऐसा नहीं कर पाएँगे, वे सिर्फ़ फायदा लेने वाले इस नियम पर चलने वाली दुनिया से मिटा दिए जाएँगे।

सीखने का दौर

मनुष्य सम्भावना के लिहाज़ से सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। लेकिन यह श्रेष्ठता केवल उसी को मिलती है जिसने अपनी मेहनत से इन संभावनाओं को हकीकत में बदल दिया हो। इंसान की कहानी बिल्कुल उसी तरह है जैसे इस दुनिया की अन्य चीज़ों की होती है। उदाहरण के तौर पर, लोहा एक धातु है जिसे ज़मीन से निकाला जाता है। वह अपनी पहली अवस्था में एक कच्ची धातु (ore) होता है। ज़मीन से निकलने के बाद उसे कई प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है—यहां तक कि उसे बहुत तेज़ आँच में पिघलाया जाता है। फिर लोहा विकसित होकर उस रूप में आ जाता है जिसे स्टील (फ़ौलाद) कहा जाता है।

इंसान की शुरुआत भी एक ‘कच्ची धातु’ की तरह होती है। उसके भीतर एक उच्च स्तर का मानव बनने की सभी संभावनाएँ छिपी होती हैं। यह तब तक परिपक्व और विकसित नहीं होता जब तक वह उन सभी प्रक्रियाओं से नहीं गुजरता जो प्रकृति के नियमों के अनुसार ज़रूरी हैं। इन में सबसे अहम मरहला धैर्य और सहनशीलता हैं।

इसका मतलब यह है कि आदमी के सामने जब कठिनाइयां आएँ तो उनसे भागने के बजाए वह साहसपूर्वक उनका सामना करे। लोगों की तरफ़

से उसको कड़वे अनुभव पेश आएँ, मगर वह गुस्सा और नफ़रत का शिकार न हो, बल्कि सकारात्मक भावना के साथ उनको सहन करे। जीवन के सफ़र में उसको नुक्सान और नाकामी का सामना करना पड़े, इसके बावजूद वह साहस न हारे, हर बार वह नए इरादे के साथ अपना सफ़र जारी रखे।

जीवन के यही वे अनुभव हैं जो इंसान को वास्तविक अर्थों में इंसान बनाते हैं। जो इंसान के अन्दर छुपी हुई क्षमताओं को बाहर लाकर उसको एक पूर्ण इंसान बना देते हैं। जीवन के अप्रिय अनुभव किसी इंसान के लिए प्रशिक्षणात्मक अवसरों की हैसियत रखते हैं। इस प्रशिक्षण पाठ्यक्रम से गुज़रे बिना इंसान का श्रेष्ठ इंसान बनना सम्भव नहीं।

प्रकृति की शिक्षा

प्रकृति की हर चीज़ मनुष्य के लिए नसीहत है। यह सृष्टि एक फैली हुई ईश्वरीय किताब है जिसके हर पृष्ठ पर इंसान के लिए एक सन्देश लिखा हुआ है, जिसके हर कण और पत्ते पर नसीहत के बोल लिखे हुए हैं। फिर भी ये सबके सब ख़ामोश हैं। इंसान अगर इस सृष्टि की किताब को पढ़ सके तो वह इसमें वह सब-कुछ पा लेगा जिसके द्वारा वह मौजूदा दुनिया में अपने जीवन का निर्माण कर सके।

अँधेरी रात के बाद रौशन सुबह का आना इंसान को यह बताता है कि इस दुनिया में हर दुखद या अप्रिय हालत के बाद खुद-ब-खुद एक सुखद हालत आती है। सूरज यह संदेश देता है कि अगर तुम लोगों के बीच पसंद किए जाना चाहते हो, तो लोगों के लिए फायदेमंद बनकर जियो। हरे-भरे पेड़ यह बताने की कोशिश कर रहे हैं कि इस दुनिया में यह मुमकिन है कि सूखी मिट्टी से भी एक सुंदर और काम की चीज़ — जैसे पेड़ — उग सकती है। एक बहती हुई नदी यह संदेश देती है कि दुनिया की कोई भी रुकावट

तुम्हें रोक नहीं सकती, बस तुम्हारे अंदर यह ताकत होनी चाहिए कि तुम हर रुकावट के बावजूद अपना सफर जारी रख सको।

चिड़ियों को देखिए। रात के समय चिड़ियाँ अपने बसेरे के स्थानों पर ख़ामोश हो जाती हैं, मगर जब रात का समय समाप्त होता है और सवेरा शुरू होता है तो चिड़ियाँ पेड़ों पर चहचहाने लगती हैं। इस तरह चिड़ियाँ यह सन्देश दे रही हैं कि ख़ुशियों और उमंगों के साथ अपने बसेरों से उठ जाओ और दिन की रोशनी में भरपूर रूप से अपनी कोशिश जारी कर दो।

ठीक इसी तरह, हमारी दुनिया के हर हिस्से में कुछ न कुछ सिखाने वाली बात छुपी होती है। यह पूरी दुनिया अपने पूरे वजूद के साथ सीख देने वाला सबसे बड़ा ज्ञानकोश है। इसमें वो हर बात मौजूद है जिसकी इंसान को अपनी ज़िंदगी को सँवारने के लिए ज़रूरत होती है।

चैलेंज का नियम

स्पेन के मुसलमानों के साथ जो कुछ भी हुआ, आमतौर पर उसे सलीबी युद्धों का बदला माना जाता है। सलीबी युद्ध 13वीं सदी के अंत में खत्म हो चुके थे। मौलाना शिबली नोमानी ने पहले विश्व युद्ध (1914) तक की इस तरह की सभी घटनाओं के लिए यही एक कारण बताते हुए कहा था:

> कहाँ तक लोगे हमसे इन्तकामे फ़तहे अय्यूबी दिखाओगे हमें
> जंगे सलीबी का समाँ कब तक

मुस्लिम विद्वानों में यही सोच अब तक बाकी है। अतः फ़िलिस्तीन से लेकर बोसनिया तक की तमाम घटनाओं को दोबारा वे इसी बदले के कारण के ख़ाने में डाले हुए हैं। मगर यह कारण कुरआन और प्रकृति के क़ानून, दोनों के विरुद्ध है। इब्ने खुल्दून का ज़माना ठीक वही था जबकि स्पेन में मुस्लिम

शासन का पतन हुआ। उसने अपनी प्रस्तावना में इतिहास और प्रकृति का यह क़ानून बताया कि हर शासन या हर प्रगति वाली क़ौम अन्ततः पतन का शिकार होती है। (देखिए इब्न ख़ल्दून का अध्याय, 170-72)

असल बात यह है कि इस दुनिया की पूरी व्यवस्था चुनौती (challenge) के उसूल पर बनी हुई है। कुरआन में इसे कहीं

‘وَتِلْكَ الْأَيَّامُ نُدَاوِلُهَا بَيْنَ النَّاسِ’

और हम इन दिनों को लोगों के दर्मियान बदलते रहते हैं। (3:140) कहा गया है और कहीं

‘بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ’

तुम एक दूसरे के प्रतिद्वंद्वी होगे। (2:36) के शब्दों में बताया गया है। इसका मतलब यह है कि जब एक क़ौम उभरती है, तो वह दूसरी क़ौम के लिए चुनौती बन जाती है। इस चुनौती से पराजित क़ौम की छुपी हुई योग्यताएँ जाग जाती हैं। फिर वह उठती है और शासक क़ौम से आगे निकल जाती है। इस तरह आगे बढ़ने और पीछे रह जाने वाली क़ौमों के बीच अलग-अलग तरीकों से मुक़ाबला चलता रहता है।

यही मुक़ाबला या चुनौती इंसानी तरक्की का एकमात्र रास्ता है। इस प्रक्रिया में कभी एक क़ौम गिरती है और कभी दूसरी, लेकिन इसके बावजूद इंसानियत का सफर लगातार सफलता की ओर बढ़ता रहता है। जो क़ौम पिछड़ती है, वह आने वाली चुनौती का सामना करके दोबारा आगे निकल सकती है। लेकिन रोने-गिड़गिड़ाने और विरोध करने से उसे अल्लाह की इस दुनिया में कुछ हासिल नहीं होने वाला।

बदले की बुनियाद केवल नफ़रत की भावना उभारती है। इसके विपरीत प्रकृति पर आधारित कारण आदमी के अन्दर यह भावना पैदा

करता है कि वह आने वाले चैलेंज का मुकाबला करे और इस तरह अपनी खोई हुई हैसियत को दोबारा अधिक वृद्धि के साथ हासिल कर ले।

वास्तविकता का वर्णन

एक तरीका यह है कि आप अपनी बात को तर्क से समझाएं। दूसरा तरीका यह है कि आप अपनी बात को बिल्कुल सीधी और साफ़ ज़ुबान में कह दें। अंग्रेज़ी की एक कहावत है:

एक साफ़ बयान अपने आप में एक मज़बूत तर्क होता है

A clear statement is an argument in itself.

जो लोग पैग़ंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हदीसों का अध्ययन करते हैं, वे जानते हैं कि बहुत सी हदीसें इसी दूसरे अंदाज़ में कही गई हैं। फिर भी, उनका प्रभाव इतना गहरा है कि उन्होंने करोड़ों लोगों के दिलों को बदल दिया।

ऐसा क्यों होता है कि एक सीधी-सादी बात सुनने वाले के लिए अपने आप तर्क बन जाती है? इसका कारण यह है कि इस तरह की सीधी बात को इंसानी फितरत खुद बढ़ाकर पूरा कर देती है। जहाँ तर्क की कमी रह जाती है, वहाँ इंसान की अपनी प्रकृति उसे पूरा कर देती है। सारी सच्चाइयाँ हर इंसान के अंदर पहले से मौजूद होती हैं। वे इंसान के अवचेतन मन में जन्म से ही रख दी जाती हैं। जब इंसान किसी सच्चाई को स्वीकार करता है, तो वह इसलिए करता है क्योंकि वह बात उसकी अपनी अंदरूनी पहचान से मेल खाती है। जब कोई बयान सुनने वाले की अपनी फितरत से मेल खा जाए, तो फिर उसे साबित करने के लिए अलग से तर्क देने की ज़रूरत नहीं पड़ती।

इसकी मिसाल ऐसी है जैसे किसी व्यक्ति को प्यास लगी हुई हो। उसे पानी का एक ग्लास गिलास पेश किया जाए तो इसकी ज़रूरत नहीं कि पानी के महत्त्व पर उसके सामने बयान किया जाए या ज्ञानात्मक तर्क के द्वारा स्पष्ट किया जाए कि पानी इंसान के लिए ज़रूरी और लाभप्रद है। आदमी के अन्दर पानी का एहसास उसे इस बात के प्रति निश्चिन्त कर देता है कि वह पानी का महत्त्व समझने के लिए तर्क का ज़रूरतमन्द हो।

ठीक इसी तरह, प्राकृतिक धर्म का पूरा बयान भी बहुत असरदार हो सकता है। लेकिन इसके लिए ज़रूरी शर्त यह है कि वह सच में प्राकृतिक हो। उसमें किसी भी तरह की अप्राकृतिक बात मिलाई न गई हो। वह अपने वास्तविक स्वरूप से इतना सामंजस्य रखता है कि इंसानी फितरत की वो एक स्पष्ट पहचान बन जाए। अपने संतुलित वक्तव्य के बल पर वह मानो मानव प्रकृति की जीवंत मिसाल बन गया हो।

हकीकतपसन्दी

अगर आप खुले मैदान में हों और बारिश शुरू हो जाए तो आप तुरंत भागकर किसी छाँव या छत के नीचे चले जाते हैं। यह कोई हार नहीं है, बल्कि हकीकत को समझकर लिया गया समझदारी भरा फैसला है। इसी तरह अगर भूकम्प आए तो आप घर से निकलकर खुले मैदान में चले जाते हैं। यह भी हार नहीं है, बल्कि एक स्वाभाविक सच्चाई को मानने का तरीका है। जब बात इंसान और प्रकृति के बीच के रिश्ते की हो, तो समाधान टकराव नहीं बल्कि उसको मान लेना होता है।

बारिश और भूकम्प जैसे हालात — जिन्हें ईश्वर ने इस दुनिया की व्यवस्था का हिस्सा बनाया है — इंसान उन्हें बदल नहीं सकता। इंसान सिर्फ़ इतना कर सकता है कि वह इनसे बचने के उपाय करे। और इनसे बचने का

सबसे असरदार उपाय यही है कि बचाव का तरीक़ा अपनाते हुए खुद को उस नुक़सान से दूर कर लिया जाए। इसी वजह से हम बारिश में छत के नीचे चले जाते हैं और भूकम्प में खुले मैदान में।

बिलकुल यही मामला धैर्य और बचाव के उसूल का भी है। धैर्य व बचाव का तरीका किसी की बुज़दिली या पराजय नहीं है। वह सादा रूप से केवल हकीकतपसन्दी है। इसकी ज़रूरत इसलिए है कि विधाता ने इंसान को परीक्षा में पड़ने से आज़ादी प्रदान की है। इंसान अपनी आज़ादी का इस्तेमाल कभी सही करता है और कभी गलत। अब आप क्या करें ! अगर आप हर इंसान से लड़ने लगें तो लोगों से आप उनकी आज़ादी छीन नहीं सकते। क्योंकि यह आज़ादी उनको स्वयं ईश्वर ने दे रखी है, लोगों की आज़ादी छीनने की बेफ़ायदा कोशिश का नतीजा केवल यह होगा कि आप अपने रास्ते को दूभर कर लेंगे।

ऐसी स्थिति में एकमात्र सम्भव उपाय धैर्य ही है — अर्थात् यदि लोगों की ओर से कभी कटुता या अप्रिय परिस्थिति उत्पन्न हो भी जाए, तो उससे बचते हुए जीवन की गति को शांतिपूर्वक बनाए रखा जाए।

धैर्य दूसरों से जुड़ा मामला नहीं है, बल्कि यह खुद इंसान का अपना मामला होता है। अधीर होना इंसान की तरक्की को रोक देता है, जबकि धैर्य यह मुमकिन बनाता है कि इंसान की ज़िंदगी का सफर सफलता के साथ आगे बढ़ता रहे — यहाँ तक कि वह अपनी मंज़िल तक पहुँच जाए।

खामोश रहना

फ्रांस में अरनेस्ट सियाचरी (Ernest Psichari) नाम का एक लेखक था, जिसका जन्म 1883 ईस्वी में पेरिस में हुआ और 1914 ईस्वी में उसका

निधन हुआ। वह शुरुआत में नास्तिक था, लेकिन बाद में वह ईसाई विश्वास की ओर लौट आया और ईश्वर और धर्म को मानने वाला बन गया।

अरनेस्ट सियाचरी मशहूर इतिहासकार अरनेस्ट रीनाँ का पोता था। उसे उन लोगों में गिना जाता है जिन्होंने 1914 से पहले फ्रांस में आध्यात्मिक जागरूकता पैदा करने की कोशिश की थी। उसका एक प्रसिद्ध कथन था, जिसका अंग्रेज़ी में अनुवाद इस तरह किया गया है:

“Silence is a bit of heaven that
comes down to earth.”

अर्थात — “ख़ामोशी आसमान का एक टुकड़ा है
जो ज़मीन पर उतारा गया है।”

ख़ामोशी प्रकृति की ज़बान है। एक आदमी जब ख़ामोश होता है तो वह प्रकृति-जगत् का प्रवक्ता बन जाता है। उसका स्तर वही हो जाता है जो प्रकृति का स्तर होता है—और प्रकृति के स्तर से ऊँचा कोई स्तर नहीं होता।

इंसान पूर्ण अर्थों में ख़ामोश नहीं रह सकता। इंसान जब प्रत्यक्ष में ख़ामोश होता है तो उस समय वह दूसरों के लिए ख़ामोश होता है मगर अपने लिए ख़ामोश नहीं होता। वह बाहरी दुनिया की तरफ़ से ख़ामोश होकर अपनी आन्तरिक दुनिया से बोलने लग जाता है।

सबसे महान कामों में से एक महान काम चुप रहना है। जब इंसान चुप रहता है, तो वह ‘ज़मीन’ की बातों से ज़्यादा ‘आसमान’ की बातों की ओर ध्यान दे रहा होता है। वह इंसानों से ज़्यादा फ़रिश्तों की बातों की तरफ़ कान लगाए होता है। वह दूसरों की बातों से ज़्यादा अपनी अंदरूनी आवाज़ की ओर ध्यान दे रहा होता है। वह ऊपरी और दिखावटी बातों के बजाय गहरी सच्चाइयों को समझने में लगा होता है।

जब इंसान बोलता है, तो वह एक सीमित दुनिया के दायरे में रहता है। लेकिन जब वह चुप रहता है, तो वह एक अनंत और व्यापक दुनिया में प्रवेश कर जाता है।

सहनशीलता: प्रकृति का नियम

टॉलरेंस (उदारता, सहनशीलता) एक ऐसा उसूल है जो पूरी कायनात में चलता है। शेर और हाथी — दोनों ही ताक़तवर जानवर हैं। दोनों एक-दूसरे को दुश्मन मानते हैं। फिर भी वे एक ही जंगल में साथ रहते हैं। यह सिर्फ़ टॉलरेंस की वजह से मुमकिन है। जंगलों में यह अक्सर देखा गया है कि जब एक तरफ़ से हाथी आ रहा हो और दूसरी तरफ़ से शेर, तो दोनों एक-दूसरे से टकराने के बजाय अपना रास्ता मोड़ लेते हैं और अलग-अलग दिशा से निकल जाते हैं। अगर दोनों ऐसा न करें और टकरा जाएँ, तो हो सकता है कि दोनों ही लड़ते-लड़ते खत्म हो जाएँ।

शेर और हाथी को यह तरीका खुद प्रकृति ने सिखाया है। इसी तरह इंसान के शरीर में भी प्रकृति ने टॉलरेंस की व्यवस्था बना रखी है। मेडिकल साइंस में इसे जैविक सहिष्णुता (Biological tolerance) कहा जाता है। इसका मतलब है — शरीर की वह ताक़त जिससे वह किसी चीज़ के बुरे असर के बिना उसे सहन कर सकता है, चाहे वह चीज़ उसके संपर्क में आए या शरीर के अंदर चली जाए:

> The ability of an organism to endure contact with a substance, or its introduction into the body, without ill effects. (*Encyclopedia Britanica*, Vol. 10, p. 31)

शरीर की इसी क्षमता पर बीमारी के इलाज की पूरी व्यवस्था कायम है। बीमारी के समय शरीर के अन्दर ऐसी दवाएँ डाली जाती हैं जो पूर्ण रूप से शरीर के लिए हानिकारक हैं। मगर शरीर बाहरी चीज़ों के मामले में अपनी सारी संवेदनशीलता के बावजूद ऐसी दवाओं को सहन करता है। वह उनके साथ टॉलरंस का मामला बिठाता है। इसी 'जैविक सहिष्णुता' की बिना - पर यह सम्भव होता है कि दवाएँ शरीर में प्रवेश कर अपना असर दिखाएँ। वे शरीर के हिस्सों पर बुरा प्रभाव डाले बिना उसके बीमार हिस्से पर अमल करके उसे अच्छा कर सकें।

सहिष्णुता की यही रीति मानव समाज में भी अनिवार्य है। जैसे जंगल के प्राणी अपनी प्रवृत्ति के अनुसार आचरण करते हैं, और जैसे मनुष्य का शरीर अपनी प्रकृति के अनुसार कार्य करता है — वैसे ही इंसान को भी अपनी विवेक-बुद्धि और सोच के आधार पर आचरण करना चाहिए। उसे सोच-समझकर निर्णय लेने चाहिए और सहनशीलता को अपनाकर दूसरों के साथ सौहार्दपूर्वक जीवन बिताना चाहिए।

सच्चाई की कसौटी

विरोध परीक्षा का एक परचा है। अगर किसी से आपका विरोध हो जाए तो समझ लीजिए कि अल्लाह ने आपको एक नाज़ुक आज़्माइश में डाल दिया है, ताकि यह देखा जा सके कि आप सच्चे ईमान वाले हैं या नहीं।

सच्चे ईमान वालों का तरीका यह होता है कि वे विरोध को सिर्फ़ विरोध की सीमा में रखते हैं। जो लोग विरोध को तोड़फोड़ और नुकसान पहुँचाने के स्तर तक ले जाते हैं, वे बेशक ईमान और इस्लाम की हद से बाहर हो जाते हैं।

आदमी जब विरोध को विरोध के दायरे में रखे तो इसकी सम्भावना होती है कि विचार-विमर्श के दौरान दोनों में से किसी के ऊपर सच्चाई खुल जाए और इस तरह जो भटके हुए मुसाफ़िर की तरह चल रहा था वह दोबारा सही रास्ते पर आ जाए।

मगर जब एक आदमी विरोध को विध्वंस तक पहुँचा दे तो उसके बाद गुमराही के खड्डे में गिरने के सिवा कोई अंजाम उसके लिए बाकी नहीं रहता। ऐसे आदमी का मस्तिष्क नकारात्मक सोच का कारख़ाना बन जाता है। वह तर्क और आरोप-प्रत्यारोप के अन्तर को समझने की योग्यता खो देता है। वह निर्णायक विरोध की हद से गुज़र कर ज़ालिमाना विरोध के दायरे में दाख़िल हो जाता है। वह अल्लाह की पकड़ के एहसास से ग़ाफ़िल हो जाता है। वह केवल अपने अहं को अपना रहनुमा बना लेता है। तब उसका उद्देश्य सत्य को कायम करना नहीं होता, बल्कि केवल अपनी ज़ात को क़ायम करना उसका पहला और आख़िरी उद्देश्य बन जाता है। वह अल्लाह की दयालुता से दूर होकर पूरी तरह शैतान की पकड़ में आ जाता है।

विरोध का उत्पन्न होना पूर्णतः स्वाभाविक प्रक्रिया है, लेकिन विरोध को विनाशकारी रूप देना एक पूर्णतः बर्बर और अमानवीय कृत्य है। जो लोग विरोध को इतना बढ़ा-चढ़ाकर पेश करते हैं कि वह विध्वंस का रूप ले ले, उनके लिए बड़ा खतरा है कि वे अल्लाह की सख्त पकड़ में आ जाएँ। बहुत संभव है कि आख़िरत में उनसे यह कहा जाए कि आज तुमने दुनिया में शैतान को अपना रूहनुमा बना लिया। अब आख़िरत की ख़ुदाई नेमतों में तुम्हारा कोई हिस्सा नहीं।

विरोध के समय न्याय पर कायम रहना आदमी के लिए जन्नत का दरवाज़ा खोलता है और विरोध के समय न्याय से हट जाना आदमी को जहन्नम के दरवाज़े पर पहुँचा देता है।

सबसे अधिक सफल

जून 1999 के समाचार पत्रों में एक हैरान कर देने वाली खबर आई। उसमें कहा गया कि भारत का सबसे अमीर आदमी बैंगलौर का एक मुसलमान है, उसका नाम अज़ीम हाशिम प्रेमजी है।

यह बात टाइम्स ऑफ इंडिया (27 जून 1999) समेत उस समय के अन्य अखबारों और पत्रिकाओं में छपी थी। इनके अनुसार, श्री अजीम प्रेमजी ने इतनी दौलत इकट्ठा कर ली कि वे भारत के सबसे धनी व्यक्ति बन गए, यहाँ तक कि कुमार मंगलम, बिरला और धीरूभाई अंबानी से भी आगे।

उनका व्यापार साबुन से लेकर कंप्यूटर तक फैला हुआ है। पिता के निधन के कारण उनकी इंजीनियरिंग की पढ़ाई अधूरी रह गई थी। मगर आज उनकी कंपनियों में सैकड़ों इंजीनियर और गैर-इंजीनियर कर्मचारी काम करते हैं।

अज़ीम हाशिम प्रेमजी बहुत मेहनती इन्सान हैं। साथ ही उनके कुछ अनोखे गुण भी हैं। उदाहरण के लिए, वे बहुत कम बोलते हैं। एक बार जब विशेषज्ञों की मेज़ पर प्रोजेक्ट पर चर्चा चल रही थी, अज़ीम हाशिम प्रेमजी ने पूरी मीटिंग में एक शब्द भी नहीं बोला। वे बस कागज़-पेंसिल से नोट्स लेते रहे। वे बेहद सीधे-सादे हैं। इतना धन होने पर भी वे फ्लाइट में इकोनॉमी क्लास में सफ़र करते हैं और कभी पाँच सितारा होटलों में नहीं रुकते। एक बार बैंगलोर हवाईअड्डे पर उतरने पर, सूचना के बावजूद उनकी ऑफिस से उन्हें लेने के लिए कोई कार नहीं आई तो वो बिना ग़ुस्सा किए ऑटो-रिक्शा लेकर दफ़्तर पहुंचे और चुपचाप काम शुरू कर दिया।

सफलता हर जगह हासिल की जा सकती है, बशर्ते आदमी उसके लिए ज़रूरी संघर्ष की शर्त पूरी करे।

विनम्र स्वभाव

धरती पर बड़े-बड़े पहाड़ दिखाई देते हैं। एवरेस्ट की चोटी ज़मीन से साढ़े पाँच मील ऊपर है। इतने बड़े-बड़े पहाड़ ज़मीन पर क्यों स्थापित हैं। इसलिए नहीं कि वे बहुत-सी चीज़ों के सामने अपने बड़प्पन को स्पष्ट करें। यहाँ तक कि पहाड़ अपना साया ज़मीन पर डाल कर यह घोषणा कर रहा है कि बड़ा बनने में उसे कोई दिलचस्पी नहीं है। उसे विनम्रता पसन्द है, न कि गर्व और घमण्ड।

धरती पर पहाड़ का होना इसलिए आवश्यक है ताकि वह सेवा करे न कि इसलिए कि वह अपनी महानता दिखाए। वह ज़मीन के चारों ओर इसलिए मौजूद हैं ताकि ज़मीन का संतुलन बना रहे। चूंकि ज़मीन का दो-तिहाई हिस्सा गहरे समुद्रों से ढका हुआ है, इसलिए यह डर था कि कहीं ज़मीन अपना संतुलन न खो दे और इंसानों के रहने के लायक न रह जाए। इसी कारण ज़मीन के सूखे हिस्सों पर पहाड़ खड़े हो गए ताकि ऊँच-नीच की दोतरफा प्रक्रिया से ज़मीन का संतुलन बना रहे।

यह नियम पूरी दुनिया के लिए प्रकृति का तय किया हुआ नियम है। इस दुनिया में बहुत सारी चीज़ें हैं और हर चीज़ को प्रकृति ने कोई न कोई खास गुण दिया है। लेकिन यह खासियत इसलिए नहीं दी गई कि कोई चीज़ खुद को दूसरी चीज़ से बड़ा समझे या घमंड करे, बल्कि इसका असली मकसद यह है कि हर चीज़ अपनी सेवा के क्षेत्र में जितना हो सके, उतना योगदान दे।

इंसान को भी अपने अंदर यही स्वभाव पैदा करना चाहिए। इंसान के मामले में भी यही व्यवस्था की गई है कि अलग-अलग लोगों को अलग-अलग खास खूबियाँ दी गई हैं। ये खूबियाँ सिर्फ़ इसीलिए हैं ताकि हर इंसान एक खास तरह का काम अच्छे से कर सके। ये इसलिए नहीं दी गईं

कि कोई व्यक्ति उन्हें पाकर खुद की तारीफ़ करने लगे या दूसरों पर अपनी बड़ाई जताए।

सच्ची और संतुलित इंसानी सफलता के लिए यह ज़रूरी है कि इंसान खुद को भी पहचाने और दूसरों को भी समझे और उन्हें स्वीकार करे।

साज़िश नहीं, प्रतिस्पर्धा

यह सच्चाई है कि आज के दौर में मुसलमान कुछ समस्याओं से जूझ रहे हैं। मुसलमानों में जो लोग लिखते और बोलते हैं, वे सुबह-शाम इन्हीं बातों पर चर्चा करते रहते हैं। उनकी बातों का सार यही होता है कि ये सारी समस्याएँ दुश्मनों के ज़ुल्म और चालबाज़ियों का नतीजा हैं। उनका मानना है कि मुसलमानों की सभी परेशानियाँ दुश्मनों की साज़िशों का परिणाम हैं और इसका हल यह है कि उन साज़िशों के खिलाफ़ लड़ाई लड़ी जाए।

लेकिन ये सोच बिलकुल ग़लत सोच है और यह ग़लत सोच ही हमारा सबसे बड़ा मसला है। इन लोगों की गलती यह है कि उन्होंने प्रकृति के एक क़ानून को दुश्मन जातियों की साज़िश समझ लिया। यद्यपि यह ऐसा ही है जैसे बारिश से पैदा होने वाली कीचड़ का दोष इंसानों को दिया जाने लगे।

प्रकृति का नियम यह है कि दुनिया में इंसानों के बीच प्रतिस्पर्धा हो, और एक समूह दूसरे समूह के लिए चुनौती बने। इसी प्राकृतिक व्यवस्था के चलते ऐसा होता है कि एक को दूसरे से धक्का लगता है। कोई व्यक्ति या समूह दूसरे को पीछे छोड़कर आगे बढ़ जाता है। यह इंसानी व्यवस्था विकास के लिए बनाई गई है। ऐसी स्थिति में अगर कोई समूह जो निशाने पर आ गया है, शिकायत और विरोध करे, तो उससे कोई व्यावहारिक फायदा नहीं होता। इसके बजाय उसे चाहिए कि वह पूरी तरह से खुद को मजबूत

बनाए। वह धैर्य का रास्ता अपनाकर अपनी तैयारी करे। वह अपनी गलतियों को सुधारने पर ख़ुद को लगाए।

आज के समय में प्रतिस्पर्धा के नए मैदान खुल गए हैं — जैसे तकनीक और वैज्ञानिक शिक्षा। मुसलमान इन नए मैदानों में दूसरी क़ौमों से पीछे रह गए हैं। इसी वजह से वे हर जगह दूसरी क़ौमों के निशाने पर हैं। अब इसका एकमात्र हल यही है कि मुसलमान अपनी कार्यकुशलता की कमज़ोरियों को दूर करें, यहाँ तक कि उनका वजूद खुद दूसरी क़ौमों के लिए एक चुनौती बन जाए।

इस दुनिया में कामयाबी की मात्र यही एक मुमकिन तदबीर है। जहाँ तक वर्तमान तरह की विशिष्ट राजनीति या माँगों के संघर्ष की बात है, उनसे मुसलमानों को कुछ भी मिलने वाला नहीं, चाहे उन्हें और एक सौ वर्षों तक जारी रखा जाए। ऐसे विरोध इंसान के विरुद्ध नहीं हैं, बल्कि वे प्रकृति के विरुद्ध हैं और कौन है जो ईश्वर से लड़कर कामयाब हो सका है !

प्रकृति के अनुरूप

कोई भी व्यक्ति भूकंप से अपने आप को नहीं बचा सकता। इसी तरह, कोई भी व्यक्ति प्राकृतिक नियमों के खिलाफ जाकर इस दुनिया में अपना जीवन नहीं बना सकता। प्राकृतिक कानूनों के साथ मेलजोल स्थापित कर के ही मनुष्य अपने जीवन का विकास कर सकता है। इसलिए पहला विकल्प केवल नाश है, न कि प्रगति या निर्माण। यदि आप इस दुनिया में एक खूबसूरत पेड़ चाहते हैं, तो उसकी शुरुआत एक बीज या छोटे पौधे से करनी होगी। और इसके लिए जरूरी है कि आप लंबी प्रतीक्षा करें, तभी आप अपना इच्छित पेड़ पा सकते हैं। इस प्राकृतिक नियम के विरुद्ध कदम उठाना केवल इतना ही कर सकता है कि आप अपने लक्ष्य तक कभी नहीं पहुंच पाएं।

जीवन-संबंधी सभी मामलों में यही मिसाल लागू होती है। आप जब भी अपने जीवन की कोई योजना बनाएँ तो अपनी इच्छाओं और उमंगों के साथ इस वास्तविकता को अवश्य ही याद रखें कि आपको अपने मंसूबों की पूर्ति ऐसी दुनिया में करनी है जो आपकी मर्जी की पाबन्द नहीं है। आपको चाहिए कि प्रकृति के इन बाह्य नियमों को ध्यान में रखते हुए अपनी योजना बनाएँ और उससे सहयोग करते हुए उसको चलाएँ। यही एक तरीका है जिसका पालन करके इस दुनिया में किसी व्यक्तिगत या सामूहिक योजना को कामयाब किया जा सकता है।

दुनिया में सफलता, प्रकृति के इसी नियम के अनुसार कार्य करने का दूसरा नाम है। प्रकृति के अनुसार जीवन जीना ही इस संसार में वास्तविक सफलता का मूल रहस्य है। इसके विपरीत, असफलता यह है कि मनुष्य प्रकृति के नियमों से सामंजस्य न बना सके। सफलता पचास प्रतिशत अपनी कोशिशों और पचास प्रतिशत प्रकृति की अनुकूलता का नाम है।

उचित शिक्षा हासिल करें

किसी बाग़ में गुलाब का एक पेड़ है। उसकी डाली में फूल खिले हुए हैं, इसी के साथ उसकी डालियों में काँटे भी हैं। फूल के साथ काँटों को देखकर एक शायर कहता है :

हिफाज़त फूल की मुम्किन नहीं है
अगर काँटों में हो ख़ू-ए-हरीरी

वास्तव में, प्रकृति में फूलों के साथ कांटे भी पाए जाते हैं। परंतु कांटों का काम फूलों की हिंसक रक्षा करना नहीं होता। यह केवल कवि की कल्पना है, प्रकृति का वास्तविक संदेश नहीं।

फूल के साथ काँटे को पैदा करके प्रकृति जो शिक्षा देना चाहती है वह ज़्यादा सही रूप से यह है कि दुनिया में प्रिय चीज़ों के साथ अप्रिय चीजें भी हैं। इंसान को चाहिए कि वह दोनों के साथ जीवन गुज़ारने का हौसला पैदा करे। एक दूसरे शायर ने यही दूसरी शिक्षा लेते हुए इस तरह कहा है :

गुलशनपरस्त हूँ मुझे गुल ही नहीं अज़ीज़
काँटों से भी निबाह किए जा रहा हूँ मैं

निबाह की इसी कला का दूसरा नाम जीवन है। जिस आदमी का यह हाल हो कि वह फूल को देखकर ख़ुश हो और काँटे को देखकर गुस्सा करे, वह वर्त्तमान संसार में कभी कामयाब नहीं हो सकता। इस प्रकार का स्वभाव प्रकृति की योजना के विरुद्ध है और जो स्वभाव प्रकृति के नियम के विरुद्ध हो उसके लिए वर्त्तमान संसार में सफलता की कोई संभावना नहीं।

फूल की सुंदरता खुद उसकी सबसे बड़ी रक्षक है। उसकी शोभा और खुशबू यकीनी बनाती हैं कि वह दुनिया के बगीचे में एक सुरक्षित स्थान पाए और दुश्मनों के हमलों से बचा रहे। ठीक उसी तरह, जब कोई इंसान अपने अंदर कोई महत्वपूर्ण गुण विकसित कर लेता है, तो वह भी इस काबिल हो जाता है कि फूल की तरह बेफिक्र होकर जिए—काँटों का कोई भय उसके लिए नहीं रहेगा।

हर हाल में संतुलन

1644 ईस्वी में लंदन में जन्मे विलियम पेन (William Penn) एक ऐसे नेता थे जिन्होंने धर्म और राजनीति दोनों क्षेत्रों में भाग लिया। उनकी मृत्यु 1718 ई. में हुई। वे धार्मिक सहनशीलता के बड़े समर्थक थे। उनका एक प्रसिद्ध कथन है:

> "Let the people think they govern and they will be governed"
>
> यानी लोगों को यह महसूस होना चाहिए कि वे शासन कर रहे हैं, और इसी भावना में वे शासित हो जाते हैं।

विलियम पेन ने यह बात एक इतिहासकार की तरह अपने अध्ययन के आधार पर कही थी। लेकिन यह केवल इतिहास की एक सामान्य बात नहीं है, बल्कि यह प्रकृति का एक सार्वभौमिक नियम है, जिसे खुद अल्लाह ने अपनी सृजनात्मक योजना के तहत इस दुनिया में लागू किया है। अल्लाह का यह तयशुदा प्राकृतिक नियम कुरआन में इस तरह बयान किया गया है: "और हम इन दिनों को लोगों के दर्मियान बदलते रहते हैं।" (3:140)

यहाँ दिन से तात्पर्य विजय या हार और शासन और आधिपत्य के दिन हैं। इस दुनिया में जिस तरह दूसरी तमाम चीजें परीक्षा और आज़माइश के लिए हैं, इसी तरह राजनीतिक सत्ताधिकार भी आज़माइश और परीक्षा के लिए है। अतएव वह बारी-बारी हर समूह को दिया जाता है, ताकि हर एक की जाँच हो सके। इस दुनिया में प्रभुत्वता की हालत भी बराए इम्तिहान है और पराधीनता की हालत भी परीक्षा हेतु।

इंसान को चाहिए कि जब उसे शासन की ज़िम्मेदारी दी जाए तो वह घमंड या अहंकार में न आए, और जब वह खुद को अधीन स्थिति में पाए तो नकारात्मक सोच का शिकार न हो। उसे दोनों हालात को ईश्वर के फैसले के रूप में स्वीकार करना चाहिए। हर स्थिति में उसकी नज़र दूसरों के सही या ग़लत कामों पर नहीं, बल्कि अपनी खुद की ज़िम्मेदारियों को निभाने पर होनी चाहिए।

यह एक महान सुधारवादी विश्वास है जो लोगों को नकारात्मक प्रकार की राजनीतिक गतिविधियों से बचाता है। यह लोगों को इस योग्य बनाता है

कि अपनी योग्यताओं को हानि से बचाएँ और सदैव लाभकारी और सही नतीजों के अमल में व्यस्त रहें। शासन का छिनना अल्लाह की तरफ़ से है। इसके विरुद्ध विरोध करना अल्लाह के विरुद्ध विरोध करना है। और कौन है जो अल्लाह के विरुद्ध विरोध में कामयाब हो?

शांति या विनाश

अमरीकी सहाफी रेमंड ग्राम स्विंग (Raymond Gram Swing) का कहना है कि 'शांति का विकल्प जंग नहीं है, शांति का असली विकल्प विनाश है:'

> The alternative to peace is not war.
> It is annihilation.

यह बात पहले भी सही थी, लेकिन आज के समय में यह और भी ज़्यादा सच्चाई बन गई है। आज के आधुनिक हथियारों ने यह नामुमकिन बना दिया है कि कोई इंसान या समूह जंग करके कोई अच्छा नतीजा पा सके। जो लोग अब जंग का रास्ता चुनते हैं, उन्हें पहले से जान लेना चाहिए कि वे असल में ज़िंदगी या तरक्की नहीं, बल्कि सिर्फ़ मौत को चुन रहे हैं। अगर आप किसी समस्या का सामना कर रहे हैं तो उसे धैर्य और सहनशक्ति के साथ सुलझाने की कोशिश करें, और जो भी करें, वह शांति के दायरे में रहकर करें।

अगर इसके बजाय आपने जंग या टकराव का रास्ता चुना, तो आप न तो अपनी समस्या का हल निकाल पाएंगे, और न ही उससे कुछ हासिल कर पाएंगे — उल्टा आप खुद को ऐसी मुश्किलों और बर्बादी में डाल देंगे जो न तो सुलझाई जा सकती हैं और न ही उनकी भरपाई मुमकिन है।

आपके विचार के अनुसार मसला चाहे कितना ही गम्भीर हो, आपको अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि आपके लिए चयन केवल दो चीज़ों में है। या तो मौजूदा हालत को सहन करते हुए शान्तिपूर्ण दायरे में अपनी कोशिश जारी रखिए, या लड़-भिड़कर अपने को नष्ट कर लीजिए। इसके सिवा दूसरी कोई सम्भव सूरत सिरे से आपके लिए मौजूद ही नहीं।

पहले के दौर में युद्ध किसी समस्या को सुलझाने का एक तरीका हो सकता था, लेकिन आज के दौर में खुद युद्ध ही सबसे बड़ी समस्या बन गया है। आज की जंग जो तबाही लेकर आती है, वह हर तरह की तबाहियों से कहीं ज़्यादा भयानक होती है।

इसलिए अब इंसान के पास सिर्फ दो ही रास्ते बचे हैं—या तो वह शांति के दायरे में रहकर अपनी कोशिशें करता रहे, या फिर चुप्पी साध ले।

अख्लाकी गिरावट

अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के संस्थापक सर सय्यद अहमद ख़ाँ को उनके विरोधियों ने अंग्रेज़ों का पिट्ठू कहा। इसी तरह मौलाना अबुल कलाम आज़ाद को उनके विरोधियों ने हिन्दुओं का एजेंट बताया। ऐसा क्यों हुआ? इसकी वजह यह थी कि विरोधियों ने देखा कि अंग्रेज़ सर सय्यद अहमद ख़ाँ की इज़्ज़त करते हैं। इसी तरह उन्होंने देखा कि मौलाना अबुल कलाम आज़ाद को हिन्दुओं के बीच एक आदरभरा स्थान मिला हुआ है।

ये विरोधी अपनी नफ़रत की वजह से यह मानने को तैयार नहीं थे कि इन लोगों को गैर-मुसलमानों के बीच जो इज़्ज़त मिली, वह उनकी किसी अच्छाई या गुण की वजह से है। इसलिए उन्होंने ऐसे सम्मानित लोगों को ये ताने दे दिए, ताकि ये दिखा सकें कि उन्होंने यह सम्मान अपनी मौक़ा-परस्ती (अवसरवादिता) से पाया है, न कि अपनी किसी असली काबिलियत से।

ऐसे ताने सुनने में तो आलोचना लगते हैं, मगर असल में वे नीचता हैं। और नीचता बेशक हर तरह की बुरी बातों में सबसे ज़्यादा घटिया और लानत वाली चीज़ होती है।

आलोचना हर मनुष्य का स्वाभाविक अधिकार है। हर आदमी को यह अधिकार है कि वह दूसरे आदमी में कोई ग़लत बात देखे तो खुलकर उसको कह दे। मगर यह अधिकार सतर्क मतभेद के लिए है, न कि दोष निकालने और आरोप लगाने के लिए। जो लोग विरोध के समय नीचता की सतह पर उतर आएँ, वे स्वयं अपने बारे में अधिक सख़्ती के साथ वही आरोप साबित कर रहे हैं जिसको वे दूसरे के ऊपर लगाना चाहते थे।

ऐसे स्वभाव वाले लोग हर दौर में पाए जाते हैं। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद. और उनके साथियों के समय में भी ऐसी गिरी मानसिकता के लोग मौजूद थे, आज भी ऐसे लोग मिलते हैं, और आगे भी ऐसे लोग मिलते रहेंगे, जब तक क़यामत नहीं आ जाती—वह समय जब लोगों के पास यह मौका ही नहीं रहेगा कि वे किसी पर झूठा इल्ज़ाम लगाएं या किसी की बदनामी करें।

सेहतमंद और सकारात्मक विरोध पूरी तरह से अच्छी बात है, लेकिन बेबुनियाद इल्ज़ाम लगाना और एक-दूसरे पर कीचड़ उछालना सिर्फ़ शरारत होती है। जिस समाज में इल्ज़ाम लगाने का चलन आम हो जाए, जहाँ लोग एक-दूसरे को गालियाँ देने और बुरा कहने लगें, वह समाज धीरे-धीरे नीच सोच और गिरे हुए आचरण का गढ़ बन जाता है—और किसी समाज के लिए इससे ज़्यादा बुरा हाल और कुछ नहीं हो सकता।

हानि में लाभ

यह संसार इस तरह से बना है कि यहाँ नुक्सान में भी फ़ायदा छिपा होता है। नकारात्मक घटनाओं के भीतर भी सकारात्मक पहलू होते हैं, और इसका

एक अनोखा उदाहरण हाल ही में देखने को मिला। इंसान के सिर में चोट लगना एक भयानक घटना लगती है, लेकिन अमेरिका में इस पर कई शोध किए गए हैं। कुछ विशेषज्ञों ने इस पर रिसर्च की और पाया कि अगर चोट सहन करने योग्य हो तो यह इंसान के दिमाग़ को प्रेरित करके उसमें नया जीवन पैदा कर सकती है।

जब दिमाग़ को कोई दुख पहुँचता है तो वह उसकी कार्यशक्ति को जागृत कर देता है। दिमाग़ी ख़राबी का एक विशेष प्रकार, जो दिमाग़ के कुछ कार्यों में नुक्सान का कारण बनता है, वह कला और रचनात्मकता में वृद्धि का कारण भी बन सकता है। यह शोध एक अध्ययन से सामने आया। दिमाग़ के एक हिस्से को चोट लगने से कुछ अन्य दिमागी क्रियाएँ सक्रिय हो सकती हैं।

यह जानकारी अमरीकी डॉक्टर ब्रूस मिलर ने दी, जो कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में न्यूरोसाइंटिस्ट के रूप में काम कर रहे हैं। वे उस शोध टीम के प्रमुख थे जिसने इस विषय पर ज्ञानात्मक सर्वे किया।

When brain damage sparks talent.

Washington: A rare form of dementia which causes the loss of many brain functions can also heighten the artistic talent of those affected, according to a study, reports Reuter. Damage to one part of the brain may somehow release functions that were previously suppressed, neurologist Dr. Bruce Miller from the University of California at Los Angeles, who conducted the study, said yesterday. (*The Hindustan Times*, New Delhi, May 2, 1998).

मौजूदा दुनिया की व्यवस्था इस तरह बनी है कि यहाँ न केवल फ़ायदे वाली चीज़ों में फ़ायदा है बल्कि उन चीज़ों में भी फ़ायदे का पहलू छुपा हुआ

है जो प्रत्यक्ष में नुक्सान वाली दिखाई देती हैं। ऐसी दुनिया में आदमी के लिए किसी भी हाल में निराशा का कोई सवाल नहीं।

ख़ास दूरी बनाये रखें

कुरआन में आया है कि अल्लाह तआला ने आदम की औलाद से कहा कि तुम ज़मीन पर बसे रहोगे और तुम में से कुछ लोग दूसरों के दुश्मन होंगे (3:195)। इसका मतलब यह है कि इंसान को ऐसे हालात में रहना होगा जहाँ प्रतिस्पर्द्धा और टकराव होते रहेंगे, जो एक समय पर दुश्मनी और झगड़ों तक पहुँच सकते हैं। यहाँ तक कि यह झगड़े क़त्ल और हिंसा में बदल सकते हैं। यह स्थिति प्रकृति के निर्धारित नियमों के तहत है, और इसे समाप्त करना उतना ही असंभव है जितना कि पेड़ से कांटों को निकालना।

अब सवाल यह उठता है कि ऐसी स्थिति में सफल जीवन कैसे जिया जाए, क्योंकि लड़ाई और टकराव के बीच एक स्वस्थ और शांतिपूर्ण जीवन संभव नहीं हो सकता। एक संतुलित और शांतिपूर्ण जीवन के लिए, ऐसे हालात में धैर्य और बचाव की आवश्यकता है। दुश्मनी और टकराव की दुनिया में सफल जीवन का तरीका यही है कि हम संघर्षों से बचें। जब किसी अप्रिय स्थिति, तनाव, या हानि का सामना करें, तो उसे सहन करें। अधिक लाभ के मुकाबले में कम हानि को सहन करना और शांतिपूर्ण तरीके से अपने रास्ते पर चलना ही सफलता की कुंजी है।

जंगल के जानवरों में भी दुश्मनी का यही उसूल काम कर रहा है। फिर जंगल के जानवर क्या करते हैं? उनमें से हर एक यह करता है कि प्रकृति के मार्गदर्शन के अनुसार अपने आप को अपने दुश्मन या विरोधी के मुकाबले में सुरक्षित दूरी (safe distance) पर रखता है। यही एकमात्र प्रकृति का उसूल है जिस पर जंगल का जीवन करोड़ों वर्षों से स्थापित है।

महफ़ूज़ दूरी पर रहने का यह सिद्धांत प्रकृति के सिद्धांत के अनुरूप है। इसे कुरआन में नज़रअंदाज़ करने (7:199) के रूप में व्यक्त किया गया है। जैसे आप सड़क पर अपनी गाड़ी को दूसरी गाड़ियों से सुरक्षित रखते हैं ताकि आप बिना किसी समस्या के अपनी मंजिल तक पहुँच सकें, वैसे ही यह सिद्धांत घर, बाज़ार, और सामूहिक जीवन के सभी अवसरों में लागू होता है। हमें हर स्थिति में अपनी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए दूसरों से सुरक्षित दूरी बनाए रखनी चाहिए। यही सफलता का सबसे प्रभावी तरीका है। इसके बिना इस दुनिया में सफल जीवन जीना असंभव है।

इंसान की दो किसमें

नकारात्मक सोच में जीने वाला इंसान इतिहास का हिस्सा बन जाता है, जबकि सकारात्मक मानसिकता वाला इंसान इतिहास का निर्माता होता है। पहले इंसान को हालात और परिस्थितियाँ नियंत्रित करती हैं, जबकि दूसरा इंसान इन परिस्थितियों से ऊपर उठकर सोचता है और अपने तरीके से नया इतिहास रचता है।

दुनिया में हमेशा अप्रिय हालात आते रहते हैं और अक्सर ऐसे कारण उत्पन्न होते हैं जिनसे एक इंसान को दूसरे से शिकायत होती है। ऐसे समय में जो लोग प्रतिक्रिया देने की मानसिकता का शिकार हो जाते हैं, वे जैसे इतिहास के माध्यम बन जाते हैं। वे अपनी स्थिति और आसपास के हालात के शिकार हो जाते हैं, और फिर उनका जीवन विरोध और नकारात्मक क्रियाओं में ही सिमट जाता है, जिससे वे कोई रचनात्मक कार्य नहीं कर पाते।

इसके विपरीत, वह इंसान जो हालात से ऊपर उठकर सोचता है और प्रतिक्रिया के बजाय अपनी तटस्थ सोच से अपनी राय बनाता है, वह मानो

इतिहास पर काबू पाता है। वह दुनिया से प्रभावित होने के बजाय स्वयं उसे बदलने की क्षमता रखता है और इतिहास का निर्माता बन जाता है।

संसार का हर जीव इतिहास की पैदावार है। मगर इंसान का स्थान यह है कि वह अपनी कोशिशों से इतिहास बनाए। वह स्वयं अपनी ज़ात से इतिहासकार बन जाए। नकारात्मक मनोविज्ञान किसी इंसान के लिए कातिल की हैसियत रखता है। जो आदमी नकारात्मक मनोविज्ञान का शिकार हो, वह मानो अपने हालात के हाथों कत्ल हो गया। इसके विपरीत जो व्यक्ति अपने आप को नकारात्मक रुझानों और प्रतिक्रिया के मनोविज्ञान से बचाए, वह मानो बाहरी दुनिया के हमलों के बावजूद ज़िन्दा रहा। उसने अपनी हस्ती को विनष्ट होने से बचा लिया।

नकारात्मक सोच की बुनियाद आदमी के बाहर होती है और सकारात्मक सोच की बुनियाद आदमी के अन्दर। नकारात्मक सोच वाला इंसान दूसरों के ऊपर खड़ा होता है और सकारात्मक सोच वाला इंसान स्वयं अपनी जात पर। बताने के लिए यह सचाई काफ़ी है कि दोनों में से कौन है जिसे श्रेष्ठ इंसान की उपाधि दी जा सके। सबसे अधिक महरूम और नादान वह व्यक्ति है जिसके लिए इस दुनिया में कर्ता बनने का अवसर था, इसके बावजूद वह केवल माध्यम बनकर रह गया।

स्वयं की पहचान

अगर कोई व्यक्ति अपने-आप पर विजय हासिल कर ले तो उसके लिए दूसरों पर फ़तह हासिल करना कुछ मुश्किल नहीं। आदमी अपनी तक़दीर आप बनाता है, अपनी कमज़ोरियों पर छा जाने का नाम कामयाबी है और अपनी कमज़ोरियों से पराजित हो जाने का नाम नाकामी।

अगर किसी व्यक्ति के अंदर अहंकार हो तो उसके आस-पास हमेशा खुशामदी लोग जमा हो जाते हैं। खुशामदी लोग किसी भी इंसान की सबसे बड़ी कमजोरी होते हैं। अगर कोई व्यक्ति जल्दबाजी करे, तो वह उन मौकों पर घबराएगा जहाँ उसे धैर्य से काम लेना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप वह आने वाली कामयाबी से अनावश्यक रूप से वंचित हो जाएगा। एक व्यक्ति अगर केवल अपनी पहचान में खोया रहे, तो वह दूसरों के साथ सही तरीके से व्यवहार नहीं कर पाएगा, जबकि लोगों के बीच सफल जीवन गुजरने के लिए उनके साथ सही व्यवहार करना अत्यंत ज़रूरी है।

वास्तव में, कामयाबी के कारण मनुष्य के अंदर ही होते हैं। इसी तरह नाकामी का कारण भी हमारे अंदर ही पाया जाता है। इसलिए हमें सबसे पहले अपने आप को देखना चाहिए। हर पराजय का कारण हमें अपने अंदर ही खोजना चाहिए। जो चीज़ हमारे अंदर है, उसे हम बाहर से नहीं ढूंढ सकते। जिन परिणामों को हम खुद अपने प्रयासों से हासिल करते हैं, उन्हें हम दूसरों पर दबाव डालकर नहीं पा सकते।

हर व्यक्ति के अन्दर एक समय में दो प्रकार की योग्यताएँ होती हैं। उसके अन्दर मान लेने का अंश है और इसी के साथ जान लेने की इच्छा भी। उसमें आभार का भाव भी होता है और इसी के साथ नाराज़गी का भाव भी। उसके अन्दर विनम्रता का स्वभाव भी है और अहंकार का स्वभाव भी। उसके अन्दर अमानतदारी का अंश भी है और अधिकार हनन का अंश भी। वह दूसरे की प्रगति पर ख़ुश होना भी जानता है और दूसरे की प्रगति पर जलता भी है।

मौजूदा दुनिया में जीत उसके लिए है जो अपने अन्दर की बुरी इच्छाओं के साथ मुकाबले में जीत हासिल करे और हार उसके लिए है जो अपने अन्दर की बुरी इच्छाओं के मुकाबले में हार जाए।

हार के बाद जीत

चाहे हार कितनी ही बड़ी क्यों न हो, वह हमेशा अस्थायी होती है — और उसे एक बेहतर योजना के साथ दोबारा जीत में बदला जा सकता है। इस दुनिया में हर चीज़ बदलती रहती है, इसलिए हार भी स्थायी नहीं होती। यहाँ कोई भी हार हमेशा के लिए नहीं होती।

हार के बाद इंसान के सामने दो रास्ते होते हैं। पहला यह कि वह जंग हारने के साथ-साथ हिम्मत भी हार जाए और टूट कर बैठ जाए। वह साहस खोकर निराश हो जाए। दूसरा रास्ता यह है कि वह सोच-विचार में लग जाए कि हार क्यों हुई। वह यह समझने की कोशिश करे कि सामने वाला क्यों जीता और वह खुद क्यों हारा। इस विश्लेषण के ज़रिए वह अगली बार के लिए एक नई, मज़बूत शुरुआत कर सकता है।

यह दूसरी सोच आदमी के ज़ेहन को खोलती है। उसको इस काबिल बनाती है। कि वह अधिक अच्छी तैयारी के साथ दोबारा काम कर सके। और जो व्यक्ति ऐसा करे, वह पहली बार नहीं तो दूसरी बार अवश्य कामयाब होकर रहता है। इस दुनिया में नाकामी के साथ कामयाबी लगी हुई है और कामयाबी के पीछे नाकामी जुड़ी है। जो व्यक्ति नाकाम हो जाए, उसके अन्दर दोबारा उठने के लिए नया इरादा जागता है। उसके मस्तिष्क के नए-नए क्षेत्र जागरूक हो जाते हैं। दूसरी तरफ़, जो आदमी कामयाब हुआ हो, उसके जीवन में ठहराव आ जाता है। वह इतमीनान के मनोविज्ञान में फँस कर रह जाता है।

मालूम हुआ कि हार किसी हारने वाले के लिए एक नए जीवन की शुरुआत बन सकती है, जबकि जीतने वाला अपनी जीत में ऐसा खो जाता है कि वह सच्चे जीवन से दूर हो जाता है। अगर इंसान इस सच्चाई को समझ

ले, तो वह कभी निराश नहीं होगा। वह नाकामी के बाद मायूस नहीं होगा, चाहे उसकी हार देखने में कितनी ही बड़ी क्यों न हो।

यह दुनिया हार के बाद जीत और जीत के बाद हार का मैदान है। इस दुनिया में असली कामयाब खिलाड़ी वही होता है जो पूरे खेल पर नज़र बनाए रखता है — न कि सिर्फ हार और जीत में उलझकर रह जाता है।

यह जान लें कि हार एक आंशिक घटना है, हार बर्बादी नहीं। हार आपको बाहर की चीज़ों से वंचित करती है। वह आपके अन्दर की चीज़ों को आपसे नहीं छीनती। आप अपने अन्दर की चीज़ों को लेकर दोबारा नई कामयाबी प्राप्त कर सकते हैं।

प्रारंभ और अंत

अगर यदि आप अपने आरंभ को जान लें, तो अंत तक पहुँचना भी आपके लिए संभव हो जाता है। क्योंकि सही आरंभ ही अंत की सफलता की बुनियाद होता है। जब कोई इंसान सही दिशा में अपने सफ़र की शुरुआत करता है, तो मंज़िल तक पहुँचना तय हो जाता है। असफलता तब आती है जब सफ़र की शुरुआत ही ग़लत दिशा में होती है।

इस कायनात की पूरी रचना ही ऐसी है कि जब भी कोई इंसान किसी सही काम की शुरुआत करता है, तो पूरी प्रकृति उसके उस कार्य को पूरा करवाने में मददगार बन जाती है। जैसे माली जब ज़मीन में एक बीज बोता है, तो प्रकृति की सारी शक्तियाँ उसे पेड़ बनाने में लग जाती हैं — यहाँ तक कि वह बीज एक पूर्ण वृक्ष बनकर खड़ा हो जाता है।

ठीक इसी तरह इस दुनिया में जब कोई आदमी एक सही काम की शुरुआत करता है तो दुनिया की पूरी व्यवस्था उसकी मदद को आ जाती है। हर चीज़ उसका साथ देने लगती है ताकि वह अपने अमल को उसकी

मंज़िल के मरहले तक पहुँचा सके। अगर कोई व्यक्ति देखे कि उसका आरम्भ किया हुआ अमल प्रगति नहीं कर रहा है तो उसको स्वयं अपनी कारगुज़ारी और अपनी योजना पर विचार करना चाहिए। यकीनी रूप से उसकी अपनी ही कोई कोताही होगी, जिसने उसके शुरू किए हुए अमल को अपेक्षित मंज़िल तक पहुँचने नहीं दिया।

हर व्यक्ति को चाहिए कि काम करने से पहले वो ख़ूब अच्छी तरह सोच ले। वह यथार्थ के गहन अवलोकन के बाद अपनी योजना बनाए। और जब अपनी योजना पर अमल करना शुरू करे तो अपने आप को उसमें लगाने में कोई कमी न करे। आदमी ने अगर इन शर्तों को पूरा कर दिया तो उसके बाद भविष्य में जो चीज़ सामने आएगी वह वही होगी जिसकी तलब वह अपने सीने के अन्दर लिए हुए है। डोर के आरम्भिक सिरे को पाना ही डोर के आख़िरी सिरे को पा लेना है। डोर के आरम्भिक सिरे को मज़बूती से थाम लीजिए। उसके बाद डोर का आख़िरी सिरा भी आपके हाथ में आकर रहेगा। वह आपसे अलग होने वाला नहीं। सही समापन के सिवा सही आरम्भ की और कोई मंज़िल नहीं।

रास्ते बन्द नहीं

प्रकाश इस ब्रह्मांड का सबसे तेज़ सफ़र करने वाला मुसाफ़िर है। एक सेकंड में वह 186,000 मील से भी अधिक की दूरी तय कर सकता है। लेकिन वो हमेशा एक ही दिशा में चलता है। यदि सूरज की किरणें आपके कमरे की खिड़की से आ रही हैं और खिड़की बंद हो जाती है, तो वह किरणें मुड़ कर दरवाजे से अंदर नहीं आ सकतीं। वे केवल खिड़की से टकरा कर वहीं रुक जाएँगी और किसी अन्य रास्ते को नहीं अपनाएँगी।

पानी का मामला इससे भिन्न है। वह एक तरफ़ रास्ता बन्द देखता है तो दूसरी तरफ़ से अपना निकास पैदा कर लेता है। अगर आप किसी पहाड़ के ऊपर खड़े हों और वहाँ से एक ऐसे चश्मे को देखें जो ऊपर से नीचे की तरफ़ बह रहा हो, तो हो सकता है कि आप को नज़र आए कि चश्मा जिधर बहकर जा रहा है उसके ठीक आगे उस दायरे में फैली हुई एक चट्टान है। देखने में आपको ख़्याल आ सकता है कि यह बड़ी चट्टान चश्मे का रास्ता रोक देगी। मगर बहुत जल्द आपका यह भ्रम समाप्त हो जाएगा। जब आप देखेंगे कि चट्टान के पास पहुँचकर पानी अपने दाएँ-बाएँ मुड़ने लगा। यहाँ तक कि चट्टान के दोनों किनारों को पार करके वह आगे की ओर निकल गया।

मनुष्य की मिसाल इस मामले में रोशनी की नहीं, पानी की है। इंसान का इरादा एक ऐसा सैलाब है जिसको कोई चीज़ रोक नहीं सकती। जीवन के सफ़र में कोई ऐसा मक़ाम नहीं, जहाँ हकीकत में इंसान का रास्ता रुकता हो। जहाँ एक रास्ता देखने में बन्द नज़र आए वहाँ दूसरे बहुत-से रास्ते खुले हुए होंगे।

निस्सन्देह एक नासमझ व्यक्ति यह कर सकता है कि सामने का रास्ता बन्द देखकर निराश हो जाए या इसी से टकरा कर अपनी जान दे दे। मनुष्य को प्रकाश की तरह नहीं, पानी की तरह लचीलापन अपनाना चाहिए — जहां एक रास्ता बंद हो, वहां दूसरे रास्ते खोजने की बुद्धिमानी होनी चाहिए। बंद राहें स्थायी नहीं होतीं, समझदारी से हर रुकावट पार की जा सकती है।

अपने हक के अनुसार

हक़ से ज़्यादा चाहना, असल में अपने असली हकों से भी हाथ धो बैठना है। जब कोई इंसान सिर्फ़ अपने हिस्से का ही हक़ चाहता है, तो पूरी दुनिया की व्यवस्था उसका साथ देती है। लेकिन जब वह अपने हक़ से ज़्यादा की

चाह रखता है, तो यह व्यवस्था उसका साथ छोड़ देती है। यही कारण है कि पहला इंसान कामयाब होता है और दूसरा नाकाम।

जब आप अपने हक़ के मुताबिक़ कुछ चाहते हैं, तो आप वही चीज़ मांगते हैं जो वास्तव में आपकी है और जो इंसाफ़ के नज़रिये से आपको ही मिलनी चाहिए। लेकिन जब आप अपने असली हक़ से ज़्यादा चाहने लगते हैं, तो आप मानो किसी ऐसी चीज़ की चाह रखते हैं जो सही मायनों में आपकी नहीं, बल्कि किसी और की है। ऐसे में दूसरा आदमी आपको अपनी चीज़ क्यों देगा? जैसे ही इंसान अपने हक़ से ज़्यादा की चाह करता है, वह तुरंत दूसरों से टकराने लगता है। दूसरे लोग उसकी राह में रुकावट बन जाते हैं। और फिर शुरू होती है खींचातानी, ज़िद और टकराव। इन सबके नतीजे में अक्सर ऐसा होता है कि इंसान ज़्यादा पाने की चाह में अपना असली हिस्सा भी खो बैठता है।

जैसे ही कोई अपने हक़ से ज़्यादा चाहता है, वह भ्रम का शिकार हो जाता है। वह अपने हिस्से की चीज़ के लिए एक तर्क देता है और किसी और के हिस्से पर कब्जा करने के लिए कोई और तर्क गढ़ता है। इस तरह वह अपने ही तर्कों से अपना मामला कमज़ोर बना लेता है। वह खुद ही अपने को झुठलाने लगता है। दो अलग-अलग दलीलों से वह खुद ही साबित कर देता है कि अगर पहली चीज़ उसकी है, तो दूसरी नहीं हो सकती, और अगर दूसरी उसकी है, तो पहली उसकी नहीं हो सकती।

इस व्यक्ति की मिसाल ऐसी ही है जैसे वो दो ख़रगोशों के पीछे दौड़े, वह एक को भी नहीं पकड़ सकता। इसी तरह जो व्यक्ति अपने असल अधिकार के साथ और अधिक का इच्छुक बने, वह असल को भी खो देगा और इसी के साथ और अधिक को भी।

इंसान की पूरी तारिख, एक तरह से, इसी हकीकत का व्यावहारिक प्रदर्शन है।

संभावनाओं का अंत नहीं

किसी व्यक्ति के हाथ से अवसर निकल तो सकते हैं, मगर वो समाप्त नहीं होते — यह इस दुनिया की एक ऐसी सीख है जो मानो हर कण और हर पत्ती के ज़रिए रोज़ दिखाई देती है।

यह दुनिया किसी इंसान की बनाई हुई नहीं है, बल्कि उस ख़ुदा ने बनाई है जिसकी ताक़तें असीम हैं। अगर इसे कोई इंसान बनाता, तो इसकी संभावनाएँ भी सीमित होतीं। लेकिन जब इसे असीम सामर्थ्य रखने वाले ईश्वर ने बनाया है, तो इसकी संभावनाएँ और अवसर भी अंतहीन हैं।

कितने ही अवसर आपके हाथ से निकल जाएँ, कितनी ही अधिक सम्भावनाओं को आप खो दें, फिर भी आपको निराश होने की ज़रूरत नहीं। क्योंकि हमेशा और अधिक सम्भावनाएँ और अवसर आपके लिए मौजूद होंगे जिनको इस्तेमाल करके आप अपने भविष्य का निर्माण कर सकेंगे।

जब अवसर समाप्त होने वाले न हों तो किसी अवसर के निकल जाने पर अफ़सोस करना केवल बेख़बर आदमी का काम हो सकता है। जब एक सवारी छूटकर दूसरी सवारी मिलने वाली हो तो मुसाफ़िर उस सवारी का दुख नहीं करता जो चली गई, बल्कि अगली सवारी का इन्तिज़ार करता है ताकि उसमें बैठकर अपना सफ़र जारी रख सके।

वर्तमान संसार में असल अहमियत इस बात की नहीं कि कोई अवसर आपके हाथ से निकल गया। असली बात यह है कि जो दूसरे मौके अब भी मौजूद हैं, क्या आपने उन्हें पहचाना या नहीं — और क्या आपने उन्हें अपनाकर अपने जीवन को फिर से सफल बनाने की भावना अपने भीतर जगाई या नहीं। अगर यह दूसरी बात पूरी हो जाए, तो पहली बात की चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं रहती।

जीवन का नाम ही है — एक अवसर को खोकर दूसरे अवसर को अपनाने की यात्रा। यही रास्ता उन सभी लोगों ने अपनाया है जो कामयाब हुए हैं, और यही रास्ता आपके लिए भी कामयाबी की ओर ले जाने वाला है। सफलता का कोई और शॉर्टकट न पहले किसी के लिए था, और न ही आपके लिए है।

यह बात उस सर्वशक्तिमान की शान के ख़िलाफ़ जाती है कि वह ऐसी दुनिया बनाए जिसमें मौके इतने सीमित हों कि एक बार चूकने के बाद कोई और अवसर फिर बचा ही न हो।

उजाले की आस

हर शाम के बाद एक नई सुबह ज़रूर आती है। लेकिन यह नई सुबह केवल उसी को नसीब होती है जो उसके आने तक सब्र के साथ उसका इंतज़ार करता है। इस दुनिया में उजाला अपने समय पर आता है, मगर अक्सर लोग उस उजाले के इंतज़ार में धैर्य नहीं रखते। इंसान की सबसे बड़ी कमज़ोरी है — अधीरता। वह कठिन हालात को देखकर जल्दी घबरा जाता है। वह यह भूल जाता है कि रात और दिन की व्यवस्था रोज़ाना उसे यह सबक दे रही है कि रोशनी ज़रूर आएगी — कोई अँधेरा इतना लंबा नहीं होता जो सुबह के उजाले को रोक सके।

इस दुनिया में कड़वे अनुभव भी होते हैं, लेकिन अगर इंसान उन कड़वाहटों को सह ले, तो समय के साथ मिठास भी ज़रूर आती है। यहाँ इंसान को नाकामी का भी सामना करना पड़ता है, लेकिन हर नाकामी स्थायी नहीं होती। अगर कोई व्यक्ति इस अस्थायी नाकामी को धैर्यपूर्वक सह ले, तो वह समय ज़रूर आता है जब वही व्यक्ति सफलता की बुलंदी तक पहुँचता है।

मौजूदा दुनिया में किसी भी चीज़ में ठहराव नहीं है। इसी तरह, यहाँ कामयाबी और नाकामी में भी कोई ठहराव नहीं। यहाँ हर नाकामी के बाद कामयाबी है और हर कामयाबी के बाद नाकामी। इसलिए आदमी को चाहिए कि कामयाबी आए तब भी वह सन्तुलन पर कायम रहे, और नाकामी का अनुभव हो तब भी वह सन्तुलन को न खोए।

सुबह जैसे अपने आप आ जाती है, उसी तरह इस दुनिया में नाकामी के बाद कामयाबी भी स्वतः आती है। इंसान को सिर्फ़ इतना करना होता है कि वह प्रतीक्षा का साहस बनाए रखे। इस दुनिया में हर नाकामी का केवल एक अस्थायी दौर होता है, और हर कामयाबी भविष्य की एक निश्चित घटना होती है।

जैसे शाम का आना तय है, वैसे ही शाम के बाद सुबह का आना भी निश्चित है। ऐसी दुनिया में मायूसी की कोई गुंजाइश नहीं है। जब पूरी कायनात की व्यवस्था खुद आपके साथ हो, तो फिर किसी और से डरने या घबराने की कोई ज़रुरत नहीं रह जाती।

अत्यधिक कठिन, अत्यधिक सरल

"ग़लती तुम्हारी है" और "ग़लती मेरी है" इन दोनों वाक्यों में एक छोटा सा फर्क है, जो देखने में मामूली लगता है, लेकिन असल में दोनों के बीच अंतर बहुत गहरा है। पहला वाक्य कहने वाले लाखों लोग होंगे, लेकिन दूसरा वाक्य कहने वाला शायद ही कोई होगा।

इसका कारण यह है कि पहला वाक्य किसी और की गलती मानता है, जबकि दूसरा वाक्य अपनी ही गलती को स्वीकार करता है। दूसरों की गलती को मानना बहुत आसान होता है, लेकिन अपनी ही गलती को स्वीकारना बेहद कठिन।

वर्तमान दौर के वे तमाम संगठन, जिनके गिर्द इंसानों की भीड़ दिखाई देती है, वे सब वही संगठन हैं जो 'तुमने गलती की' के नारे पर उठे। तमाम परिचित संगठनों और तमाम बड़े-बड़े लीडरों की लोकप्रियता का एकमात्र रहस्य यह है कि वे बाहर के किसी व्यक्ति या क़ौम को ग़लत साबित करने के लिए उठे। यदि वे स्वयं को नकारने का संदेश लेकर खड़े होते, तो अपने ही परिवेश में अजनबी बन जाते — उनके चारों ओर लोगों की भीड़ इकट्ठा न होती।

"ग़लती तुम्हारी है" एक झूठा वाक्य है और "ग़लती मेरी है" एक सच्चा वाक्य। ख़ुदा का क़ानून यह है कि इस दुनिया में झूठा वाक्य जड़ न पकड़ सके, वह झाड़-झंखाड़ बनकर रह जाए। इसके विपरीत जो वाक्य सच्चा वाक्य हो, वह ख़ुदा की इस दुनिया में जड़ पकड़ता है। वह ज़मीन में भी अपनी जगह हासिल करता है और आसमान की व्यापकता में भी।

"ग़लती मेरी है" पहचान का वाक्य है। वह आदमी के व्यक्तित्व में प्रगति पैदा करता है। वह आदमी को सामान्य हालत से उच्च हालत की तरफ़ ले जाता है। इसके विपरीत "ग़लती तुम्हारी है" एक साधारण वाक्य है। वह आदमी को गहरे अर्थों से अवगत नहीं कराता। वह आदमी को एक ऐसे काम में व्यस्त कर देता है जो सिरे से करने का कोई काम ही नहीं। "ग़लती मेरी है" सुधार है और "ग़लती तुम्हारी है" विनाश। "ग़लती मेरी है" ईश्वरवादी है और "ग़लती तुम्हारी है" भौतिकवादी। "ग़लती मेरी है" एक भलाई है और "ग़लती तुम्हारी है" केवल लीडरी। "ग़लती मेरी है" दीनदारी है और "ग़लती तुम्हारी है" दुनियादारी।

विनाश की ओर पहला क़दम

प्राचीन एथेन्स का एक प्रसिद्ध ट्रेजिडी लेखक यूरोपिडीज (Euripides) था। उसका जन्म 484 ईसा पूर्व में हुआ और कम उम्र में ही 406 ईसा पूर्व में उसकी मृत्यु हो गई। उसके एक प्रसिद्ध कथन का अनुवाद इस तरह किया गया है:

> "Whom God wishes to destroy, He first makes mad."
> (*Messalina*- by Vivian Crockett, 1924, p. 117)

> "जिसे अल्लाह तबाह करना चाहता है, सबसे पहले उसे दीवाना बना देता है।"

यह बात बिल्कुल सच प्रतीत होती है। इसे दूसरे शब्दों में यूँ भी कहा जा सकता है कि जब किसी व्यक्ति या क़ौम के पतन की शुरुआत होती है तो उसकी सोचने-समझने की क्षमता बिगड़ जाती है। और जब सोचने की क्षमता बिगड़ती है तो उसके कार्य भी गलत हो जाते हैं। और जो लोग गलत कार्य करने लगें, उनको फिर कोई चीज़ तबाही से नहीं बचा सकती।

सूझ-बूझ का बिगड़ना क्या है ! वह यह है कि आदमी अक्ल की रोशनी में राय क़ायम करने के बजाए भावना के अनुसार राय कायम करने लगे। वह अपने जीवन की योजना तथ्यों की व्याख्या करते हुए न बनाए, बल्कि अपनी इच्छाओं के अधीन बनाए। वह आस-पास के दूसरे लोगों से बेख़बर हो जाए और केवल अपने-आप में जीना शुरू कर दे। वह ऐतिहासिक शक्तियों और भौतिक कारणों की अवहेलना कर दे और केवल अपनी कल्पनाओं की दुनिया में अपना महल बनाने की कोशिश कर रहा हो।

यह दुनिया कारणों और वास्तविकताओं की दुनिया है। यहाँ एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के बीच, और एक समुदाय और दूसरे समुदाय के बीच बराबर मुक़ाबला होता रहता है। यहाँ किसी को भी ज़िंदगी में आगे बढ़ने और सफल होने का हक़ तभी मिलता है जब वह अपनी समझ और योग्यता का ठोस सबूत पेश करे। इस दुनिया में वही लोग सबसे ज़्यादा कामयाब होते हैं जो अपनी अक़्ल का सही और भरपूर इस्तेमाल करते हैं, जो अपने विवेक से ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठाते हैं।

अगर कोई व्यक्ति बहुत लंबे समय तक आराम और सुविधा में रहे तो उसकी सोचने-समझने की शक्ति धीमी पड़ जाती है। अगर कोई क़ौम लंबे अरसे तक सत्ता में बनी रहे तो एक समय के बाद उसकी बौद्धिक क्षमताएँ भी सुस्त पड़ जाती हैं। यही वह समय होता है जब व्यक्ति या समुदाय बौद्धिक रूप से पतन की ओर बढ़ने लगते हैं। और बौद्धिक पतन धीरे-धीरे व्यवहारिक पतन का कारण बन जाता है।

ऐसे हालात में ज़रूरत होती है कि उस व्यक्ति या समाज की बौद्धिक क्षमता को दोबारा जागरूक किया जाए — ताकि उस की रोशनी में वे आगे का रास्ता तय कर सकें और फिर से तरक्की के क़ाबिल बन सकें।

पौधे की मिसाल

प्रकृति की दुनिया में जो उदाहरण दिए गए हैं, उनमें से एक है — पौधे का उदाहरण। एक खुले मैदान में एक पौधा उगता है। वह अपने मुलायम तने पर खड़ा रहता है। जब तेज़ हवा उसके पास से गुज़रती है, तो पौधा क्या करता है?

अगर हवा पश्चिम की ओर से आती है, तो पौधा पूरब की ओर झुक जाता है। लेकिन जैसे ही हवा गुज़रती है, वह फिर से सीधा होकर अपने

स्थान पर खड़ा हो जाता है। उसी तरह अगर हवा पूरब की ओर से आती है, तो वह पश्चिम की ओर झुक जाता है। और हवा गुज़र जाने के बाद फिर पहले की तरह सीधा खड़ा हो जाता है।

पौधे का यह नमूना सिखाता है कि, "लचक और समय की नज़ाकत को समझना ही टिकाव की असल कुंजी है।"

मुलायम पौधा ऐसा नहीं करता कि वह हवा के मुकाबले में अकड़ दिखाए। अगर वह अकड़ दिखाने लगे और झुकने से इंकार कर दे तो उसका नुक्सान हवा को नहीं पहुँचेगा, बल्कि स्वयं पौधा अपनी अकड़ का शिकार हो जाएगा। हवा निरन्तर माहौल में चलती रहेगी, जबकि पौधा अपनी अकड़ की बुनियाद पर टूट या गिर कर समाप्त हो जाएगा।

पौधे का यह उदाहरण प्रकृति का एक पाठ है जो इंसान को दिया जाता रहा है। इस मिसाल के द्वारा इंसान को बताया जाता रहा है कि तुम जिस दुनिया में हो, वहाँ हवाओं के झोंके हैं और तूफ़ानों के थपेड़े। इनके मुकाबले में तुम बहुत कमज़ोर हो। तुम्हें इन झोंकों और थपेड़ों के मुकाबले में नर्मी और सहमति का तरीका अपनाना होगा। तुम्हारी रविश यह होनी चाहिए कि अपनी असल इंसानी हैसियत को बाकी रखते हुएआंशिक रूप में हालात से समझौते का तरीका अपनाया करो। सख़्ती के साथ नर्मी को भी अपने जीवन का एक उसूल बनाओ।

पौधे का हवा के मुकाबले में झुक जाना इसलिए होता है ताकि वह तूफ़ान का मुक़ाबला करके भी ज़िंदा रहे और अपनी बढ़त के सफ़र को जारी रख सके — यहाँ तक कि एक दिन वह एक मजबूत पेड़ बन जाए।

इसी तरह, इंसान जब नरमी और समझौते का रवैया अपनाता है, तो उसका मकसद यह होता है कि उसके जीवन की राह में कोई रुकावट न आए। उसका सफ़र बिना टूटे चलता रहे — और वह आख़िरकार अपनी मंज़िल तक पहुँच सके।

इरादे की मज़बूती

‘यक दर गीर व महकम गीर’, यानी एक दरवाज़े को पकड़ो और वहीं मजबूती से जमे रहो—यह फ़ारसी की एक कहावत है। यह प्रकृति का एक क़ानून भी है, जो जीवन के हर क्षेत्र में लागू होता है। जैसे आप एक पौधा ज़मीन में लगाते हैं और बार-बार उसकी जगह बदलते रहते हैं, तो वह कभी भी एक बड़ा पेड़ नहीं बन सकता। जब भी आप उसे खोदकर निकालते हैं, उसकी जड़ें कट जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप पौधा इतनी मजबूती से जड़ें नहीं जमा पाता और वह धीरे-धीरे बढ़ने में असमर्थ हो जाता है।

एक आदमी प्राइवेट नौकरी में है। वह अगर ऐसा करे कि आए दिन एक जगह को छोड़कर दूसरी जगह जाए, तो वह लोगों की नज़र में हमेशा महत्त्वहीन बना रहेगा। अगर वह एक जगह वफ़ादारी के साथ रहता, तो वहाँ उसको सम्मान मिलता। अपने अमल से वहाँ वह अपने मालिक का दिल जीतता और फिर उसको प्रगति का दर्जा मिलता। लेकिन जगह बदलने की सूरत में वह हमेशा परेशान रहेगा। वह अपने लिए एक भरोसे योग्य जीवन बनाने में कामयाब नहीं होगा। इस दुनिया में दृढ़ता के बिना कोई कामयाबी सम्भव नहीं।

अगर एक डॉक्टर बार-बार अपने क्लीनिक की जगह बदलता है, या एक दुकानदार हमेशा अपनी दुकान बदलता रहता है, तो न वह डॉक्टर कभी सफल होगा और न ही वह दुकानदार। दोनों को अंत में प्रगति से वंचित होना पड़ेगा।

जब कोई व्यक्ति समाज में रहता है, तो वह अपने आचरण से एक इतिहास बनाता है। यह इतिहास हर इंसान की सबसे बड़ी धरोहर होता है। अगर आपका इतिहास यह बन जाए कि आप कभी झूठ नहीं बोलते, वादाखिलाफी नहीं करते, बेईमानी नहीं करते, किसी के साथ गलत व्यवहार

नहीं करते, अपने सिद्धांतों से कभी समझौता नहीं करते, और जो भी काम करते हैं, जिम्मेदारी से करते हैं, तो यही आपकी सबसे बड़ी धरोहर होगी।

लेकिन यह छवि तभी बनेगी जबकि आप एक जगह देर तक ठहरें। अगर आप बार-बार जगह बदलें तो लोगों की नज़र में आपकी छवि भी नहीं बनेगी। आप लोगों का विश्वास हासिल न कर सकेंगे और उच्च पद के स्थान तक पहुँचने में कभी कामयाब न होंगे।

जीवन एक संघर्ष

ज़िन्दगी एक मुसलसल संघर्ष है। इस संघर्ष में वही व्यक्ति कामयाब हो सकता है जिसके अन्दर यह हौसला हो कि वह स्वेच्छा को ही अपना उद्देश्य बना सके।

मनुष्य सीमाओं के बोध के बावजूद एक ऐसा प्राणी है जो अंतहीन इच्छाओं और अनगिनत आकांक्षाओं को अपने अन्दर समेटे हुए है। उसकी योग्यताएँ और हिम्मत अनंत सीमा तक विस्तृत होती हैं। यही कारण है कि जब वह जीवन के संघर्ष में शामिल होता है, तो उसे यह विशाल दुनिया भी संकीर्ण लगने लगती है। हर उपलब्धि उसे अधूरी लगती है और हर लाभ उसे यह एहसास दिलाता है कि वह जो चाहता था, वह पूरी तरह से हासिल नहीं कर पाया।

ऐसी स्थिति में सफलता का असली राज़ क्या है? अगर हम सफलता को इस रूप में परिभाषित करें कि व्यक्ति जो भी चाहता है, वह पूरी तरह से प्राप्त कर ले, तो अनुभव यह बताते हैं कि इस दुनिया में इस तरह की प्राप्ति असंभव है। अगर हम सफलता को केवल अपनी इच्छाओं को पूरी तरह से प्राप्त करने के रूप में मानें, तो अंततः यही सोच निराशा और खालीपन की

ओर ले जाती है। ऐसी सोच रखने वाले व्यक्ति के पास दो ही विकल्प होते हैं— निराशा या आत्महत्या।

हक़ीक़त यह है कि मौजूदा दुनिया में कामयाब जीवन का रहस्य केवल एक है और वह यह कि मंज़िल के बजाए स्वयं की इच्छा को अपना उद्देश्य बनाया जाए। इंसान अपने अन्दर जिस इच्छा को प्रतीत करता है वास्तव में वह सत्य की इच्छा है।

वर्तमान संसार में वही व्यक्ति कामयाब है जो सत्य को पहचान, सत्य को अपना लक्ष्य बना सके, जो वास्तव में जीने का रहस्य पा ले। इसके विपरीत जो लोग केवल दुनिया की रंगीनी को अपनी इच्छा बनाएँ, वे कभी सन्तुष्ट नहीं हो सकते। इस दुनिया का उसूल यह है— जितना बड़ा लक्ष्य, उतनी बड़ी प्रगति।

बैलेंस बनाए रखें

एक खेल है, जिसे टाइट रोप वॉकिंग (tight-rope walking) कहा जाता है। इसमें दो खम्भे मैदान में गाड़े जाते हैं और उनके ऊपर एक मोटी रस्सी तान दी जाती है। फिर एक लड़का उस रस्सी पर पाँव रखकर खड़ा हो जाता है। उसके दोनों हाथों में एक लम्बा बाँस होता है, जिससे वह अपना संतुलन बनाए रखते हुए तनी हुई रस्सी पर चलता है, और धीरे-धीरे एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुँच जाता है।

यह केवल टाइट रोप वॉकर की स्थिति नहीं है, बल्कि इस दुनिया में हर इंसान को ऐसा ही करना पड़ता है। जब कोई आदमी ज़मीन पर चल रहा होता है, तो वह भी जैसे टाइट रोप वॉकर की तरह ही संतुलन बनाए रखता है। अगर वह दाईं ओर थोड़ा सा भी झुके, तो वह बाईं ओर गिर सकता है।

और अगर बाईं ओर झुके तो वह दाईं ओर गिर जाएगा। इंसान दोनों तरफ संतुलन बनाकर ही अपने रास्ते पर चलता है, तभी वह सफलता प्राप्त कर पाता है, वरना वह गिर कर इधर-उधर पड़ा रहेगा।

यही मामला पूरे जीवन का है। इस दुनिया में इंसान का पूरा जीवन टाइट रोप वॉकिंग का जीवन है। यहाँ उसे विभिन्न और अनेक तक़ाज़ों के बीच सन्तुलन स्थापित करते हुए चलना पड़ता है। इसी सन्तुलन को स्थापित रखने का नाम कामयाबी है और इसी सन्तुलन के बिगड़ जाने का नाम नाकामी।

पारिवारिक जीवन में मनुष्य को विभिन्न रिश्तेदारों के बीच सन्तुलन स्थापित करना पड़ता है। समाजी जीवन में आदमी को विभिन्न समूहों के बीच सन्तुलन स्थापित करना पड़ता है। अन्तरराष्ट्रीय जीवन में लीडरों को विभिन्न देशों और विभिन्न हुकूमतों के बीच सन्तुलन स्थापित करना पड़ता है। सन्तुलन के इस मसले से मानव जीवन का कोई भी स्थल ख़ाली नहीं।

अपने जीवन में इस संतुलन को सफलता के साथ बनाए रखने के लिए यह जरूरी है कि इंसान सोच-समझकर जीवन बिताए। वह हर पल सतर्क रहे। वह हर पल अपने कर्मों का हिसाब रखे। उसे अपनी नफ्सी और व्यक्तिगत पक्षपाती प्रवृत्तियों से बाहर आकर जीना सीखना होगा। उसे अपनी जाति, धर्म या पहचान का सम्मान करने के साथ-साथ दूसरों का भी सम्मान करना चाहिए। जो लोग इस तरह का संतुलित और दोनों पक्षों को समझने वाला जीवन जीते हैं, वही इस दुनिया में सफलता प्राप्त करते हैं।

कठिनाइयाँ उन्नति की सीढ़ी

मनुष्य प्रकृति का छिपा हुआ खज़ाना है। कठिनाइयाँ और समस्याएँ उस खज़ाने को बाहर लाने का काम करती हैं। इतिहास से यह बात सिद्ध हो चुकी

है कि वही लोग सबसे अधिक उभरे हैं जिन्होंने सबसे अधिक कठिनाइयों का सामना किया।

जब बीज फटता है तो उसके अंदर से एक विशाल पेड़ उभरता है। यही इंसान के व्यक्तित्व के साथ भी होता है। जब किसी इंसान पर हालात का दबाव पड़ता है, तो उसके अंदर की शक्तियाँ और क्षमताएँ बाहर आकर उसे मजबूत बनाती हैं। वह चीज़ जो पहले केवल 'बीज' के रूप में छिपी हुई थी, वह अब 'पेड़' के रूप में सामने आ जाती है।

मनुष्य दो प्रकार के होते हैं। एक वे, जो मुश्किल को केवल मुश्किल समझें। दूसरे वे, जो मुश्किल को चैलेंज की नज़र से देखें। मुश्किल को मुश्किल समझना निराशा की सोच पैदा करता है। और मुश्किल को चैलेंज समझने से यह सोच पैदा होती है कि उसका सामना किया जाए।

अगर आप मुश्किल को केवल मुश्किल समझें तो आपकी मौजूदा क्षमताएँ भी मुरझा जाएँगी। आपके सोचने की ताकत कमज़ोर हो जाएगी। मगर जब आप मुश्किल को चैलेंज समझें तो आपके अन्दर नई हिम्मत जागती है। आपका ज़ेहन पहले से अधिक काम करने लगता है। आपको नई-नई तदबीरें सूझती हैं जिनको इस्तेमाल करके आप आगे बढ़ सकें।

अगर किसी मनुष्य को केवल आसानियाँ पेश आएँ तो वह सीमित होकर रह जाता है। उसकी सोच में उभार नहीं आता। मगर जिस आदमी को मुसीबतों और दुश्वारियों का सामना करना पड़े, वह असीमित इंसान बन जाता है। उसकी सोच में गहराई पैदा हो जाती है।

कठिनाई एक शिक्षक की तरह होती है। कठिनाईयों के ज़रिए ही इंसान उन चीज़ों को जान पाता है, जिन्हें किसी स्कूल में नहीं सिखाया जा सकता। परेशानियाँ आदमी के ज्ञान में अनुभव को जोड़ती हैं। ये परेशानियाँ किसी सुनी या पढ़ी हुई बात को इंसान के व्यक्तिगत ज्ञान में बदल देती हैं। जीवन की मुश्किलें, जीवन की सीढ़ियाँ होती हैं। इनका उद्देश्य आपको नीचे

से ऊपर की ओर ले जाना है, ताकि ये आपके छुपे हुए खजाने को उजागर करें और आपको उसका मालिक बना दें।

नई सुबह

इस दुनिया में कोई भी डूअस्त हमेशा के लिए नहीं होता। हर अस्त के बाद एक नई शुरुआत ज़रूर होती है — बस शर्त यह है कि इंसान में शाम को दोबारा सुबह में बदलने का हौसला होना चाहिए। इस दुनिया की सबसे बड़ी घटना हर दिन सूरज का डूबना और फिर उसका फिर से निकलना है। यह घटना हमें एक सबसे बड़ी सच्चाई बताती है, वो यह कि हर हार के बाद जीत भी आती है, और हर खोने के बाद कुछ पाने का समय भी आता है।

हम जिस दुनिया में रहते हैं, उसका मालिक कोई इंसान नहीं, बल्कि वही अल्लाह है — जो हर ताक़तवर से ज़्यादा ताक़त रखता है। जब कोई व्यक्ति आपको कुछ देने से इंकार कर देता है, या जब परिस्थितियों की कोई तेज़ आंधी आपके चिराग को बुझा देती है, तो वही अल्लाह यह कह रहा होता है — मेरी बनाई इस दुनिया में हर वंचित को एक और अवसर मिलता है, और हर बुझा हुआ चिराग दोबारा रौशनी से भर उठता है।

अपने भीतर की ईश्वरीय सम्भावना को साकार करने की शर्त केवल एक है। वह यह कि आदमी अपनी कामयाबी की कोशिश के विफल होने के बाद अपनी हिम्मत को न खोए। वह हर गिरने के बाद दोबारा उठे, वह महरूमी के बाद दोबारा हासिल करने की कोशिश में लग जाए।

शाम के बाद दोबारा सुबह को लाने के लिए सृष्टि की शक्ति की ज़रूरत है। फिर जिस दुनिया में इतनी बड़ी घटना घटित हो, वहाँ यह बहुत छोटी घटना क्यों नहीं घटित होगी कि एक आदमी या एक गिरोह एक बार गिरने के बाद दोबारा उठ जाए।

ईश्वर ने यह तय कर दिया है कि किसी की हार उसके लिए आख़िरी हार न बने। ऐसे में हार के बाद हिम्मत हार जाना कोई समझदारी की बात नहीं। सच्चाई यह है कि इस दुनिया में इंसान को अपनी दोबारा मिलने वाली कामयाबी पर उतना ही यक़ीन होना चाहिए, जितना कि हर कोई शाम के बाद अगली सुबह सूरज के फिर से निकलने पर यक़ीन करता है।

अमूमन लोग सिर्फ़ 'जो हो चुका है' उसी को देखते हैं, लेकिन 'जो हो सकता है' उस पर उनका ध्यान नहीं जाता। यही वजह है कि वे अक्सर मायूसी के शिकार हो जाते हैं। अगर लोग इस दूसरी हक़ीक़त को भी समझ लें, तो वे कभी निराश न हों। क्योंकि इस दुनिया में निराशा क्षणिक है, जबकि उम्मीद हमेशा बाक़ी रहती है।

ज्ञान का संसार

अगर कसी व्यक्ति के पास कोई किताब है, तो वो कभी अकेला नहीं होगा। असल में अकेलापन उसी का होता है जिसके पास सोचने और मन को व्यस्त रखने का कोई साधन न हो। किताब इंसान को एक बेहतरीन मानसिक व्यस्तता देती है—ऐसी संगत जो न बोझ बनती है, न थकाती है। इसलिए जो व्यक्ति किताबों में डूबा हो, वह अकेला कैसे रह सकता है?

किताब क्या है? यह किसी लेखक के ज्ञान, अनुभव और सोच का निचोड़ होती है। हर किताब एक ख़ामोश साथी की तरह होती है। जब हम उसे पढ़ते हैं, तो ऐसा होता है जैसे हम लेखक से संवाद कर रहे हों। एक किताब पढ़ना एक समझदार इंसान की संगत पाना है, और बहुत-सी किताबें पढ़ना, बहुत-से बुद्धिमानों की संगत में जीना है।

हर व्यक्ति एक सीमित समय तक जीवन गुज़ार कर इस दुनिया से चला जाता है। यदि किताब जैसी चीज़ न होती, तो गुज़रे हुए लोगों की

ज़िंदगी और विचार हम तक पहुँचना असम्भव होता। मगर किताब के रूप में मनुष्य अपने अस्तित्व से आगे भी ज़िंदा रहता है। यह किताब ही है जो हमें एक जगह बैठे-बैठे दुनिया के कोने-कोने के लोगों से मिलवाती है, और हमें अपने युग की सीमाओं को पार कर हर युग के ज्ञान और अनुभव से जोड़ देती है।

का अध्ययन आदमी के ज्ञान को बढ़ाता है। उसके तजुर्बात को वैयक्तिक स्तर से बढ़ा कर सामान्य मानवता की सतह तक पहुँचा देता है। किताबों की लाइब्रेरी मानो ज्ञानात्मक मानव समूह है। इस सामूहिक स्थान में दाख़िल हो कर आप किसी भी समय, किसी भी आदमी की बात सुन सकते हैं, किसी भी जगह, किसी भी आदमी से मुलाकात कर सकते हैं।

पुस्तक ने यह मुमकिन बना दिया है कि बिना सफ़र किए आप दूसरों से परिचित हो सकें, और उसी तरह खुद को भी दूसरों से परिचित करवा सकें। असल मुलाक़ात का सबसे बड़ा कमरा वह होता है जहाँ किताबें मौजूद हों, और सच्चा परिचय उसी को हासिल होता है जो किताबों से लाभ उठा रहा हो। किताब बेहतरीन दिमागों का संग्रह है। यह ऊँचे दर्जे के इंसानों की प्रतिनिधि होती है। किताब ज्ञान का भंडार है — और इसमें कोई शक नहीं कि इस दुनिया में ज्ञान के खज़ाने से बढ़कर कुछ भी नहीं।

जीवन की गाड़ी कैसे चलाएँ

अगर आप सड़क पर अपनी गाड़ी चला रहे हैं और सामने से एक दूसरी गाड़ी आती दिखाई देती है तो आपके पास दो रास्ते हैं। एक यह कि आप पहले की तरह बीच सड़क पर अपनी गाड़ी चलाते रहें। दूसरा यह कि आप अपनी गाड़ी को थोड़ा किनारे की ओर मोड़ दें और सामने से आने वाली गाड़ी के पास से निकल जाएँ।

ऐसी स्थिति में आप क्या करते हैं? आप हमेशा यही करते हैं कि अपनी गाड़ी को एक तरफ़ मोड़ लेते हैं। अगर आप लगातार अपनी गाड़ी सीधी दिशा में चलाते रहें तो आपकी गाड़ी सामने से आने वाली गाड़ी से टकरा जाएगी। फिर नतीजा यह होगा कि आप मंज़िल तक पहुँचने के बजाय कब्रिस्तान पहुँच जाएँगे, या घायल होकर अस्पताल ले जाए जाएँगे। लेकिन जब आप समय रहते अपनी गाड़ी को एक ओर मोड़ देते हैं तो आप और आपकी गाड़ी, दोनों सुरक्षित मंज़िल तक पहुँच जाते हैं।

यही इस दुनिया में जीवन का रहस्य है। सड़क पर कोई सवारी अकेली नहीं होती, बल्कि उसके साथ और बहुत-सी सवारियाँ सड़क पर दौड़ रही होती हैं। इसलिए हर एक को दूसरे का ध्यान रखना पड़ता है। यही मामला स्पष्ट अर्थों में पूरे इंसानी जीवन का है। मौजूदा दुनिया में आप अकेले नहीं हैं, बल्कि बहुत-से दूसरे इंसान भी आबाद हैं। हर एक अपनी-अपनी गतिविधियों को पूरी ताक़त के साथ जारी किए हुए है। ऐसी हालत में व्यापक जीवन में भी कामयाबी का रहस्य वही है जो सीमित अर्थों में सड़क के सफ़र में अपनाया जाता है। अर्थात् दूसरों की रक्षा करते हुए अपने उद्देश्य के लिए संघर्ष करना।

जिस तरह आप अपनी भावना को समझते हैं, उसी तरह आपको दूसरों की भावना को भी समझना होगा। जिस तरह आप अपने इरादों को जानते हैं, वैसे ही आपको दूसरों के इरादों से भी परिचित होना पड़ेगा। जैसे आप अपना फायदा पाना चाहते हैं, वैसे ही आपको यह भी समझना होगा कि दूसरों के क्या हित हैं और वे उन्हें कैसे हासिल करना चाहते हैं। इस दुनिया में वही लोग सफल होते हैं जो खुद को जानने के साथ-साथ दूसरों को भी समझते हैं।

घरोंदे की मिसाल

जितनी देर में बच्चों का घरौंदा बनता है, उससे भी कम समय में वो टूट जाता है — यह एक मिसाल है जिससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि एक मजबूत और टिकाऊ जीवन क्या होता है, और वह जीवन कैसा होता है जो कमज़ोर बुनियादों पर खड़ा हो। जब बारिश और तूफान में कोई मकान गिरता है, तो असल में उसे बाहर का तूफ़ान नहीं गिराता, बल्कि उसकी अपनी कमज़ोरी ही उसे गिरा देती है। जब आँधियाँ उठती हैं, तो छप्पर उड़ जाते हैं, लेकिन पत्थर के बनाए हुए क़िले उसी आँधी में मजबूती से खड़े रहते हैं।

हर इंसान अपने कर्मों से अपने जीवन का निर्माण करता है। लेकिन निर्माण दो तरह के होते हैं — एक वो जिसमें गहरी मज़बूत बुनियाद होती है, और एक वो जिसमें सिर्फ़ ऊपर-ऊपर का ढाँचा खड़ा कर दिया गया होता है। ऐसा जीवन हमेशा जोखिम में रहता है। ज़रा-सा विरोध या हल्की सी मुसीबत भी उसे डगमगाने के लिए काफ़ी होती है। ऐसे जीवन के लिए ज़मीन पर न टिकाव होता है और न ही मज़बूती।

दूसरा जीवन वह है जो गहरी बुनियादों पर निर्मित किया जाए। जिसके तमाम अंश पक्के सामान से तैयार किए गए हों। ऐसे जीवन को कोई हिला नहीं सकता। विरोधियों का विरोध और दुश्मनों की साजिशें केवल उसकी मज़बूती को प्रमाणित करती हैं।

जैसा की मालूम है, कमज़ोर निर्माण में समय बहुत कम लगता है, इसलिए ज़्यादातर लोग उसी की ओर भागते हैं। लेकिन ऐसा निर्माण रोज़ गिरता है और रोज़ फिर से खड़ा किया जाता है। इसके विपरीत, जो निर्माण मज़बूत और गहरी बुनियादों पर खड़ा किया जाता है, वह एक बार बनने के बाद सदियों तक अपनी जगह अडिग खड़ा रहता है। अगर भविष्य की दृष्टि

से देखें, तो असल में सबसे कम समय मज़बूत निर्माण में ही लगता है — मगर अधिकतर लोग इस सच्चाई को जान नहीं पाते।

आपको अगर कुछ बनाना ही है, तो क़िला बनाइए, घरौंदा नहीं। क्योंकि जब आपका निर्माण क़िले जैसा होगा, तब आपको किसी के ज़ुल्म या हमले की शिकायत करने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। कोई अत्याचारी उसे गिराने की हिम्मत भी नहीं कर पाएगा। और अगर किसी ने ऐसा करने की कोशिश की भी, तो उसका अपना सिर ज़रूर टूटेगा — लेकिन आपका क़िला सलामत रहेगा।

सब्र बहादुरी है

सब्र करना बहादुरी है, और बेसब्री कायरता। जो लोग सब्र करने को तैयार नहीं होते, उन्हें अंततः कायर बनकर इस दुनिया में जीना पड़ता है। और कायरता का दूसरा नाम है — समझौता। ऐसा समझौता जो किसी मज़बूत सिद्धांत पर नहीं, बल्कि डर और कमजोरी पर टिका हो — और नैतिक रूप से इससे बुरा कोई दोष नहीं हो सकता।

इस दुनिया की प्रकृति ही ऐसी है कि बार-बार ऐसी स्थितियाँ आती हैं, जब एक इंसान को दूसरे से कोई शिकायत होती है — कभी मानसिक तकलीफ़, कभी शारीरिक चोट। यह टकराव की स्थिति इस दुनिया की एक अनिवार्य हक़ीक़त है। इंसानी इतिहास की शुरुआत से ही, जब हाबील और क़ाबील के बीच संघर्ष हुआ, तब से लेकर हर दौर में — यहाँ तक कि पैग़म्बरों के युग में भी — यह सिलसिला जारी रहा है। और यह तब तक चलता रहेगा, जब तक यह दुनिया ख़त्म नहीं हो जाती।

ऐसी हालत में किसी भी इंसान के बस में नहीं कि वह अपनी पसन्द के ठीक अनुसार ऐसा जीवन हासिल करे जहाँ उसको न किसी से शिकायत हो

और न किसी से मतभेद। ऐसा चयन मौजूदा दुनिया में किसी के लिए सम्भव ही नहीं, न भले लोगों के लिए और न बुरों के लिए।

वर्तमान संसार में वास्तविक चयन केवल दो तरीकों के बीच है। आप या तो घर से बाहर तक हर एक से निरन्तर लड़ते रहें या शिकायत व विरोध की अवहेलना करते हुए अपने जीवन का निर्माण करें। पहला तरीका अगर फूल के पेड़ में उसके काँटों से उलझने का नाम है तो उसके मुकाबले में दूसरा रास्ता यह है कि काँटों को अनदेखा करते हुए उसके फूल को ले लिया जाए।

लेकिन पहला रास्ता (अधैर्य और टकराव का रास्ता) किसी के लिए भी स्थायी रूप से अपनाना संभव नहीं होता, क्योंकि वह रास्ता ख़ुद अपनी और अपने घर की तबाही की ओर ले जाता है। और कोई भी इतना अज्ञानी नहीं हो सकता कि वह जानबूझकर अपने आप को और अपने परिवार को विनाश के गड्ढे में झोंक दे।

इसलिए होता यह है कि जो लोग सब्र न करने का रवैया अपनाते हैं, वे कुछ समय तक दूसरों से टकराते हैं, फिर जब उसके विनाशकारी परिणाम सामने आते हैं, तो वे चुप हो जाते हैं। लेकिन ऐसी चुप्पी का मतलब वास्तविक समझदारी नहीं होता — बल्कि वह अक्सर कपट और अन्दर ही अन्दर पलने वाली नफ़रत का रूप होता है।

वर्तमान संसार में बहरहाल आपको सब्र करना है। अगर आप उसूल की बुनियाद पर सब्र न करें तो आपको हितों की बुनियाद पर सब्र करना पड़ेगा और और इसी दूसरे मार्ग को कपट कहा जाता है।

आगे की सोचिए

अगर किसी इंसान का अतीत और वर्तमान लुट चुका हो, तब भी उसका भविष्य उसके पास सुरक्षित रहता है। कोई व्यक्ति आपका बीता हुआ कल

और आज छीन सकता है, लेकिन कोई भी आपका आने वाला कल नहीं छीन सकता।

अतीत की हानि बीत चुकी है, वर्तमान की कठिनाई सामने है, लेकिन भविष्य अभी सामने आने वाला समय है—जिसमें वे सारे अवसर, और संभावनाएँ पहले से भी अधिक आपके इंतज़ार में हैं। इसलिए अगर आप अतीत और वर्तमान खो चुके हैं, तो दुखी न हों। आने वाले कल को ध्यान में रखकर अपने काम की फिर से योजना बनाइए। संभव है कि भविष्य में आप इतनी बड़ी कामयाबी हासिल करें कि अतीत और वर्तमान की सारी क्षतियाँ पूरी हो जाएँ!

जीवन के रहस्यों में एक रहस्य यह है कि आदमी के अन्दर भुला देने की ताकत हो। अगर आपका अतीत और वर्तमान बर्बाद हो गया हो तो उसको भुला दीजिए। पिछली बर्बादी को भुलाना आपके अन्दर यह इरादा पैदा करेगा कि आप अपनी पूरी ताकत को नए भविष्य के निर्माण में लगा दें।

ज़माना अगर ठहरा हुआ होता तो आपको भी ठहरना पड़ता। इसके बाद आपकी महरूमी सदैव की महरूमी हो जाती। मगर ज़माना ठहरा हुआ नहीं है, ज़माना हरकत में है। यह बहुत बड़ी नेमत है। यही गतिशीलता है जो यह सुनिश्चित करती है कि हर छूटे हुए मौके के बाद एक नया मौका ज़रूर आता है। हर खोई संभावना के बाद एक नई राह खुलती है — ज़रूरत बस उसे पहचान कर आगे बढ़ने की है।

इस दुनिया में कोई भी इंसान नुकसान से पूरी तरह बच नहीं सकता। यहाँ बड़े हों या छोटे, ताकतवर हों या कमज़ोर—सबको किसी न किसी स्तर पर हानि का सामना करना पड़ता है। इसलिए जब भी आपको नुकसान हो, तो निराश न हों। हर गिरने के बाद फिर से खड़े होने की हिम्मत रखिए।

ज़िंदगी का कारवाँ अतीत या वर्तमान पर नहीं रुकता, वह लगातार भविष्य की ओर बढ़ता रहता है। अगर आपका अतीत और वर्तमान आपसे फिसल गया हो, तो भविष्य को थाम लीजिए। हो सकता है कि आप फिर से अपनी कामयाबी की मंज़िल तक पहुँच जाएँ।

एक वास्तविकता

अगर एक व्यक्ति किसी एक मामले में ग़लत पाया जाए, तो वह हर मामले में ग़लत माना जाएगा। हाँ, इस नियम से वही व्यक्ति अलग हो सकता है जो अपनी ग़लती पर शर्मिन्दा हो और खुले मन से उसे स्वीकार कर ले।

यह एक मनोवैज्ञानिक उसूल और जीवन की अटल हकीकत है। इसकी वजह यह है कि इंसान अपने पूरे अस्तित्व के साथ एक संपूर्ण इंसान है। इंसान से किसी गलती का होना ऐसा ही है जैसे गिलास से एक बूँद का बाहर आना। गिलास की बूँदों को देखकर समझा जा सकता है कि इसके अन्दर क्या चीज़ भरी हुई है। इसी तरह इंसान के एक तरीके को देखकर अन्दाज़ा किया जा सकता है कि दूसरे मामलों में वह इंसान कैसा इंसान है।

गिलास और इंसान में फिर भी एक अंतर है। गिलास निर्जीव होता है, जबकि इंसान एक जीवित प्राणी है। इंसान में यह क्षमता होती है कि वह ग़लती करने के बाद खुद को सुधार सके। इसी को तौबा कहा जाता है। तौबा की यही क्षमता इंसान को एक स्वयं-सुधारक मशीन बना देती है।

जब इंसान से कोई ग़लती हो और उसी समय उसका ज़मीर जाग जाए, और वह बिना किसी चालाकी या बचाव के साफ़-साफ़ यह मान ले कि उससे ग़लती हुई है — तो तकनीकी रूप से समझा जाए तो उसने अपनी बिगड़ी स्थिति को सुधार लिया। वह फिर से एक नया इंसान बन गया।

गलती करने के बाद अपनी ग़लती को न मानना कोई मामूली बात नहीं, यह बेहद अहम बात है। जब आदमी अपनी ग़लती को नहीं मानता तो उसके पीछे कोई ख़ास कारण होता है। जैसे बड़ाई समझना, व्यक्तिगत लाभ या भय आदि।

इसी प्रकार की एक या दूसरी कमज़ोरी होती है जिसकी बिना पर आदमी खुल्लमखुल्ला गलती करने के बावजूद उसका इकरार नहीं करता। यही वजह है कि इस्लाम में गलती के इकरार को बड़ा महत्त्व दिया है। जब आदमी अपनी ग़लती का इकरार करता है तो वह अपने अन्दर छुपी हुई बहुत-सी कमज़ोरियों को मिटाता है। वह मानो मनोवैज्ञानिक अर्थों में स्वच्छ होने के लिए नहाता है। गन्दा इंसान नए सिरे से एक पाक-साफ़ इंसान बन जाता है।

विपरीत स्थिति में वही व्यक्ति आता है जो अपनी गलती स्वीकार नहीं करता। उसकी आत्मा निरंतर मलिनता में डूबी रहती है; वह निरंतर पीछे की ओर गिरता जाता है और आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रगति कर पाना उसके लिए असम्भव हो जाता है।

इंसानी फ़ितरत

अबुल बरकात साहब से 3 दिसंबर, 1991 को दिल्ली में मुलाक़ात हुई। वो निज़ामपुर, आज़मगढ़ के रहने वाले हैं। इस मुलाक़ात में उन्होंने एक दिलचस्प घटना सुनाई। ज़िला आज़मगढ़ में माहुल के पास एक हिन्दू गाँव है जिसका नाम टिकुरिया (Tikurya) है। पड़ोस के गाँव रसूलपुर से एक यादव चोरी के इरादे से इस गाँव में आया। रात का समय था। वह एक घर के पास पहुँचा और दरवाज़े की कुण्डी खटखटाई। यह घर भी एक यादव का था,

जिसने अपनी भांजी को अपने यहाँ पाला था। उस समय घर में केवल वही लड़की थी, उसका मामा किसी ज़रूरत से बाहर गया हुआ था।

जब कुण्डी खटखटाने की आवाज़ आई, तो लड़की दरवाज़े पर पहुँची। उसे लगा कि उसका मामा लौट आया है। पहचान के लिए उसने अन्दर से पुकारा, "मामा?" बाहर खड़े व्यक्ति ने चालाकी से जवाब दिया, "हाँ।" लड़की ने दरवाज़ा खोल दिया। लेकिन जैसे ही दरवाज़ा खुला, वहाँ कोई नहीं था। तब वह दरवाज़ा बंद करके वापस अंदर चली गई।

थोड़ी देर के बाद फिर से दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ आई। लड़की फिर दरवाज़े पर पहुँची और पहचान के लिए फिर से अंदर से बोली, "मामा!" बाहर से आवाज़ आई, "हाँ।" अब की बार लड़की ने दरवाज़ा खोल दिया। देखा तो वाक़ई उसका मामा लौट आया था। दोनों अभी दरवाज़े पर ही खड़े थे कि लड़की ने पूछा, "इससे पहले आप दरवाज़ा खुलवा कर कहाँ चले गए थे?" मामा ने हैरानी से कहा, "मैं तो इससे पहले आया ही नहीं।"

लड़की ने चौंकते हुए पूछा, "तो फिर वो कौन था जिसने पहले कुण्डी खटखटाई थी?" तभी एक ओर से आवाज़ आई, "मैंने दरवाज़ा खटखटाया था।" मामा ने पूछा, "तुम कौन हो?" उसने जवाब दिया, "मैं चोर हूँ।" मामा ने फिर पूछा, "अगर तुम चोर हो, तो दरवाज़ा खुलने के बाद अंदर घुसकर चोरी क्यों नहीं की?" चोर ने जवाब दिया, "बात ये है कि जब लड़की ने अंदर से पूछा 'मामा', तो मैंने कह दिया 'हाँ'। इस तरह मैंने अपने आप को लड़की का मामा बना दिया। और मामा कभी अपनी भांजी के घर में चोरी नहीं करता।"

बाग़ रातों-रात नहीं उगते

जब भी देश के विकास की कोई ऐसी योजना सामने लाई जाती है, जिसमें लंबे समय के संघर्ष के बाद नतीजा मिलने वाला हो, तो लोग तुरंत कह देते हैं कि इसमें तो बहुत वक्त लगेगा और हमारे पास इतना सब्र नहीं है। लेकिन सच्चाई यह है कि यह सोच उल्टी है।

अगर गहराई से देखा जाए, तो यह साफ़ समझ में आता है कि देर वाली योजनाओं से डरकर जल्दी-जल्दी के उपायों की तरफ़ भागना, असल में मंज़िल तक पहुँचने में और ज़्यादा देर करना है। देर से पूरी होने वाली योजना फिर भी एक तय समय पर पूरी हो जाती है, लेकिन शॉर्ट कट रास्तों पर भागना सिर्फ़ समय बर्बाद करना है, क्योंकि ऐसे रास्ते कभी भी इंसान को उसकी मंज़िल तक नहीं पहुँचाते।

पेड़ की बड़ी-बड़ी डालियों को गाड़कर जो व्यक्ति तुरन्त अपने सामने एक हरा- भरा बाग़ देखना चाहता हो, उसे पौधे लगाकर बागवानी का तरीका बताइए तो उसकी समझ में इस तरह की बात कभी नहीं आएगी। वह कहेगा कि यह तो बहुत लम्बी योजना है। यद्यपि अगर भविष्य की दृष्टि से देखिए तो स्वयं उसी की योजना अनन्त रूप से लम्बी है। क्योंकि डालियाँ गाड़ने वाले को तो हज़ार वर्षों में भी बाग़ देखना नसीब नहीं हो सकता। जबकि पौधे लगाने वाले के लिए बहरहाल एक ऐसा समय आता है जबकि वह हरे-भरे बाग़ का मालिक बन जाए, चाहे यह समय 25 वर्षों बाद आए या 50 वर्षों के बाद।

जीवन के निर्माण में भी ठीक उसी तरह कोई शॉर्ट कट नहीं होता जिस तरह बागवानी में कोई शॉर्टकट नहीं होता। यह काम हर हाल में एक लंबी अवधि की योजना से ही पूरा होगा — चाहे हम इसे आज शुरू करें या बहुत

दिनों बाद उस समय जब इस काम का सबसे कीमती मौका हमारे हाथ से निकल चुका हो।

प्रकृति का यह तरीका किसी इंसान का बनाया हुआ नहीं है। यह खुद अल्लाह का बनाया हुआ है। जिस अल्लाह ने इस दुनिया को बनाया है, उसी ने इसके लिए यह नियम भी तय किया है। जैसे इंसान अपने रहने के लिए कोई दूसरी दुनिया नहीं बना सकता, वैसे ही वह अपने लिए कोई दूसरा नियम भी नहीं बना सकता।

हिकमत का सवाल

एक पढ़े-लिखे मुसलमान किसी सरकारी विभाग में एक अच्छी नौकरी पर थे। एक दिन उनका अपने बड़े अफ़सर से झगड़ा हो गया। जब वे घर लौटे तो उनका मन बहुत तनाव में था। उन्हें डर था कि वह अफ़सर उनकी सर्विस बुक को ख़राब कर देगा, और इसका असर यह होगा कि उनका प्रमोशन रुक जाएगा। इस चिंता की वजह से उनके सिर में इतना तेज़ दर्द हुआ कि वे घर आकर सीधे बिस्तर पर लेट गए और फिर कोई काम नहीं कर सके।

जब मेरी उनसे मुलाकात हुई, तो मैंने कहा कि आपने जो किया वह सही नहीं था। मैंने उन्हें एक हदीस सुनाई। एक बार एक क़बीले का सरदार मदीना में पैग़ंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पास आया। आपने अपने साथियों से कहा कि जाओ, उसका स्वागत करो। इस मौके पर आपने एक बुनियादी बात यह कही: "लोगों के साथ उनके पद के अनुसार व्यवहार करो।" (हयातुस सहाबा, खण्ड 2, पृष्ठ 209)

शरीअत के सारे नियम प्रकृति के आधार पर बनाए गए हैं। यह स्वयं प्रकृति की माँग है कि लोग एक-दूसरे का ध्यान रखें। कोई व्यक्ति जब दूसरे व्यक्ति से व्यवहार करे तो वह इस तरह करे कि दूसरा व्यक्ति उसे अपना

तिरस्कार महसूस न करे। हर व्यक्ति यह समझे कि उसे उसके पद के अनुसार उचित सम्मान (Due respect) दिया जा रहा है। जिस समाज में यह रीत हो, उस समाज में आपसी मुहब्बत बढ़ती है और समाजी बिखराव की जड़ कट जाती है।

यह प्रकृति का एक नियम है, और पुराने समय से इसे अलग-अलग तरीक़ों से दोहराया जाता रहा है। इसी बात को एक अंग्रेज़ी कहावत में इस तरह कहा गया है: "Boss is always right" — यानी अफ़सर हमेशा सही होता है।

यह एक तरह से व्यावहारिक सूझ-बूझ या शरीअत का व्यावहारिक तरीका है। हर इंसान के लिए इसका ख़याल रखना बेहद ज़रूरी है। जिस समाज में इस सिद्धांत को अहमियत न दी जाए, वह समाज कभी एक अच्छा और व्यवस्थित समाज नहीं बन सकता।

नाकामी से कामयाबी

वाल्टर रिस्टन का कथन है कि असफल हो जाना कोई अपराध नहीं है; असली असफलता यह है कि आदमी अपनी असफलता से कुछ सीखने में विफल रहे। जब जिम बर्क को जॉन्सन एंड जॉन्सन के व्यापारिक संस्थान में एक नए विभाग का उच्च अधिकारी नियुक्त किया गया, तो उसकी शुरुआती योजनाओं में एक यह भी थी कि वह बच्चों के सीने की मालिश के लिए कोई दवा विकसित करे।

उसकी तैयार की हुई दवा बुरी तरह नाकाम रही। बर्फ का विचार था कि उसको नौकरी से निकाल दिया जाएगा। जब उसको बोर्ड के चेयरमैन ने मुलाकात के लिए बुलाया तो यह मुलाकात उसके लिए एक अचम्भे वाली मुलाकात बन गई। क्या तुम ही वह व्यक्ति हो जिसने हमें इतनी बड़ी राशि का नुकसान पहुँचाया है। चेयरमैन रॉबर्ट वुड जॉन्सन ने उससे सवाल किया।

इसके बाद कहा – बहुत अच्छा, मैं तुमको केवल मुबारकबाद देना चाहता हूँ। अगर तुम गलतियाँ कर रहे हो तो इस का मतलब यह है कि तुम रिस्क ले रहे हो, और जब तक तुम रिस्क न लो, हम कभी प्रगति नहीं कर सकते :

> Walter Wriston, former chairman of Citicorp, said, Failure is not a crime. Failure to learn from failure is. When Jim Burke became the head of a new products division at Johnson & Johnson, one of his first projects was the development of a children's chest rub. The product failed miserably, and Burke expected that he would be fired. When he was called in to see the chairman of the board, however, he met a surprising reception. "Are you the one who just cost us all that money?" asked Robert Wood Johnson. "Well, I just want to congratulate you. If you are making mistakes, that means you are taking risks, and we won't grow unless you take risks."

आज की दुनिया उन नियमों पर चल रही है जिनका एक अहम सिद्धांत यह है कि किसी भी काम की सफलता के लिए जिन आवश्यकताओं की ज़रूरत होगी, वे पहले से किसी को पूरी तरह मालूम नहीं होतीं। ऐसी स्थिति में सफलता की एकमात्र सम्भावना यही होती है कि आने वाले हालात के बारे में अनिश्चितता के बावजूद भी साहसिक क़दम उठाए जाएँ। इसी को 'रिस्क लेना' कहा जाता है।

निश्चित रूप से रिस्क में खतरे छिपे होते हैं, लेकिन आज के यथार्थ में बिना रिस्क उठाए कोई भी बड़ा काम किया ही नहीं जा सकता।

असल में, जहां रिस्क नहीं है—वहाँ कामयाबी की कोई उम्मीद भी नहीं।

अध्याय तीन

जीवंत घटनाएँ और प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अनुभवों की दुनिया

इंसान की इच्छा और प्रकृति के क़ानून के बीच ताल-मेल के आधार पर बनाई गई योजना ही वो योजना है जो इस संसार में कामयाब हो सकती है।

अपने कल को जानिए

17वीं सदी ई. का एक ब्रिटिश व्यापारी जॉन बेट (John Bate) था। 1606 की घटना है, उसने बाहर से कुछ किशमिश (Raisins) इम्पोर्ट की। जब उसके सामान पर देश में प्रवेश के बाद टैक्स लगाया गया, तो उसने टैक्स की रकम देने से मना कर दिया। उसने कहा कि यह एक शाही टैक्स है, जिसे किंग जैम्स प्रथम- King James I (1566-1625) ने अपने अधिकार से जारी किया है। पार्लियामेंट ने इसे अभी तक आधिकारिक रूप से कानून नहीं बनाया है। इंग्लैंड के शासक जैम्स प्रथम ने शाही वित्तीय समस्याओं को हल करने के लिए इस प्रकार के कुछ टैक्स लागू किए थे।

निचली अदालत के जज ने किंग के अपार अधिकार (Absolute Power) का हवाला देते हुए इस टैक्स को वैध ठहरा दिया। जॉन बेट उसके बाद उच्च न्यायालय में गया। उस समय सर एडवर्ड कोक (Sir Edward Coke) उच्च न्यायालय के चीफ़ जस्टिस थे। उन्होंने मुकदमे की सुनवाई करने के बाद जॉन बेट के पक्ष में फ़ैसला दिया। उन्होंने कहा कि बादशाह को पार्लियामेंट की अनुमति के बिना स्वयं टैक्स लगाने का अधिकार नहीं है।

जस्टिस कोक के इस फ़ैसले पर बादशाह बहुत क्रोधित हुआ। उसने अपने शाही आदेश से जस्टिस कोक को न्यायालय के पद से डिस्मिस कर दिया और अपने आदेश के तहत शाही टैक्स के कानून को दोबारा बहाल कर दिया।

उपरोक्त घटना को अब लगभग चार सौ साल बीत चुके हैं। आज स्थिति पूरी तरह बदल चुकी है। अब बरतानिया और दूसरे देशों में यह पूरी तरह से स्वीकार कर लिया गया है कि पार्लियामेंट सबसे बड़ा वैधानिक सदन है। बादशाह या कोई भी व्यक्ति उसके अधीन है, न कि उसके ऊपर।

आज की दुनिया में हर आदमी ऐसे शब्द बोल रहा है जो भविष्य में अप्रासंगिक हो जाएंगे। हर इंसान ऐसे कामों में व्यस्त है जिनकी मौत के बाद के जीवन में कोई क़ीमत नहीं होगी। कामयाब वही है जिसका कथनी और करनी आख़िरत की दुनिया में महत्वपूर्ण साबित हो, और नाकाम वही है जिसका कथन और कर्म आख़िरत में निरर्थक हो जाए।

धैर्य का फल

मेरा एक सफ़र नवम्बर, 1991 ई. में बम्बई के लिए हुआ था। वहाँ मेरी मुलाक़ात हाजी अकबर खान साहब से हुई। वे बम्बई के पुराने व्यापारी हैं। उन्होंने एक नया आइटम तैयार किया और उसमें अपनी बहुत बड़ी रकम लगा दी। यह आइटम उनके अंदाज़े के अनुसार मार्किट में निकल न सका। हाजी साहब पर इस हानि का बहुत बुरा असर पड़ा। उनका ब्लड प्रेशर बढ़ गया। उनको शुगर की शिकायत हो गई। आदि।

मेरी मुलाकात हाजी साहब से उनके निवास पर हुई। मैं चुपचाप उनकी बातें सुनता रहा और दिल ही दिल में उनके लिए दुआ करता रहा। जब विदा लेने का समय आया, तो मैंने एक काग़ज़ लिया, उस पर एक वाक्य लिखा और उसे एक बंद लिफ़ाफ़े में रखकर हाजी साहब को देते हुए कहा—"इसे मेरे जाने के बाद खोलकर पढ़िए।"

उस काग़ज़ पर लिखा हुआ था: "आप अपने मामले को दुख के खाने में डालने के बजाय प्रतीक्षा के खाने में डाल दीजिए।"

इस मुलाकात के लगभग डेढ़ साल बाद, 8 जून 1993 को हाजी अकबर ख़ान साहब का एक पत्र मुझे मिला। उस पत्र में उन्होंने लिखा था:

"9 नवम्बर 1991 को आप मेरे मकान पर तशरीफ़ लाए थे और मेरी बात सुनने के बाद आपने मुझे यह नुस्ख़ा दिया था कि— 'आप अपने मामले को दुख के खाने में डालने के बजाय प्रतीक्षा के खाने में डाल दीजिए।'"

‘विश्वास कीजिए, आपके इस वाक्य का मुझ पर बड़ा गहरा असर हुआ। मनोवैज्ञानिक रूप से धैर्य की बुलन्दियों को छूने की कोशिश में मैं अपने दुख को काफ़ी हल्का महसूस करने लगा। यहाँ तक कि आज जब जून, 1993 ई. का रिसाला मेरे सामने है और ‘सफ़रनामा’ के तहत छपी इस घटना को डेढ़ साल का समय गुज़र चुका है, अलहम्दु लिल्लाह (सब प्रशंसायें अल्लाह के लिए हैं) उसी ‘धैर्य’ अर्थात् प्रतीक्षा के ख़ाने में डालने वाले अमल की वजह से उस हानि की काफ़ी क्षतिपूर्ति हो चुकी है। हालात ने सुखद करवट ली है, और बड़ी उम्मीद है, 1991 में नज़र आने वाला नुक्सान 1993 में इंशाअल्लाह भरपूर लाभ की सूरत में सामने आएगा। यह एक महान शिक्षा है कि दुनिया के मामले में धैर्य का जब यह बदला है तो आख़िरत के मामले में धैर्य का किस दर्जे का बदला होगा! (अकबरख़ान, मजगाँव, बम्बई-10)

अनथक प्रयास

शायद 1981 की बात है। एक मुस्लिम नौजवान मुझसे दिल्ली में मिले और अपनी कहानी बताते हुए रोने लगे। वह पढ़े-लिखे थे और एक अच्छी जॉब कर रहे थे, लेकिन किसी कारणवश उनकी जॉब छूट गई। इस घटना से वह इतने निराश हुए कि उन्होंने कहा कि कभी-कभी विचार आता है कि वह आत्महत्या कर लें। मैंने उनसे कहा कि यह निराशा की कोई बात नहीं है। आप अभी युवा हैं और इंशाअल्लाह, आप बहुत समय तक काम करेंगे। फिर आपको परेशान होने की कोई जरूरत नहीं है। मैंने उनसे उनकी डायरी मांगी और उस पर यह वाक्य लिख दिया: “बाग़ का माली जब किसी पौधे को उसकी जगह से उखाड़ता है, तो केवल इसलिए कि उसे ज्यादा बेहतर जगह पर लगाया जा सके।”

इसके बाद मैंने उनसे कहा कि आप खाड़ी के देशों में से किसी देश में जाइए और वहाँ काम हासिल करने की कोशिश कीजिए। वह एक अरब देश गए और कुछ दिनों बाद लौट कर आये और बताया कि वहाँ मुझको कोई काम नहीं मिला। मैंने कहा कि कोशिश केवल एक बार नहीं की जाती, बल्कि बार-बार की जाती है। मेरे आग्रह पर वह दोबारा गए। अब वहाँ उनको एक अच्छा काम मिल गया है। लगभग बीस साल से वह वहाँ हैं और बहुत कामयाब हैं।

इसी के साथ साथ यह भी ज़रूरी है कि मनुष्य जिस उद्देश्य के लिए कोशिश कर रहा हो, वह उस उद्देश्य के खिलाफ कुछ न करे। जैसे एक डॉक्टर जब क्लीनिक खोलता है, तो उसके लिए यह भी महत्वपूर्ण है कि लोगों में उसकी छवि यह न बने कि उसे सिर्फ पैसे से दिलचस्पी है और रोगियों के स्वास्थ्य से उसे कोई मतलब नहीं।

इस तरह की अनेक घटनाएँ हैं जो आदमी को यह शिक्षा देती हैं कि कोशिश के बाद उसकी कामयाबी यकीनी है। मगर कोशिश केवल एक बार अमल करने का नाम नहीं। कोशिश एक निरन्तर कार्य है। कोशिश का काम हर हाल में जारी रहता है, न केवल नाकामी के बाद, बल्कि कामयाबी के बाद भी।

एक और मौका

दिल्ली के एक डिग्री कॉलेज में, जिसे एक हिन्दू संस्था चलाती है, लैक्चररशिप की एक जगह खाली हुई। जिन लोगों ने आवेदन दिया, उनमें एक मुसलमान भी थे। इंटरव्यू हुआ और एक हिन्दू उम्मीदवार को चुना गया, जबकि मुस्लिम उम्मीदवार नाकाम हो गए।

इस मुसलमान से मेरी मुलाक़ात हुई तो वह बहुत झुंझलाए हुए थे। उन्होंने इसको पक्षपात का मामला समझा। उनका विचार था कि वे इसके विरुद्ध समाचार- पत्रों में लिखें और उपरोक्त कॉलेज के पक्षपात को उजागर करें। मैंने उन्हें मना किया। मैंने कहा कि अभी तो आप ने केवल एक चांस को खोया है। जीवन में हमेशा एक चांस के बाद दूसरा चांस आता है। आदमी को चाहिए कि वह पहले चांस के खो जाने पर दुखी न हो बल्कि दूसरे चांस की प्रतीक्षा करे।

उसी कॉलेज में एक साल बाद फिर लैक्चररशिप की एक जगह खाली हुई। इसका ऐलान अख़बार में छपा, तो उपरोक्त मुसलमान ने फिर से उसके लिए अपना आवेदन-पत्र भेज दिया। इस बार लैक्चररशिप की इस जगह के लिए उपरोक्त मुसलमान के अलावा दो हिन्दू उम्मीदवार भी थे, और उन दोनों को दो ताकतवर हिन्दुओं का समर्थन प्राप्त था। यह एक नाज़ुक मामला था। कॉलेज के ज़िम्मेदार दोनों हिन्दुओं को नहीं ले सकते थे, और उनमें से एक को चुनने का मतलब था कि दूसरे हिन्दू उम्मीदवार का समर्थक नाराज़ हो जाता। इस नाज़ुक स्थिति का हल उन्होंने यह निकाला कि दोनों हिन्दू उम्मीदवारों को छोड़कर उपरोक्त मुसलमान का चयन कर लिया। यह मुसलमान सज्जन अब भी उसी कॉलेज में काम कर रहे हैं और अब उन्होंने दिल्ली में अपना मकान बना लिया है।

जीवन में कामयाबी का यही रहस्य है। अगर आपसे पहला चांस खो जाए तो आप कदापि दुखी न हों, बल्कि सरलता से केवल यह करें कि दूसरे चांस की प्रतीक्षा करें। अगर आप ऐसा कर सकें तो निश्चित रूप से दूसरा चांस आपके लिए आएगा और जो कामयाबी आपको पहली कोशिश में नहीं मिली थी, वह निस्सन्देह दूसरी कोशिश में आपको मिल जाएगी। दुनिया अवसरों से पूर्ण है। यहाँ हर एक अवसर के बाद दूसरा अवसर आता है, ठीक उसी तरह जैसे अँधेरी रात के बाद रोशन सुबह।

एक वैज्ञानिक

प्रसिद्ध अमेरिकी वैज्ञानिक थॉमस अलवा एडिसन (1847–1931) को उनके बचपन में शिक्षकों ने अयोग्य छात्र क़रार दे दिया था, लेकिन एडिसन ने अपनी मेहनत और लगन के बल पर प्रगति की और अंततः एक महान वैज्ञानिक बन गए।

यह घटना उस समय की है जब एडिसन आठ वर्ष के थे और स्कूल में पढ़ते थे। एक दिन उनकी महिला शिक्षक ने उड़ान के विषय पर चर्चा करते हुए कहा कि इंसान उड़ नहीं सकता क्योंकि उसके पास 'पंख' नहीं होते, जबकि चिड़िया उड़ सकती है क्योंकि उसके पास पंख होते हैं। सभी बच्चे इस उत्तर से संतुष्ट हो गए, लेकिन एडिसन के मन में एक अलग ही सवाल उठा। उन्होंने हाथ उठाकर पूछा, "मैडम, लेकिन पतंग तो उड़ती है, जबकि उसके पास पंख नहीं होते?"

शिक्षिका इस सवाल का कोई जवाब नहीं दे सकीं। लेकिन अपने सीमित ज्ञान को स्वीकार करने की बजाय उन्होंने इसे अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया। मामला इतना बढ़ा कि एडिसन को स्कूल से निकाल दिया गया। उन्होंने यह कहकर उन्हें मूर्ख और अत्यधिक बोलने वाला बच्चा घोषित कर दिया।

थॉमस अलवा ऐडिसन ने बहुत-सी वैज्ञानिक चीजें खोजीं। जैसे वायरलैस, टेलीफोन, बिजली, फोटोग्राफ़ी, बिजली की रोशनी आदि। लगभग एक सौ छोटे- बड़े आविष्कार उसके खाते में जाते हैं। थॉमस अलवा ऐडिसन जब बच्चा था तो वह बहुत ज़्यादा सवालात करता था। स्कूल की महिला टीचर उसके सवालात का जवाब न दे सकी तो उसने इस मामले को अपनी प्रतिष्ठा का मसला बना लिया। इसीलिए वह अलवा की योग्यता को पहचानने में नाकाम रही। मगर अलवा की माँ इस मनोवैज्ञानिक परेशानी से

मुक्त थी। इसलिए उसने बहुत जल्द इस हक़ीक़त को जान लिया कि अलवा का ज़्यादा सवाल करना असल में उसकी रचनात्मक बुद्धि का सबूत है। उसने माँ के स्नेह व प्यार के साथ अलवा को ज्ञान एवं शोध के रास्ते पर डाल दिया। यहाँ तक कि वह एक महान वैज्ञानिक बन गया।

सेवा करने से सम्मान

मुहम्मद मिनहाज अख़तर, एम. ए. (जन्म 1979) से 1 जनवरी, 1997 को मुलाक़ात हुई। वे एक व्यापारी हैं और पटना में रहते हैं।

उन्होंने बिहार की एक घटना सुनाई। एक बाप के दो लड़के थे। एक लड़के ने शिक्षा की ओर रुख किया और मेहनत करते-करते वह डॉक्टर बन गया। बाद में उसने प्रैक्टिस शुरू की और अलग घर लेकर अपनी पत्नी और बच्चों के साथ रहने लगा। दूसरा लड़का शिक्षा प्राप्त नहीं कर सका और जाहिल ही रह गया। अंत में, उसने लोगों के सुझाव से बस्ती के अंदर हजामत की दुकान कर ली।

डॉक्टर बेटे को आबादी के अन्दर आदर-सम्मान हासिल हो गया। उसके मुकाबले में हज्जाम बेटा लोगों के बीच एक साधारण व्यक्ति बनकर रह गया। कुछ लोगों ने उसके बाप से कहा कि हज्जाम बेटा आपके साथ रहता है। इसलिए आपको अधिकांश लोग अमुक हज्जाम का बाप कहने लगे हैं। आप अपने उस इस बेटे को घर से निकाल दीजिए। उसके बाद लोग स्वयं ही आपको 'डॉक्टर साहब के पिताजी' कहना शुरू कर देंगे। और फिर आपको समाज के अन्दर सम्मानजनक जगह हासिल हो जाएगी। उपरोक्त व्यक्ति ने जवाब दिया- 'मैं स्वयं इसको पसन्द नहीं करता कि मुझको हज्जाम का बाप कहा जाए और निश्चय ही अब तक मैं उसको घर से निकाल चुका

होता। मगर मजबूरी यह है कि घर का ख़र्च वही चलाता है। अगर मैं उसको घर से निकाल दूँ तो घर का काम चलना ही मुश्किल हो जाएगा।'

यह सेवा का करिश्मा है। सेवा (service) अपने अन्दर सम्मान कराने का असर रखती है। आप चाहे कुछ भी हों, अगर आप लोगों की सेवा करने लगें, लोगों की ज़रूरतों में उनके काम आएँ, माहौल के अन्दर आपकी तस्वीर यह बन जाए कि आपसे लोगों की ज़रूरतें पूरी होती हैं, तो आप किसी और कोशिश के बिना स्वयं लोगों के बीच सम्मान और ऊँचा स्थान हासिल कर लेंगे।

सेवा से लोगों का दिल जीता जा सकता है। और जो व्यक्ति लोगों का दिल जीत लेता है, उसके लिए बाकी सब कुछ आसानी से प्राप्त हो जाता है। इसके बाद, उसे किसी और चीज़ की तलाश नहीं रहती।

डायरी साथ रखिए

पैग़म्बर मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के सफ़र की घटनाओं में से एक महत्वपूर्ण घटना सुराका बिन मालिक बिन जुअशम से जुड़ी हुई है, जिसे इब्ने हिशाम ने थोड़े विस्तार के साथ बयान किया है। इस घटना का सार यह है कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मक्का से निकलकर मदीना की ओर रवाना हुए, तो कुरैश मक्का ने घोषणा की कि जो भी व्यक्ति उन्हें पकड़ कर लाएगा, उसे एक सौ ऊँट का इनाम दिया जाएगा। सुराका इस इनाम के लालच में घोड़े पर सवार होकर रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के पीछे दौड़ा। वह आपके क़रीब पहुँचने में सफल हो गया, लेकिन ठीक उसी समय उसके घोड़े ने ठोकर खाई और वह ज़मीन पर गिर पड़ा। इस घटना से सुराका को बहुत दुख हुआ। उसने अपने दिल में कहा कि अल्लाह

की मदद से आप सल्ल. मुझसे बचा लिए गए हैं और वो (मुहम्मद सल्ल.) ज़रूर कामयाब होंगे।

इसके बाद सुराक़ा ने अपना इरादा बदल दिया। रसूलुल्लाह सल्ल. और हज़रत अबूबक्र रज़ि. को आवाज़ देकर उसने कहा कि ऐ लोगो, मैं सुराका बिन जुअशम हूँ। मुझे इतना समय दो कि तुमसे बात करूँ। ख़ुदा की कसम, मैं तुमसे कोई धोखा नहीं करूँगा और न मेरी ओर से तुम्हें कोई ऐसी बात पहुँचेगी जो तुम पसन्द न करो।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.अ.व.) ने हज़रत अबूबक्र रज़ि. से कहा कि उससे पूछो कि वह हमसे क्या चाहता है। सुराक़ा ने पूछने पर जवाब दिया कि मुझे आप एक सन्धि लिख दें जो मेरे पास एक निशानी के रूप से रहे। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया : 'ऐ अबूबक्र! इसको लिखकर दे दो'। सुराका का बयान है कि उसके बाद अबूबक्र रज़ि. ने किसी हड्डी या काग़ज़ या ठीकरी पर एक तहरीर लिखी और मेरी तरफ़ उसको फेंक दिया। मैंने उसको ले लिया और उसको अपने तरकश में रखकर वापस आ गया। (सीरत इब्ने हिशाम, जिल्द 1, पृष्ठ 489-90)

इससे मालूम होता है कि सफ़र में और घर पर अपने साथ कलम और कागज़ रखना भी रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की एक सुन्नत है। मौजूदा ज़माने में उसकी आसान सूरत यह है कि आदमी एक पाकिट डायरी और एक क़लम हमेशा अपनी जेब में रखे और रोज़ाना की ज़रूरी बातें उसमें दर्ज करता रहे। डायरी का इस्तेमाल एक अत्यन्त अच्छी आदत है और इसी के साथ एक सुन्नते रसूल सल्ल. भी।

अमन की ज़रुरत

दिल्ली में 25 जून, 1994 को मेरी मुलाकात एक अरब प्रोफेसर से हुई। बातचीत के दौरान किसी कारण से यह बात आई कि अगस्त के पहले हफ्ते में मुझे लंदन जाना है। उन्होंने पूछा, "किसलिए?" मैंने कहा, "एक अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में भाग लेने के लिए।" उन्होंने फिर से पूछा, "उस सम्मेलन में किस विषय पर चर्चा होगी?" मैंने कहा, "शांति (सलाम)।" उन्होंने तुरंत कहा, "शांति किन लोगों के बीच? क्या ताकतवर और कमजोर के बीच या अत्याचारी और पीड़ित के बीच?"

मैंने कहा, "असल सवाल यह नहीं है कि शांति किन लोगों के बीच। असल मसला यह है कि शांति किस मक़सद के लिए।"

आजकल के मुस्लिम बुद्धिजीवियों के ज़ेहन पर यह छाया हुआ है कि वर्तमान युग में मुसलमान हर जगह परास्त हैं और गैर-मुस्लिम क़ौमें हर जगह उन पर छाई हुई हैं। ऐसी हालत में जो शान्ति होगी वह दो असमान पक्षों के बीच होगी। यह मानो दूसरे पक्ष के मुकाबले में अपनी मौजूदा हैसियत को मान लेना है। फिर ऐसा खुला हुआ घाटे का सौदा हम कैसे कर सकते हैं!

लेकिन सोच का यह रुख़ गलत है। सोच का सही रुख़ यह है कि हम सोचें कि आज हमें शांति की ज़रूरत है। हम सौ वर्षों से भी ज्यादा समय से दूसरे पक्ष से टकराव कर रहे हैं। हमारा यह टकराव, असाधारण कुर्बानियों के बावजूद, केवल हमारे विनाश का कारण बना हुआ है। उसकी वजह क्या है? उसकी वजह यह है कि इस संघर्ष में वह तत्व उपेक्षित रहा, जो हमारी सबसे बड़ी शक्ति था — अर्थात् इस्लाम की श्रेष्ठ विचारधारा।

इस्लाम केवल एक धार्मिक प्रणाली नहीं, बल्कि एक ऐसी विचारधारा है जो मानवता को नैतिकता, न्याय और आत्मिक विकास का मार्ग दिखाती है। किंतु इस विचारधारा की गहराई को समझने और अपनाने के लिए

संतुलित मानसिकता आवश्यक है — और यह संतुलन केवल शांतिपूर्ण वातावरण में ही पनप सकता है। शांति न केवल इस्लाम की नींव है, बल्कि उसका लक्ष्य भी है।

सीखने का मेजाज़

मुसलमानों के दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर फ़ारूक रज़ि. के बारे में बताया जाता है कि वे हर एक से कुछ-न-कुछ सीखते रहते थे। इस मामले की एक मिसाल रिवायात में इस तरह आई है कि एक बार उन्होंने एक सहाबी से पूछा कि तक़वा (संयम) क्या है? उन्होंने कहा कि ऐ अमीरुल मोमिनीन, क्या आप कभी ऐसे रास्ते से गुज़रे हैं जिसके दोनों तरफ़ काँटेदार झाड़ियाँ हों। हज़रत उमर रज़ि. ने कहा कि हाँ! उन्होंने पूछा कि फिर ऐसे मौके पर आपने क्या किया? हज़रत उमर रज़ि. ने कहा कि मैंने अपने दामन समेट लिए और बचता हुआ निकल गया। उन्होंने कहा कि यही तक़वा है।

हज़रत उमर का यही तरीका आम लोगों के साथ भी था। वे ऊँट वालों से ऊँट की बात पूछते और बकरी पालने वालों से बकरी की बात करते। जो भी व्यक्ति उन्हें मिलता, वे उससे उसी के अनुभव-क्षेत्र से संबंधित बातें करते। इस तरह वे हर व्यक्ति से उसके काम और अनुभव के दायरे के सवाल करते और उससे नई-नई जानकारियाँ हासिल करते।

आज के समय में इसी को जिज्ञासा की भावना' (spirit of enquiry) कहा जाता है, जिसका वैज्ञानिक दृष्टिकोण से बहुत बड़ा महत्व है। सच तो यह है कि वही लोग महान विद्वान बनते हैं जिनमें यह खोज की भावना जीवित होती है। इस तरह की जिज्ञासा हर व्यक्ति के लिए बेहद आवश्यक है—चाहे वह एक सामान्य इंसान हो या किसी उच्च पद पर बैठा व्यक्ति।

आमतौर से ऐसा होता है कि लोग सुनने से ज़्यादा सुनाने के शौकीन होते हैं। मगर इस प्रकार का स्वभाव ज्ञान की प्रगति में एक स्थायी रुकावट है। ऐसे लोग कभी ज्यादा बड़ी ज्ञानात्मक उन्नति हासिल नहीं कर सकते। जब आप बोलते हैं तो आप वहीं रहते हैं जहाँ कि आप हैं। मगर जब आप सुनते हैं तो आप अपने ज्ञान में वृद्धि करते हैं। सही ज्ञानात्मक स्वभाव यह है कि आदमी बोलने से ज़्यादा सुने। वह जब भी किसी से मिले, सवालात करके उससे जानकारियाँ लेने की कोशिश करे।

जानकारियों का ख़ज़ाना हर तरफ़ और हर जगह मौजूद है। मगर वह केवल उस व्यक्ति के हिस्से में आता है जो उसको हासिल करने के तरीके को जानता हो।

आप क्या हैं

जैसा सामाजिक व्यवहार, वैसा सामाजिक परिचय — यह एक कथन है। अर्थात् जिस तरह आदमी अपने-आप को अपने माहौल में परिचित कराएगा, माहौल उसी के अनुसार उसके साथ व्यवहार करेगा। यह शायद एक ऐसा उसूल है जिससे बाहर कोई नहीं हो सकता।

एक बार मैं दिल्ली से हैदराबाद जा रहा था। जब मैं दिल्ली एयरपोर्ट पर सिक्योरिटी चेकिंग के लिए भीतर पहुँचा, तो मैंने देखा कि अन्य मुसाफ़िरों के बैग खोलकर जाँचे जा रहे हैं। मेरे पास एक छोटा-सा बैग था, जिसमें सिर्फ़ एक जोड़ी कपड़ा और कुरआन की एक प्रति रखी थी। चूँकि मुझे यह लगा कि मेरे बैग में ऐसा कुछ नहीं है जिसे जाँचने की ज़रूरत हो, मेरी ज़बान से सहज ही निकल गया— “क्या इसको भी खोलना होगा?” मेज़ के दूसरी तरफ खड़ा हुआ पुलिसवर्दीधारी व्यक्ति कुछ सख़्त स्वर में बोला— “क्यों नहीं?” (Why not)?

फौरन मैंने अपना बैग खोल दिया। आदमी ने मेरे बैग को उलट- पलट कर देखा तो उसमें उसे कोई आपत्तिजनक चीज़ नज़र नहीं आई। आख़िर में उसने उसमें रखी हुई किताब उठाई और पूछा कि यह क्या है। मैंने कहा कि कुरआन। जैसे ही मेरी ज़बान से कुरआन का शब्द निकला, आदमी का मूड बिलकुल बदल गया। जो आदमी पहले सख़्ती और रूखेपन के लहजे में बोल रहा था, वह नरमी और विनम्रता के स्वर में बोलने लगा।

ऐसा क्यों हुआ? इसकी सीधी-सादी वजह यह थी कि पहले मैं उस व्यक्ति की नज़र में केवल बैग वाला था, मगर बाद को मैं उसकी नज़र में क़ुरआन वाला बन गया। जब तक मैं उसकी नज़र में बैग वाला था, वह मुझको आम मुसाफ़िरों की नज़र से देख रहा था, लेकिन जब उसने मुझे कुरआन वाले के रूप में जान लिया तो उसकी नज़र में मेरा व्यक्तित्व बदल गया। अब वह मुझे एक और नज़र से देखने लगा।

यदि आप चाहते हैं कि माहौल आपके साथ अच्छा व्यवहार करे, तो आवश्यक है कि आप अपनी छवि उसी के अनुरूप बनाएं। जिस तरह आप अपने को अपने वातावरण में प्रस्तुत करेंगे, माहौल भी ठीक उसी तरह आपके साथ व्यवहार करेगा— न उससे कम, न उससे अधिक।

इंतेख़ाब की कसौटी

हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने जब मक्का से मदीना की तरफ हिजरत की तो यह एक बहुत नाज़ुक सफ़र था। यह सफ़र मक्का वालों के ज़ुल्म व हिंसा की वजह से उन्हें करना पड़ा था। इसके बावजूद इस सफ़र के लिए आपने जिस गाइड का चयन किया वह मक्का का एक गैर-मुस्लिम अब्दुल्लाह बिन उरैक़ित था। उसी गैर-मुस्लिम गाइड ने आपकी रहनुमाई करते हुए आपको मक्का से मदीना पहुँचाया।

इस सुन्नत से मालूम हुआ कि दूसरों से काम लेने में मुस्लिम और गैर-मुस्लिम का भेद करना ठीक नहीं। इस तरह के मामले में योग्यता देखी जाएगी, न कि रिश्ता और धर्म |

हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हमेशा इसी नीति को अपनाया। उदाहरण के रूप में, बदर की लड़ाई के बाद सत्तर गैर-मुस्लिमों को गिरफ़्तार करके मदीना लाया गया। ये लोग उस समय के हिसाब से पढ़े-लिखे थे। अतः आपने घोषणा की कि इन में से जो कोई भी मदीना के दस बच्चों को लिखना और पढ़ना सिखा देगा, उसे रिहा कर दिया जाएगा। इस प्रकार, इस्लाम के इतिहास में—स्वयं रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के हुक्म से—पहला स्कूल स्थापित हुआ, और उसके सभी शिक्षक गैर-मुस्लिम थे।

जीवन के मामलों में इस उसूल का महत्त्व अत्यधिक है। यदि किसी कार्य में साथी या कार्यकर्ता का चयन करते समय यह देखा जाए कि वह अपने धर्म का है या किसी अन्य धर्म का, या अपनी बिरादरी का है या किसी दूसरी बिरादरी का—तो इससे काम की गुणवत्ता समाप्त हो जाएगी। इस दृष्टिकोण के साथ कोई भी कार्य कभी उच्च स्तर पर अंजाम नहीं दिया जा सकता।

सही तरीका यह है कि काम को काम के रूप में देखा जाए। यह देखा जाएगा कि जो काम करना है उस काम के लिए ज़्यादा बेहतर और ज़्यादा काम के कौन लोग हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में यह कि ऐसे मामलों में मेरिट के आधार पर लोगों का चयन किया जाए, न कि किसी और आधार पर।

मेरिट की बुनियाद पर चयन करने से असल काम को बढ़ावा मिलता है। और जब किसी और चीज़ को चयन की बुनियाद बनाया जाए तो उसी चीज़ को बढ़ावा हासिल होगा जिसको चयन की बुनियाद बनाया गया है।

रचनात्मक ज़ेहन

1945 में मेरठ में जन्मे सय्यद मंसूर आगा इस वक़्त दिल्ली में निवास करते हैं। 1 जुलाई, 1996 की मुलाकात के दौरान उन्होंने एक ऐसा अनुभव बताया, जिसमें एक महत्वपूर्ण शिक्षा छिपी हुई थी।

1963-64 में वे मेरठ कॉलेज के छात्र थे और मिस्टर के. सी. गुप्ता उनके पॉलिटिकल साइंस के शिक्षक थे। जब उन्होंने भारत के राजनीतिक इतिहास पर व्याख्यान देना शुरू किया, तो यह आगा साहब के लिए काफी कष्टदाई साबित हुआ। यही स्थिति उनके साथी मुस्तईनुर्रहमान साहब की भी थी। दोनों छात्रों ने आपस में विचार किया कि इस स्थिति में क्या किया जाए। अंत में, उन्होंने यह निर्णय लिया कि गुस्से या उत्तेजना से कोई लाभ नहीं होगा। हमें अपने आप को इस स्थिति के लिए तैयार करना चाहिए ताकि हम मिस्टर गुप्ता की बौद्धिक चुनौती का सामना कर सकें।

तय किए गए प्रोग्राम के अनुसार अब दोनों अपना ख़ाली समय लाइब्रेरी में गुज़ारने लगे। वे हिन्दुस्तान के राजनीतिक इतिहास और देश-विभाजन के ऐतिहासिक रिकार्ड का अध्ययन करते। इस तरह वे पूरी मानसिक तैयारी के साथ क्लास में जाने लगे। उन्होंने यह किया कि जब गुप्ता साहब इतिहास की कोई गलत बात पेश करते तो आगा साहब और उनके साथी तुरन्त उन्हें टोकते और पूरे हवाले के साथ कहते कि आप ऐसा क्योंकर कहते हैं। अमुक किताब में तो यह बात इस तरह लिखी हुई है और अमुक इतिहासकार ने तो इसको इस तरह बयान किया है।

कई दिनों तक ऐसा ही चलता रहा। अंततः एक दिन मिस्टर गुप्ता ने दोनों छात्रों को अपने कमरे में बुलाया। उन्होंने कहा, "मेरे दिल में तुम दोनों का बहुत सम्मान है। तुम लोगों ने मेरा सुधार कर दिया और मुझे नई रोशनी

दिखाई।" इसके बाद मिस्टर गुप्ता के लैक्चर का तरीका पूरी तरह बदल गया। वे आखिरी समय तक दोनों मुस्लिम छात्रों के साथ अत्यधिक आदर और सम्मान के साथ व्यवहार करते रहे।

इस प्रकार किसी भी समस्या के समाधान का यही रचनात्मक तरीका है, और समस्याएँ हमेशा रचनात्मक तरीके से हल होती हैं, न कि कलहपूर्ण तरीके से।

तीन मिनट का सब्र: शांति और दंगे के बीच की दूरी

सय्यद इम्तियाज़ुद्दीन दसनवी एक इंजीनियर हैं। 1967 में वे सर्विस के तहत ज़िला पूना के एक इलाक़े लोनावाला (Lonavala) में थे। एक दिन, जब वे वहाँ के मुसलमानों के साथ मस्जिद में तरावीह (रमज़ान के महीने में रात को पढ़ी जाने वाली विशेष नमाज़) की नमाज़ अदा कर रहे थे, तो सड़क पर शोरगुल की आवाज़ आई। हिन्दुओं का एक जुलूस मस्जिद से लगी हुई सड़क से गुजर रहा था। मस्जिद के सामने पहुँचकर वे लोग ठहर गए और ज़ोर-ज़ोर से बाजा बजाने लगे।

तरावीह दो-दो रकात की होती है। जब इमाम साहब ने दो रकअत पूरी करके अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि कहा, तो अचानक कुछ नमाज़ी गुस्से में आ गए। कुछ लोग उठने लगे और यह सोचने लगे कि जुलूस वालों से कहें कि यह मस्जिद है, यहाँ शोर न करें और आगे बढ़ें। मगर सय्यद इम्तियाज़ुद्दीन साहब ने कहा, "चंद मिनट बैठकर ज़िक्र कर लीजिए, ये लोग अपने-आप यहाँ से चले जाएंगे।" तमाम नमाज़ी चुपचाप बैठ गए और कुछ ही समय में जुलूस वाले बिना किसी विवाद के वहाँ से चले गए।

20 मार्च, 1994 की मुलाकात में सय्यद इम्तियाज़ुद्दीन साहब ने बताया कि मुश्किल से तीन मिनट गुज़रे होंगे कि आवाज़ें कम होने लगीं और थोड़ी देर में बिलकुल ख़त्म हो गईं। जुलूस केवल तीन मिनट मस्जिद के सामने ठहरा। उसके बाद वह अपने आप ही आगे चला गया।

इसके विपरीत अगर कुछ मुसलमान सड़क पर आकर रोक-टोक करते तो वे लोग ज़िद में पड़ जाते। तब दोनों तरफ़ से आग्रह बढ़ता। यहाँ तक कि जुलूस का मसला दोनों के लिए प्रतिष्ठा का मसला बन जाता। उसके बाद मामला और आगे बढ़ता और आख़िरकार वह चीज़ सामने आ जाती जिसको साम्प्रदायिक दंगा कहा जाता है। एक तरफ मस्जिद की तरावीह की नमाज अधूरी रह जाती। दूसरी तरफ़ बस्ती आग और ख़ून के तूफान में नहा उठती।

अब इससे उलट एक घटना की मिसाल लीजिये, जो 1980 में मुरादाबाद में घटी। रमज़ान के महीने में गैर-मुस्लिमों का एक जुलूस मस्जिद के सामने आकर बाजा बजाने लगा। मस्जिद में जो मुसलमान नमाज़ के लिए जमा थे, वे 'तीन मिनट' के धैर्य पर राज़ी नहीं हो पाए। बाहर निकलकर उन्होंने जुलूस को रोकना शुरू किया, जिसका परिणाम मुरादाबाद में भयानक दंगों के रूप में सामने आया।

यह घटना यह साबित करती है कि शान्ति और दंगों के बीच केवल तीन मिनट की दूरी है। यदि आप तीन मिनट के जोश को सहन कर लें, तो हर जगह शान्ति ही शान्ति होगी, और अगर आप तीन मिनट के जोश को सहन नहीं कर पाते, तो हर जगह दंगे ही दंगे फैल जाते हैं।

कामयाबी का रहस्य

एक आंख से महरूम एक शख्स सीढ़ी से नीचे उतर रहा था। सीढ़ी पर अँधेरा था और सीढ़ी का एक जीना कुछ हद तक टूटा हुआ था। उसे देख न पाने की वजह से वह उस पर ठीक से कदम नहीं रख सका और फिसल कर गिर पड़ा।

दूसरा व्यक्ति सड़क पर चल रहा था। दिन का समय था, मगर चलने वाला अन्धा था। सड़क के एक किनारे में होल का ढक्कन खुला हुआ था। वह अन्धा होने की वजह से उसको न देख सका। और उसका पाँव खड्डे में चला गया।

इस दुनिया में रास्ता तय करने के लिए एक समय में दो चीज़ों की ज़रूरत है— आँख और रोशनी। अगर आँख हो मगर रोशनी न हो या रोशनी हो मगर आँख न हो, दोनों सूरतों में अंजाम एक होगा। आदमी खड्डे में गिरकर अपना नुकसान कर बैठेगा। वह सुरक्षित रूप से अपना रास्ता तय नहीं कर सकता।

यही मामला मनुष्य के पूरे जीवन का है। जीवन में कामयाबी के लिए भी वही उसूल है जो उपरोक्त दोनों घटनाओं में नज़र आता है। अर्थात् एक समय में आँखों और रोशनी, दोनों चीज़ों का मौजूद होना ज़रूरी है।

एक क़ौम के लोग अल्लाह का दिया हुआ दिमाग़ रखते हैं, मगर उनके पास ज्ञान नहीं, ऐसी हालत में मानो कि उनके पास आँख है, मगर रोशनी नहीं। ऐसे लोग आँख रखते हुए भी जीवन के रास्तों में भटकते रहेंगे।

इसी तरह एक क़ौम के लोग शिक्षित हैं, मगर उनका ज़ेहन बिगड़ा हुआ है। लोगों के दिलों में नफ़रत और झुंझलाहट की भावना भरी हुई है। ऐसी क़ौम के बारे में यह कहना सही होगा कि उसके पास रोशनी है, मगर वह आँख से महरूम है। ये लोग भी कामयाबी के साथ जीवन का रास्ता तय नहीं कर सकते। किसी-न-किसी मोड़ पर टकरा कर तबाह हो जाएँगे।

किसी क़ौम की तरक्क़ी के मामले में यही सबसे अहम बात है। जो लोग कौम को ऊपर उठाना चाहते हैं, उन्हें चाहिए कि वे इस पर मेहनत करें, क्योंकि किसी और मैदान में भाषण देने से कोई फायदा नहीं। यही इस दुनिया में सफलता का मात्र एक राज़ है।

कर्म से कामयाबी

महरौली (दिल्ली) के इलाके में एक इस्लामी शैक्षणिक संस्था, मदरसा इस्लामिया अरबिया फ़ैज़ुल क़ुरआन है। इसे मौलाना मुहम्मद तलहा साहब और मौलाना बशीर अहमद राशिदुल अमीनी ने 1992 में स्थापित किया था। 24 जुलाई, 1994 को इसका पहला दीनी तालीमी जलसा हुआ, जिसमें मुख्य अतिथि मौलाना मुहम्मद सिद्दीक़ बाँदवी थे। उनकी दावत पर मैंने भी उसमें शिरकत की।

निज़ामुद्दीन से चल कर दिल्ली के विभिन्न इलाक़ों से गुज़रते हुए जब हम महरौली पहुँचे, तो हमारी नज़र कुतुबमीनार पर पड़ी, जो उस क्षेत्र की सबसे ऊँची इमारत के रूप में दूर-दूर से दिखाई देती है। कुतुबमीनार 13वीं सदी में कुतुबुद्दीन ऐबक ने बनवाई थी। इसके बारे में इतिहास में यह शब्द अंकित हैं कि दिल्ली की कुतुबमीनार अभी तक कुतुबुद्दीन ऐबक की विजयों की याद दिलाती है: Qutub Minar, 13th-century tower in Delhi, India, erected to commemorate the victories of Qutb-ud-Din Aybak. (*Encyclopedia Britanica*, Vol. 8, p. 362)। मगर उसे देखकर मुझे यह विचार आया कि यह मीनार अपनी ऊँचाइयों के साथ एक और बड़ी सचाई की याद दिलाती है। और वह यह कि कामयाबी कर्म से मिलती है, न कि जन्म से।

क़ुतुबुद्दीन ऐबक आरम्भ में एक गुलाम की हैसियत से मुहम्मद गौरी की नौकरी में आया। उसके बाद अपनी कार्यकुशलता के आधार पर उसने प्रगति शुरू की। यहाँ तक कि सुलतान मुहम्मद गौरी के क़त्ल (1206 ई.) के बाद वह उसका उत्तराधिकारी बना। फिर अपनी चतुराई व अक्लमन्दी से वह दिल्ली की सल्तनत का मालिक बन गया। यद्यपि वह अधिक समय तक हुकूमत न कर सका। घोड़ों के एक खेल में वह गम्भीर रूप से घायल हो गया। इसी में 1210 ई. में उसका देहान्त हो गया।

इस संसार में सफलता की अनगिनत संभावनाएँ हैं। यहाँ तक कि एक सामान्य इंसान भी बादशाह के दर्जे तक पहुँच सकता है। बस एक शर्त है कि वह अपनी ईश्वर के द्वारा दी हुई योग्यताओं का समझदारी से उपयोग करे।

लालच बुरी बला

जनरल मुहम्मद इरशाद एक सैनिक विद्रोह के माध्यम से बांग्लादेश की सत्ता में राष्ट्रपति के पद पर काबिज़ हुए थे। इसके बाद एक और सैनिक विद्रोह हुआ, जिसके तहत पूर्व-हुकूमत ने उन पर भ्रष्टाचार के कई मुकदमे चलाए। पहले उन्हें अवैध हथियार रखने के आरोप में तेरह वर्ष की सजा हुई, और वित्तीय भ्रष्टाचार के आरोप में उन्हें सात साल की अतिरिक्त सजा सुनाई गई।

लाहौर के दैनिक 'नवाए वक़्त' (8 जून, 1993) में इस मामले से जुड़ी जो खबर प्रकाशित हुई, उसका सार यह है: ढाका की विशेष अदालत ने जनरल मुहम्मद इरशाद और उनकी पत्नी रोशन को ज़मीनों के लेन-देन के मामले में भ्रष्टाचार का दोषी मानते हुए दोनों को 7-7 साल की सजा सुनाई। जनरल इरशाद ने ढाका के कीमटी इलाके में कई लोगों को ज़मीनें दिलवायीं, और फिर उन ज़मीनों का कुछ हिस्सा सस्ते दामों में खरीदकर उस पर 'जनता टावर' नाम से एक इमारत का निर्माण करवाया। इस निर्माण पर

खर्च होने वाली बड़ी रकम उन्होंने अपनी तरफ से अदा की। चूँकि यह रकम उनकी आमदनी से कहीं ज्यादा थी, अदालत ने सभी ज़मीनों और जनरल इरशाद की इमारत को सरकारी कानून के तहत ज़ब्त करने का आदेश दिया। अब जनरल इरशाद और उनकी पत्नी दोनों जेल में हैं।

इस तरह की घटनाएँ बताती हैं कि इंसान के जीवन में उस चीज़ को कितना अधिक महत्त्व हासिल है जिसको दीन की परिभाषा में सन्तोष कहा जाता है। जनरल इरशाद का यह दुखद अंजाम इसलिए हुआ कि वे सन्तोष न कर सके। उन्होंने जनरल के पद पर सन्तोष न करके राष्ट्रपति के पद पर पहुँचना चाहा।

उन्होंने छोटी ज़मीन पर सन्तोष न करके बड़ी ज़मीन हासिल करने की कोशिश की। उन्होंने एक मंजिला मकान पर सन्तोष न करके तेरह - मंजिला मकान का मालिक बनना चाहा।

जो कुछ उन्हें स्वाभाविक रूप से मिला था, अगर वे उसी पर संतुष्ट रहते तो खुशी और इत्मीनान के साथ अपना पूरा जीवन बिता सकते थे, लेकिन उन्हें जो मिला था, उस पर वो संतोष न करके, न मिले हुए की ओर दौड़ना शुरू कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि अधिक की चाहत में वे मिले हुए से भी वंचित हो गए।

जीवन की समस्याओं का हल सन्तोष है, न कि लालच।

काबिलियत, न कि सिफ़ारिश

रिटायर्ड ज्वाइण्ट डायरेक्टर पर काम कर रहे मिस्टर अब्दुल मुहीतख़ाँ आजकल फ़ैज़ाबाद में रहते हैं। 28 जून, 1995 को हुई मुलाकात में उन्होंने अपनी सर्विस के दौरान के कई शिक्षाप्रद अनुभव साझा किए। उनमें से एक अनुभव यहाँ प्रस्तुत है।

ए. एम. ख़ान ने 1995 ई. में बनारस हिन्दू यूनीवर्सिटी से इलैक्ट्रीकल इंजीनियरिंग में बी. ई. की डिग्री ली। 1963 ई. में चन्दोली (ज़िला बनारस) के प्राइवेट पॉलिटेक्निक में एक जगह ख़ाली हुई। यह सीनियर लैक्चरर की जगह थी। इसी के साथ कामयाब उम्मीदवार को इलैक्ट्रीकल इंजीनियरिंग डिपार्टमेण्ट के हेड का पद भी सँभालना था।

इसका इण्टरव्यू बनारस के कमिश्नर जे. बी. टँडन के सरकारी आवास पर था। कमिश्नर साहब चन्दोली पॉलिटेक्निक में पदाधिकारी के रूप में उसकी मैनेजिंग कमेटी के अध्यक्ष भी होते थे। अतः वे भी इण्टरव्यू में शरीक थे। इण्टरव्यू बोर्ड के एक सदस्य प्रोफ़ेसर रामसरन थे। दूसरे सदस्य प्रोफ़ेसर गेरोला थे। प्रोफ़ेसर गेरोला बनारस हिन्दू यूनीवर्सिटी में मिस्टर ख़ान के उस्ताद रह चुके थे।

प्रोफ़ेसर रामसरन ने मिस्टर ख़ान से सवाल करते हुए पूछा, "क्या आप जानते हैं कि इंस्ट्रूमेण्ट ट्रांसफोर्मर क्या होता है?":

> Mr. Khan, do you know what is Instrument Transformer?

मिस्टर ख़ान ने अभी सवाल का जवाब नहीं दिया था कि प्रोफ़ेसर गेरोला ने कमिश्नर टंडन को संबोधित करते हुए कहा, "वह सबसे बेहतर उम्मीदवार है, इसके लिए इंटरव्यू देने का कोई सवाल ही नहीं है।":

> He is the best candidate there is no question of Interview.

इसके बाद, उन्होंने ए. एम. ख़ान को सम्बोधित करते हुए कहा, "मिस्टर ख़ान, आप जा सकते हैं।":

> Mr. Khan, you can go.

प्रोफ़ेसर सरन, जिन्होंने सवाल किया था, वे ख़ामोश रहे। मिस्टर ख़ान अपने कागज़ात लेकर कमरे से बाहर निकल गए। एक हफ्ते के बाद इनको नियमानुसार एपॉइण्टमेण्ट लेटर मिल गया। वे चन्दोली पॉलिटेक्निक में सीनियर लैक्चरर हैड ऑफ़ दी डिपार्टमेण्ट इलैक्ट्रीकल इंजीनियरिंग सहित नियुक्त हो गए। उसके बाद उनकी प्रगति होती रही। यहाँ तक कि वे ज्वाइण्ट डायरेक्टर (टेक्निकल एजूकेशन) के पद से रिटायर हुए।

आजकल अक्सर नौजवान यह कहते हुए मिलेंगे कि रोजगार नहीं है, लेकिन सच बात यह है कि जिस प्रकार की योग्यता और कौशल चाहिए, वो उनमें नहीं हैं। मिस्टर ए. एम. ख़ान के साथ उपरोक्त घटना इसीलिए घटी, क्योंकि उन्होंने मेहनत के साथ शिक्षा प्राप्त की। हमेशा अच्छे नंबरों से पास हुए और शिक्षा के दौरान उनका आचरण बहुत आदर्शवादी रहा। प्रोफ़ेसर गेरोला और अन्य संबंधित लोगों के बीच उनकी छवि अत्यंत अच्छी बनी। यही वह कीमत थी जो उपरोक्त शानदार घटना के रूप में उन्हें मिली।

सच्चाई यह है कि हर संस्थान और हर दफ्तर को कुशल कार्यकर्ता की आवश्यकता होती है, क्योंकि उनके बिना काम ठीक से नहीं चल सकता। कोई भी व्यक्ति या संस्था खुद की दुश्मन नहीं होते, इसलिए कोई भी अच्छे काम करने वाले की अवहेलना नहीं करता।

हक़ीक़त यह है कि अच्छा और विश्वासपात्र काम करने वाला दूसरों की ज़रूरत है। आप दूसरों की ज़रूरत बन जाइए, फिर आपके लिए रोज़गार हासिल करना कुछ भी मुश्किल न होगा।

इस संसार की व्यवस्था मूलतः परस्पर लेन-देन पर आधारित है। यहाँ केवल शिकायत करना, विरोध जताना या माँग करना पर्याप्त नहीं होता। जीवन का सरल सिद्धांत यही है — जितना आप योगदान देंगे, उतना ही प्रतिफल आपको मिलेगा। यदि आप रोज़गार पाना चाहते हैं, तो स्वयं को इस योग्य बनाएं कि आपका होना दूसरों के लिए उपयोगी सिद्ध हो। अपने

अंदर वह क्षमता विकसित कीजिए जिसकी दूसरों को आवश्यकता है। फिर आपको किसी से कोई शिकायत नहीं होगी। इसके बाद आप देखेंगे कि आपको रोजगार ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं रहेगी। रोजगार खुद आपको ढूँढ़ लेगा। यहाँ तक कि स्थिति यह हो जाएगी कि आप आगे होंगे और रोजगार आपके पीछे।

जब भी आप दुनिया में कोई जगह चाहें और दुनिया वाले आपको वह जगह देने पर तैयार न हों तो दूसरों की शिकायत न कीजिए, बल्कि यह विश्वास कर लीजिए कि आपके अन्दर कोई कमी है जिसके कारण आप दूसरों के लिए योग्य न हो सके। और फिर उस कमी को दूर करने में लग जाइए। इसके बाद आपको दूसरों से कोई शिकायत न होगी।

बोलने और करने का फ़र्क

दिल्ली में 15 अगस्त, 1995 को एक बैठक में मेरी मुलाकात मिस्टर राजमोहन गांधी से हुई। वे महात्मा गांधी के पोते हैं और अब उनकी उम्र 60 साल हो चुकी है। उन्होंने बताया कि एक बार वे जापान की एक कॉन्फ्रेंस में शामिल हुए थे। वहां एक जापानी डेलीगेट ने उनसे कहा कि मैं पिछले पन्द्रह सालों से विभिन्न स्थानों पर होने वाली कॉन्फ्रेंसों में हिस्सा ले रहा हूँ। मैंने देखा है कि किसी अंतर्राष्ट्रीय कॉन्फ्रेंस में, जहां जापानी और भारतीय दोनों भाग ले रहे होते हैं, अध्यक्ष को हमेशा दो समस्याएं सामने आती हैं। पहली, शर्मीले जापानी को बोलने के लिए राज़ी करना। दूसरी, भारतीय डेलीगेट को यह समझाना कि वह अपना भाषण समाप्त करे।

Chairperson of international seminars has two difficulties :

1. To persuade the shy Japanese to speak.

2. To persuade the Indian delegate to complete his speech.

ऐसा मनुष्य, जिसके स्वभाव में गम्भीरता हो, जो सीखना चाहता हो और जिसके अन्दर काम करने का चाव हो—उसका हाल वही होगा जो उपरोक्त कथन में जापानी का बताया गया है। ऐसा इंसान बोलने से ज़्यादा सुनना चाहेगा। क्योंकि सुनना उसके ज्ञान में वृद्धि करता है। उसका ध्यान अपनी ज्ञानात्मक ज़िम्मेदारियों पर होगा। और जिस आदमी का ज़ेहन अपनी ज़िम्मेदारियों पर लगा हुआ हो, उसका बोलना ख़ुद-ब-ख़ुद कम हो जाता है। कर्म का स्वभाव अपने-आप वक्तृत्व को घटा देता है।

दूसरा व्यक्ति वह है जो संजीदगी से ख़ाली हो, जिसके अंदर ये शौक़ न हो कि वह अपने ज्ञान को बढ़ाए, जो मेहनत से बचता हो — ऐसा व्यक्ति वह होता है जैसा उपरोक्त कथन में भारतीय के बारे में बताया गया है। ऐसा व्यक्ति सबसे अधिक बोलने में रुचि रखता है, क्योंकि उसे यह एहसास नहीं होता कि और भी बातें हैं जिन्हें जानना चाहिए।

ज्यादा बोलना और कम करना दम्भी इंसान की पहचान है और कम बोलना और ज्यादा करना सौम्य इंसान की पहचान।

धैर्य की शक्ति

जमील अहमद साहब (चैन्नई) ने बताया कि वानमबाड़ी के एक मुस्लिम व्यापारी, हाजी मुहम्मद इब्राहीम साहब ने 1910 में यहाँ एक स्कूल की स्थापना की, जो अब प्रगति करते हुए कॉलेज बन चुका है और सफलता से चल रहा है। हाजी मुहम्मद इब्राहीम साहब ने पूरी तरह से अपने आपको स्कूल की सेवा में समर्पित कर दिया था। उस समय पैसे की बहुत कमी थी, इसलिए वे रोज़ाना अपने घर से इस तरह निकलते थे कि उनके हाथ में एक

कश्कोल (झोला) होता था। वे लोगों से मिलकर स्कूल के लिए चन्दा माँगते। कुछ लोग थोड़ा देते और कुछ ज्यादा। वे सारा पैसा उस कश्कोल में डालते और शाम को वापस आकर उसे स्कूल के फण्ड में जमा कर देते।

एक दिन वे वानमबाड़ी के एक धनी व्यापारी के पास पहुँचे। नियमानुसार उनका कश्कोल उनके हाथ में था। उन्होंने उपरोक्त मुसलमान व्यापारी से स्कूल के लिए चन्दा माँगा। व्यापारी ने चन्दा नहीं दिया। इसके बजाय वह मुहम्मद इब्राहीम साहब को सख़्त-सुस्त कहते रहे कि तुम अपना कारोबार ख़राब करके स्कूल के पीछे दौड़ रहे हो। मुहम्मद इब्राहीम साहब उपरोक्त व्यापारी की बात को अत्यन्त ख़ामोशी के साथ सुनते रहे। उन्होंने उनकी बातों का कोई जवाब नहीं दिया। आख़िर में मुहम्मद इब्राहीम साहब ने उनसे कहा : 'हर आदमी जो - कुछ देता है, उसको मैं इस कश्कोल में डाल देता हूँ। आपने जो कुछ दिया उसको भी मैंने कश्कोल में डाल दिया।' यह कहकर उन्होंने उपरोक्त व्यापारी को सलाम किया और इतमीनान के साथ वापस आ गए।

यह बिलकुल सादा वाक्य उस व्यापारी के लिए इतना कठोर साबित हुआ कि वह रात भर सो नहीं सका। अगले दिन और रात भी उसकी बेचैनी बनी रही, यहाँ तक कि तीसरे दिन उसने हाजी मुहम्मद इब्राहीम साहब को बुलाया और उनसे अपने रवैये के लिए माफी मांगी। इसके बाद उसने घर से अशरफियाँ मंगवायीं और उनका कश्कोल अशरफियों से भर दिया।

याद रहे अगर मुहम्मद इब्राहीम साहब व्यापारी की बात पर उत्तेजित हो जाते, तो केवल बेकार का टकराव होता, लेकिन जब उन्होंने नकारात्मक रवैये का जवाब सकारात्मक तरीके से दिया, तो केवल शब्द ही उनकी जीत के लिए काफी साबित हुए।

सब्र का करिश्मा

मैंने 23 जुलाई, 1993 को जुमा की नमाज़ पहाड़गंज (दिल्ली) की मस्जिद संगतराशान में पढ़ी। उस मस्जिद के चारों तरफ़ पूरी तरह से हिन्दू आबादी बसी हुई है। 1947 के बाद यह मस्जिद बन्द हो गई थी और यहाँ महल्ले के लोग कूड़ा डालते थे। 1982 में दिल्ली के एक मुसलमान जनाब महमूद सईद बिलाली (पैदाइश 1953) को यह विचार आया कि इस मस्जिद को फिर से आबाद किया जाए।

उन्होंने प्रयास करके इस मस्जिद को फिर से खोला। उसकी सफाई और मरम्मत कराई। अब सवाल यह था कि उसे आबाद कैसे किया जाए, क्योंकि वहाँ आसपास मुसलमान नहीं रहते थे। इसके लिए उन्होंने एक उस्ताद रखकर यहाँ एक मदरसा खोल दिया। दो दर्जन मुसलमान बच्चे वहाँ रहने और पढ़ने लगे। इस प्रकार, यहाँ पाँचों वक्त की नमाज़ अदा होने लगी।

महमूद सईद बिलाली साहब ने अपने जानकारों को इस मस्जिद के बारे में बताया, तो जुमा के दिन काफी लोग यहाँ आने लगे। धीरे-धीरे मस्जिद नमाजियों से भरने लगी। बिलाली साहब ने छात्रों और नमाजियों के लिए एक योजना बनाई कि मस्जिद के आँगन के आधे हिस्से में छत डालकर एक सायबान बनाया जाए। उन्होंने काम शुरू किया, साँचा तैयार हो गया और उस पर छत का निर्माण शुरू हो गया।

यह 9 मार्च, 1991 की घटना है। अचानक लगभग डेढ़ सौ हिन्दू जमा हो गए जिनमें अधिकांश नौजवान थे। उन्होंने कहा कि हम छत बनने नहीं देंगे। तुम इस छत को उतारो, वरना यहाँ ख़ून-ख़राबा हो जाएगा और तुम्हारी मस्जिद भी बाक़ी नहीं रहेगी। एक छात्र ने पुलिस स्टेशन जाकर उन्हें ख़बर कर दी। इसके बाद बड़ी संख्या में पुलिस आ गई। इनमें पुलिस अफ़सर भी थे। पुलिस ने घटनास्थल की जाँच करने के बाद कहा कि यह निर्माण कानून

के अन्तर्गत हो रहा है, इसलिए कोई इसको रोक नहीं सकता। पुलिस ने मुसलमानों से कहा कि तुम लोग छत बनाओ, हम यहाँ खड़े हुए हैं।

महमूद सईद बिलाली ने सोचा कि अगर मैं पुलिस के कहने से छत का काम जारी रखूँ तो यह पुलिस वाले यहाँ कब तक मेरी रक्षा करेंगे, आख़िरकार तो मामला उन्हीं पड़ोस के हिन्दुओं से रहेगा और वे छत तो क्या, मस्जिद भी तोड़कर रख देंगे और कोई उन्हें रोक न सकेगा। बिलाली साहब इन्हीं विचारों में थे कि हिन्दुओं की भीड़ में से एक बूढ़ा आदमी आगे आया। उसने कहा कि मियाँजी, इस समय ये लोग बहुत जोश में हैं, कुछ भी कर सकते हैं। तुम ज़िद न करो और अपनी छत उतार दो।

बिलाली साहब ने तुरन्त इस सलाह को मान लिया। उन्होंने कहा कि यह बड़े मियाँ जिस तरह तुम्हारे बड़े हैं उसी तरह मेरे भी बड़े हैं। मैं इनकी बात मानता हूँ और उसी समय मज़दूरों से कह दिया कि छत उतार दो। अतएव छत उतार दी गई। उस समय तक उस छत पर 25 हजार रुपये ख़र्च हो चुके थे।

इस घटना का इलाक़े के तमाम हिन्दुओं पर बहुत अच्छा असर पड़ा। सबके सब मस्जिद और मस्जिद वालों के हमदर्द बन गए। अब यहाँ लाउडस्पीकर की अज़ान के साथ पाँच वक्ता नमाज़ होती है। पाबन्दी से जुमा होता है। इस्लामी शिक्षा का एक मदरसा चल रहा है। रमज़ान में शानदार तरावीह होती है, आदि। मगर हिन्दुओं की तरफ़ से कोई रुकावट नहीं, वे लोग प्रायः कहते रहते हैं कि आपको कोई ज़रूरत हो तो हमको बताइए। अगर कोई हिन्दू आप को परेशान करे तो तुरन्त हमको बताइए। हम उससे निपट लेंगे।

6 दिसम्बर, 1992 को जब यह ख़बर फैली कि अयोध्या की बाबरी मस्जिद तोड़ दी गई। सारी दिल्ली में तनाव की सूरत पैदा हो गई। कई जगह

हिन्दू व मुस्लिम दंगे भी हुए। उस इलाके में भी तनाव की हालत थी। जबकि उस समय मस्जिद में 23 मुस्लिम बच्चे मौजूद थे।

महमूद सईद बिलाली साहब उस समय जामा मस्जिद के इलाके में थे और कुछ नहीं कर सकते थे, लेकिन पड़ोस के हिन्दू उनके मददगार बन गए। वे खुद मस्जिद में आए, बच्चों को लेकर एक नजदीकी स्कूल में रखा, उनकी खाने-पीने की व्यवस्था की और फिर तमाम बच्चों को सुरक्षा के साथ उनके घरों तक पहुँचाया।

अगर बिलाली साहब हठधर्मी करते और अकड़ दिखाते, तो दूसरी तरफ़ भी ज़िद और अकड़ उत्पन्न होती, और फिर दंगा भड़क जाता। लेकिन जब उन्होंने नरमी और विनम्रता का तरीका अपनाया, तो दूसरी तरफ़ भी नरमी और विनम्रता पैदा हो गई। इसके परिणामस्वरूप, अब तक जहाँ दंगे का माहौल था वहाँ शान्ति के माहौल बन गया।

साज़िश के बावजूद

मेरे पूना के एक सफ़र में वहाँ के लोगों ने बताया कि पूना में 22 सितम्बर, 1991 को गणेशचतुर्थी का जुलूस निकलने वाला था। उसी दिन रबीउल अव्वल की 12 तारीख़ भी थी और उस दिन को लेकर मुसलमान अपना ईद मिलादुन्नबी सल्ल. का जुलूस निकालना चाहते थे। अगर दोनों जुलूस एक ही दिन निकलते, तो निश्चय ही दोनों में टकराव होता और साम्प्रदायिक दंगे की संभावना बन जाती। इससे जश्न का दिन शहर के लिए मातम का दिन बन जाता।

पूना की सीरत कमिटी की समझदारी से यह ख़तरा टल गया। उन्होंने एक सम्मेलन करके मशवरा किया कि ऐसी स्थिति में क्या किया जाए। आम सहमति से फ़ैसला हुआ कि इस मामले में विमुखता का तरीका अपनाया

जाए। उन्होंने अपनी तारीख़ बदल दी और ईद मिलादुन्नबी का जुलूस कुछ दिन बाद यानि 27 सितम्बर को निकालने का निर्णय लिया। इस प्रकार, हिन्दू और मुसलमान दोनों जुलूस शान्तिपूर्वक और अलग-अलग तारीख़ों में निकले, और किसी भी तरह की झगड़े की स्थिति उत्पन्न नहीं हुई।

इस घटना पर शहर के तमाम लोग बहुत ख़ुश हुए और मुसलमानों की अक्लमन्दी को सराहा। ख़ास तौर से पुलिस के लोगों ने बहुत ज़्यादा ख़ुशी व्यक्त की और मुसलमानों के इस कार्य की प्रशंसा की। उन्होंने मुसलमानों से मिलकर उनका शुक्रिया अदा किया। दंगा न होना पुलिस के लिए एक विभागीय कारनामे की हैसियत रखता है, और निश्चित रूप से पुलिस के लोग चाहते हैं कि यह कारनामा उनके खाते में खताया जाए।

पूना की सीरत कमिटी ने जब तारीख़ की तब्दीली का फ़ैसला किया तो उसी समय उन्होंने उसकी ख़बर मराठी अख़बारों में प्रकाशित करा दी। इस तरह पूरे महाराष्ट्र के मुसलमानों को उसकी ख़बर हो गई। फलतः दूसरे जिन स्थानों पर दोनों जुलूस एक ही दिन निकलने वाले थे, वहाँ भी इसी तरह मुसलमानों ने अपने जुलूस की तारीख़ को बदल दिया। इसके नतीजे में पूरा महाराष्ट्र दंगे की आग से बच गया।

साम्प्रदायिक हिंसा से बचने की सबसे प्रभावी युक्ति विमुखता का यही तरीका है। जहाँ भी लोगों ने इस युक्ति को अपनाया, वहाँ दंगे नहीं हुए। दंगे के बम को निष्क्रिय करने का यही एकमात्र समाधान है। दंगा हमेशा गुस्से के कारण होता है, न कि साज़िश के तहत।

शालीनता की शक्ति

1979-1984 के दौरान भारत के उपराष्ट्रपति रहे मुहम्मद हिदायतुल्लाह साहब (1905-1992) के जीवन की एक घटना है, जो उनके पी. ए. मिस्टर

अतहर सिद्दीकी एम. ए. ने मुझे बताई। उन्होंने कहा कि एक बार पंजाब के सिख नेताओं का एक प्रतिनिधिमंडल हिदायतुल्लाह साहब से मिलने के लिए नई दिल्ली आया। वे लोग अपनी पारंपरिक रीति के अनुसार, किरपानें लगाए हुए थे। वाइस प्रेज़िडेंट के सरकारी आवास पर सुरक्षा अधिकारी ने उन्हें कहा कि आप लोग अपनी किरपानें बाहर हमारे पास रखें, फिर अंदर जाकर वाइस प्रेज़िडेंट से मिलें। लेकिन वे लोग अपनी किरपानें बाहर छोड़ने के लिए तैयार नहीं हुए।

अब बात बढ़ी। सिक्योरिटी अफ़सर ने टेलीफोन के ज़रिए वाइस प्रेजिडेण्ट के सिक्योरिटी से सम्पर्क किया और स्थिति बताई। सिक्योरिटी ने ऑर्डर दे दिया कि उन्हें किरपानों के साथ अन्दर मत जाने दो और अगर वे इस तरह अन्दर जाने की ज़िद करें तो उन्हें गिरफ़्तार कर लो।

अतहर सिद्दीक़ी साहब ने बताया कि उन्होंने मौके की नज़ाकत को महसूस किया और तुरंत अंदर जाकर हिदायतुल्लाह साहब से मुलाकात की। उन्होंने बताया कि यहाँ इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न हो गई है और सिक्योरिटी अफसर और सेक्रेटरी का रवैया पूरी तरह से सूझ-बूझ के खिलाफ है। उन्होंने सुझाव दिया कि हिदायतुल्लाह साहब सीधे मिलिट्री अफसर से कहें कि वे उन लोगों को न रोकें और उन्हें किरपानें पहनकर अंदर आने दें। हिदायतुल्लाह साहब ने मामले की नज़ाकत को समझा और इसके अनुसार सिक्योरिटी अफसर को टेलीफोन पर निर्देश दे दिया।

उन्होंने कहा कि क्या हम नीचता करेंगे कि यहाँ आकर आपके ऊपर इन किरपानों से हमला कर दें! आप हमारे लिए बाप के समान हैं। हम तो ऐसा कभी सोच भी नहीं सकते।

किसी बात के मर्म को समझना सबसे बड़ी ताकत है। अगर आप मर्मज्ञता का तरीका अपनाएँ तो सशस्त्र दुश्मन भी अपने हथियारों को फेंक देगा और आपकी इंसानियत को देखते हुए आपके क़दमों पर गिर जाएगा।

संघर्ष से महानता

घनश्याम दास बिड़ला के पोते आदित्य विक्रम बिड़ला का 1 अक्टूबर 1995 को अमेरिका के शहर बालटीमोर में निधन हो गया। उस समय उनकी उम्र सिर्फ़ 51 साल थी। वे 8 हज़ार करोड़ रुपये के इण्डस्ट्रियल एम्पायर के चेयरमैन थे। उन्होंने अपनी असाधारण योग्यता के ज़रिये अपने कारोबार को भारत से लेकर विदेशों तक फैला दिया था।

आदित्य बिड़ला अत्यन्त बुद्धिमान और उच्च शिक्षा प्राप्त थे। उन्होंने बहुत पहले इस बात को महसूस कर लिया था कि सुरक्षा (protection) की पॉलिसी इण्डिया के उद्योग के लिए हितकारी नहीं है। वे कहते थे कि बिज़निस में केवल उस समय प्रगति हो सकती है जबकि वह अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर टिक सके:

> Business can progress only when it is internationally competitive.
>
> वे एक बहुत ही साहसी व्यक्ति थे। उनके बारे में किसी ने कहा था:
>
> The world was his market and efficiency was his strategy.
>
> “पूरी दुनिया उनका बाज़ार थी और उत्कृष्ट कार्यकुशलता उनका तरीका”।
>
> वे भारतीय सरकार की संरक्षणवादी नीति के कट्टर विरोधी थे। एक बार उन्होंने कहा था:

"हम प्रतिस्पर्धा से नहीं डरते, बल्कि प्रतिस्पर्धा को हमसे डरना चाहिए"

We are not afraid of competition; let competition be afraid of us.

यही इस संसार के जीवन में प्रगति का रहस्य है। ख़ुदा ने इस दुनिया की व्यवस्था मुकाबले के उसूल पर बनायी है। इस दुनिया में कोई बड़ी जगह केवल उसी को मिलती है जो मुक़ाबले की हिम्मत रखता हो। सुरक्षा और सुविधा के द्वारा इस दुनिया में कोई बड़ी कामयाबी मिलना सम्भव नहीं।

समस्याओं का सामना करके ही इंसान अपनी ताक़त को निखार सकता है। यह कार्य एक साधारण व्यक्ति को असाधारण व्यक्ति बना देता है।

नए युग की राह पर

वार ऑफ़ इण्डिपेण्डेंस के नाम से अमेरिका में 18वीं शताब्दी (1775- 83) में एक जंग हुई। इसके बाद अमेरिका में ऐसे लीडर उभरे जिन्होंने जंग की बजाए अमन के हिमायत की। उन्हीं में से दूसरे अमेरिकी राष्ट्रपति जॉन एडम्स है जिनको अराजनीतिक राजनेता (Nonpolitical Politician) कहा जाता है। 1783 ई. में पेरिस सन्धि के तहत जब बरतानिया ने उसको आज़ादी दे दी तो उसके बाद अमेरिका ने अपना अलग रास्ता चुन लिया। अब सारा ज़ोर शिक्षा, विज्ञान, शोध, इण्डस्ट्री, सिटी प्लानिंग और युवा पीढ़ी के चरित्र-निर्माण पर दिया जाने लगा।

यही घटना जापान में भी घटी जिसको वे लोग उल्टे अमल (Reverse Course) का नाम देते हैं। दूसरे विश्वयुद्ध तक जापान भीड़ के रास्ते पर चल

रहा था। मगर दूसरे विश्वयुद्ध के तजुर्बात के बाद उसने अपना रास्ता बदल दिया। अब उसने जंग के तरीके को मुकम्मल रूप से छोड़ दिया। उसके बजाए उसने शिक्षा के मैदान में अपना सारा ध्यान मोड़ दिया। साइंस और टेक्नोलॉजी में प्रगति को अपना लक्ष्य बना लिया। इसका नतीजा यह हुआ कि चालीस साल में इतिहास बदल गया। उल्टे अमल का यह मरहला हर क़ौम के लिए पेश आता है। जो लोग ऐसा करें, वे कामयाब रहते हैं और जो लोग ऐसा न कर सकें वे नाकाम होकर रह जाते हैं। अमेरिका और जापान दोनों इस उल्टे अमल को अपनाने की मिसाल हैं।

वर्तमान समय के मुसलमानों के लिए भी अब यही समय आ गया है वे लम्बी अवधि से बहुसंख्यक वर्ग से नाराज़ होकर उनके साथ बेकार के टकराव की नीति अपनाए हुए थे। अब ज़रूरत है कि इस बाहरी नीति को छोड़ दिया जाए और उसके बजाए आन्तरिक नीति अपनायी जाए। अर्थात् अपनी कमियों का इकरार करते हुए स्वयं अपने निर्माण में सारा ध्यान लगा दिया जाए। मुसलमानों के मसलों का यही एकमात्र हल है और इसी को उन्हें दिल से अपना लेना चाहिए।

ईश्वर का अटल नियम

एक दुकानदार की कहानी है, जिसका कारोबार घी के व्यापार से जुड़ा हुआ था। शुरुआत में वह एक मामूली फुटकर विक्रेता था, लेकिन धीरे-धीरे उसका कारोबार बढ़ता गया और वह घी का होलसेल व्यापारी बन गया। उसके यहाँ एक मुनीमजी थे, जो शुरू से ही उसके साथ काम कर रहे थे।

मुनीमजी का दोपहर का खाना उनके घर से आता था। उनका बेटा रोज़ाना टिफ़िन कैरियर में खाना लेकर आता। यह टिफ़िन कैरियर असाधारण रूप से बड़ा था। लोग मजाक में मुनीमजी से कहा करते थे, “तुम अकेले

खाने वाले हो और रोज़ाना दस आदमियों का खाना मँगवाते हो!" यह सिलसिला सालों तक चलता रहा।

एक दिन ऐसा हुआ कि मुनीमजी का बेटा उनको खाना खिला कर टिफ़िन कैरियर लेकर वापस जा रहा था, कि वह दुकान की सीढ़ी पर लड़खड़ाकर गिर पड़ा। साथ ही टिफ़िन कैरियर भी गिर गया और उसके सारे डिब्बे खुल गए। डिब्बे खुलने के बाद पता चला कि उन सभी डिब्बों में घी भरा हुआ था।

उस कारोबारी ने यह मंज़र देख लिया। वह तुरन्त समझ गया कि मुनीमजी इतने बड़े टिफ़िन कैरियर में खाना क्यों मँगाते थे। उसके बाद वह मुनीमजी को लेकर अन्दर गोदाम के कमरे में गया। उसने मुनीमजी से कहा कि तुम देख रहे हो कि कितने ज़्यादा कनस्तर मेरे गोदाम में भरे हुए हैं, तुम्हारे साथ मेरा सम्बन्ध शुरू से रहा है। तुम यह भी जानते हो कि 15 साल पहले जब मैंने यह कारोबार शुरू किया था, मेरे पास पूँजी कम थी। घी का केवल एक कनस्तर लाकर उसको फुटकर में बेचता था। फिर धीरे-धीरे मेरा कारोबार बढ़ा। यहाँ तक कि आज मैं शहर का एक बड़ा होलसेल डीलर हूँ। अब तुम अपनी हालत का और मेरी हालत का मुक़ाबला करो। तुम सालोंसाल से रोज़ाना अपने टिफ़िन कैरियर में घी भरकर यहाँ से ले जा रहे हो, मगर हाल यह है कि तुम्हारी जो हालत पहले थी, वही हालत आज भी है। और इसी अवधि में मुझको ख़ुदा ने कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया। अब तुम स्वयं अपनी आँखों से देख सकते हो कि लुटने वाला फ़ायदे में है या लूटने वाला !

इस संसार को बनाने वाले ने इस को इस तरह से बनाया है कि केवल वैध कमाई करने वाला व्यक्ति ही प्रगति कर सकता है। अवैध कमाई करने वाला व्यक्ति अंततः यहाँ तबाह और बर्बाद हो कर रह जाता है।

काँटे भी, फूल भी: समाज की दो तस्वीरें

हम 16 जून, 1993 के *हिन्दुस्तान टाइम्स* या *टाइम्स ऑफ़ इंडिया* में दो बिलकुल अलग प्रकार की ख़बरें पढ़ सकते हैं। एक ख़बर के अनुसार, दिल्ली का एक व्यापारी कृष्णकुमार (45 साल) पंजाब नेशनल बैंक (कैशूपुरम) से चार लाख पैंतालीस हज़ार रुपये लेकर वापस आ रहा था, जब रास्ते में दोपहर के बारह बजे चार नौजवान सफ़ेद मारुति कार पर आए, उन्होंने व्यापारी के स्कूटर को रोका, रिवॉल्वर से गोलियाँ चलाकर उसे गिरा दिया और उसका ब्रीफकेस लेकर फ़रार हो गए।

वहीं दूसरी ओर, दोनों अख़बारों में एक और ख़बर है। दिल्ली के एक हैड कांस्टेबल प्रेमपाल (करोल बाग़) रात को गश्त कर रहे थे, जब उन्होंने सूर्यकिरन होटल के पास एक ब्रीफकेस पड़ा हुआ पाया। उन्होंने उसे खोला और उसमें अन्य कागज़ात के अलावा 97 हज़ार 4 सौ रुपये नकद पाए। उन्होंने तुरन्त ब्रीफकेस को बंद किया और थाने में जमा करा दिया। अब थाने के ज़िम्मेदार ब्रीफकेस के असल मालिक को तलाश रहे हैं।

यह एक सांकेतिक ख़बर है जो बताती है कि समाज में हमेशा दोनों प्रकार के लोग होते हैं। अच्छे भी और बुरे भी। इसलिए किसी समाज के बारे में राय कायम करते हुए आदमी को बहुत अधिक सावधान रहना चाहिए। उसको न एक तरफ़ पूरी तरह झुक जाना चाहिए और न दूसरी तरफ़।

उपरोक्त ख़बरों में अगर कोई व्यक्ति ऐसा करे कि वह केवल कृष्णकुमार की घटना को ले और उसे आम बनाकर यह कहे कि हिन्दुस्तान के लोग तो सबके सब क़ातिल और लुटेरे हैं, तो उसकी यह राय ठीक न होगी। इसी तरह कोई व्यक्ति प्रेमलाल की घटना को ले और उसको सामान्य सूरत देकर यह कहने लगे कि हिन्दुस्तान के तमाम आदमी अत्यन्त ईमानदार हैं तो यह बात भी सत्य के अनुसार न होगी।

हकीकत यह है कि समाज में दोनों तरह के लोग पाए जाते हैं। हमें इस दुनिया में इस तरह जीना है जैसे हम काँटे और फूल दोनों से भरे रास्ते पर चल रहे हों। ऐसे रास्ते के मुसाफ़िर के लिए सफल यात्रा की युक्ति केवल एक है— वह काँटों से अपना दामन बचाए और फूलों से आनंद लेते हुए अपनी मंज़िल की तरफ़ बढ़ता रहे।

निर्बल भी बलवान है

जॉर्ज बेदात (1899 –1983 ई.) एक फ्रांसीसी राजनेता थे। उनके आम विचारों से सहमत होना मुश्किल है। परन्तु उनका एक कथन बहुत अर्थपूर्ण है। उन्होंने कहा है कि कमज़ोर आदमी के पास एक हथियार होता है और वह है उन लोगों की ग़लतियाँ, जो यह समझें कि वे ताकतवर हैं:

> The weak have one weapon, the errors of those who think they are strong.
>
> —George Bidault

मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता यही है कि वह स्वयं को अपराजेय मान बैठता है। जो इंसान खुद को बहुत ताकतवर मान लेता है, वह निश्चित रूप से गलतियाँ करेगा। ऐसा व्यक्ति अक्सर ताकत के घमंड में आकर युक्ति की उपेक्षा करने लगता है। और जो इंसान युक्ति से बेपरवाह हो जाए, उसकी हार निश्चित हो जाती है—क्योंकि इस दुनिया में कोई भी इतना ताकतवर नहीं है कि उसे युक्ति की ज़रूरत न पड़े।

जब कोई व्यक्ति यह महसूस करे कि उसका विरोधी ताकत के घमंड में आकर उसे सताने की कोशिश कर रहा है, तो उसे समझ लेना चाहिए कि अब विरोधी स्वयं ही उसको अपने विरुद्ध हथियार सौंप रहा है। ऐसी

स्थिति में व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने विरोधी की गतिविधियों की पूरी जानकारी हासिल करने का प्रयास करे।

आदमी को उसका अध्ययन अनिवार्य रूप से इस नतीजे पर पहुँचाएगा कि विरोधी के अन्दर अमुक कमज़ोरी पैदा हो गई है और वह धीरे-धीरे बढ़ रही है। आदमी को चाहिए कि वह उस कमज़ोरी को जाने और उसका भरपूर इस्तेमाल करे। वह निश्चित रूप से विरोधी को पराजित करने में कामयाब हो जाएगा।

इस दुनिया में कमज़ोर भी ताक़तवर है और ताक़तवर भी कमज़ोर। ख़ुदा ने किसी भी व्यक्ति को यह हैसियत नहीं दी कि वह पूर्णरूपेण कमज़ोर हो जाए या पूर्णरूपेण ताक़तवर बन जाए। इस दुनिया में हर एक को यह अवसर हासिल है कि वह प्रत्यक्ष में ख़राब माहौल में भी कामयाबी के अवसर पा ले। शर्त केवल यह है कि उसने अपनी बुद्धि को उचित रूप से इस्तेमाल किया हो।

मौत कि छलाँग

17 नवम्बर, 1995 को दैनिक हिन्दुस्तान टाइम्स (दिल्ली) के पहले पृष्ठ पर एक सचित्र कहानी छपी। यह एक मुर्दे की कहानी है जो ज़िन्दा लोगों के लिए एक दर्दनाक सीख है।

मिस्टर एम. एन. अरोड़ा (दिल्ली) की बीस वर्षीय भतीजी सारिका होरा (Sarika Hora) पूना में इंजीनियरिंग के तीसरे साल की छात्रा थी। अक्टूबर, 1995 में वह अपने परिवार के साथ दीवाली मनाने के लिए दिल्ली आई। 27 अक्टूबर को वह निज़ामुद्दीन रेलवे स्टेशन से गोवा एक्सप्रेस पर सवार हुई, ताकि पूना पहुँचकर वह फिर से अपने अकादमिक सेशन में शामिल हो सके।

रेलवे स्टेशन पर उसके घर वालों ने उसको विदा किया। वह अपने एक साथी छात्र के साथ अत्यन्त प्रसन्नता में अपनी मंज़िल की तरफ़ जा रही थी। उस ट्रेन के हर दो डिब्बों के बीच में अन्दर का रास्ता बना हुआ था। ट्रेन ग्वालियर और झाँसी के बीच थी कि वह लड़की उठी ताकि एक कोच से दूसरे कोच में जा सके। वह कोच की देहलीज़ (Vestibule) में पहुँची। यहाँ नियम के अनुसार, दोनों कोच के बीच गुज़रने की प्लेट (Stepping Plate) होनी चाहिए थी। मगर किसी वजह से वह वहाँ मौजूद न थी। लड़की ने उसकी परवाह न की। उसने चाहा कि क़दम बढ़ाकर इस कोच से उस कोच में पहुँच जाए। मगर वह उसमें कामयाब नहीं हुई। उसका पाँव अगले कोच तक पहुँचने के बजाए बीच की ख़ाली जगह पर पड़ गया। अचानक वह तेज़ दौड़ती हुई ट्रेन के नीचे चली गई और सेकेण्डों में उसका जिस्म टुकड़े-टुकड़े हो गया।

इस बात का संबंध केवल रेल के सफ़र से नहीं है। जीवन के व्यापक सफ़र में भी बार-बार ऐसे अवसर आते हैं जब हमें एक स्थिति से दूसरी स्थिति तक पहुँचने के लिए किसी गुज़रने वाली प्लेट (Stepping Plate) की ज़रूरत होती है। ऐसे समय में सबसे पहला कदम यह होना चाहिए कि ठहरकर यह देखा जाए कि हमारे क़दमों के नीचे वास्तव में कोई विश्वसनीय प्लेट है, जिससे होकर हम आगे बढ़ सकते हैं। अगर ऐसी सुविधा मौजूद नहीं है, तो बिना सोचे-समझे आगे बढ़ने की कोशिश करना मौत की छलाँग लगाना होगा, न कि प्रगति और सफलता की दिशा में कदम बढ़ाना।

माहौल शांत हो गया

नई दिल्ली की यूनिवर्सिटी जामिया मिल्लिया इस्लामिया के कॉन्फ्रेंस हॉल में 8 फरवरी, 1993 को एक सेमिनार आयोजित किया गया था। यह सेमिनार

ज़ाकिर हुसैन इंस्टीट्यूट ऑफ़ इस्लामिक स्टडीज़ के तहत किया गया था, और इसका विषय था: धर्म और इंसानी दोस्ती। इस अवसर पर जिन लोगों ने तकरीरें कीं, उनमें से एक डॉक्टर बिशम्भरनाथ पाँडे भी थे।

डॉक्टर पाँडे ने अपनी तकरीर में कुछ घटनाएँ साझा कीं, जिनमें से एक घटना यह थी कि बालाघाट (मध्यप्रदेश) में 1926 में हिन्दुओं का एक जुलूस निकाला गया था। उस जुलूस की अगुवाई स्वामी सत्यदेव कर रहे थे। उनकी योजना यह थी कि मुसलमानों को भड़काकर शहर में साम्प्रदायिक दंगा फैलाया जाए। यह जुलूस जानबूझकर जुमे के दिन निकाला गया। लगभग दस हजार हिन्दू, बाजे बजाते हुए और नारे लगाते हुए, ठीक जुमे की नमाज़ के समय मस्जिद के सामने पहुँचे और वहाँ ठहरकर शोर-शराबा करने लगे।

करामत हुसैन साहब शहर के एक प्रसिद्ध राजनीतिक कार्यकर्ता थे। इनको पहले से उपरोक्त योजना का हाल मालूम हो गया था। अतः वे अपने सौ साथियों को लेकर पहले से उस मस्जिद में आ गए थे। उन्होंने अग्रिम रूप से अपने हर साथी को फूलों का एक-एक हार दे दिया था। जब जुलूस मस्जिद के सामने आ कर ठहर गया, तो उन्होंने आम मुसलमानों से कहा कि आप लोग बिलकुल शान्त रहें। उसके बाद करामत हुसैन साहब सोचे-समझे नक्शे के अनुसार, अपने साथियों के साथ मस्जिद से निकल कर सड़क पर आए। उन लोगों ने जुलूस से न रूट बदलने की बात की और न नारा बन्द करने की माँग की। उन्होंने कहा कि हम आपका स्वागत करते हैं। यह कह कर वे जुलूस के सामने आ गए और एक-एक हिन्दू को हार पहनाना शुरू किया। उसके बाद पूरा वातावरण बदल गया। जुलूस के लोगों के सिर शर्म से झुक गए। उनके नारे अपने-आप बन्द हो गए। जो लोग मरने मारने के इरादे से आए थे, वे मुसलमानों से गले मिलने लगे। दुश्मनी का माहौल अचानक दोस्ती के माहौल में तब्दील हो गया।

हर इंसान के अन्दर फितरी तौर पर इंसानियत रखी गई है। जब कोई इंसान किसी दूसरे इंसान का दुश्मन बनता है, तो यह केवल अस्थायी उत्तेजना के कारण होता है। यदि समझदारी से उस अस्थायी गुस्से को शांत कर दिया जाए, तो बाद में वही इंसान अपनी असल स्वभाव पर लौट आएगा। और फिर वही इंसान जो प्रत्यक्ष में आपका दुश्मन दिखाई दे रहा था, आपका गहरा दोस्त बन जाएगा।

तरक़्क़ी के मौक़े

एक सर्वे के अनुसार, भारत में इस साल के सबसे अमीर व्यक्ति बैंगलौर के एक मुसलमान थे, जिनका नाम अज़ीम हाशिम प्रेमजी था। उस वर्ष उनकी पूँजी 176 बिलियन रुपये थी। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस दुनिया में प्रगति के अवसर असीमित हैं। यहाँ तक कि यह भी संभव है कि किसी अल्पसंख्यक समुदाय का व्यक्ति प्रगति करके बहुसंख्यक वर्ग से भी आगे बढ़ जाए। (*टाइम्स ऑफ़ इंडिया*, 27 जून, 1999)

प्रमुख शिक्षा संस्थान इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ़ टैक्नॉलोजी (मुम्बई) के 37वें दीक्षान्त समारोह के अवसर पर अपने कॉन्विकेशन एड्रेस में जनाब अज़ीम हाशिम ने अपने अनुभव बताए। इससे मालूम होता है कि अज़ीम हाशिम की प्रगति 25 साल की लगातार मेहनत का नतीजा है। उन्होंने लम्बी अवधि तक यह किया कि एक तरफ़ स्वयं अपनी क्षमताओं को आख़िरी हद तक अपने कारोबार में लगा दिया, दूसरी तरफ़ उन्होंने बार-बार सफ़र करके देश भर के उच्च योग्यता रखने वाले नौजवान हासिल किए और उनके ज़रिए एक बेहतरीन टीम तैयार की। उन्होंने अपने और दूसरों के अनुभवों से शिक्षा ली। उनका कहना है कि कामयाबी का सबसे बड़ा रहस्य कभी ख़त्म न होने वाली सख़्त मेहनत है। इस तरह लम्बी योजना और कार्य के

ज़रिए उन्होंने अपनी मौजूदा कामयाबी हासिल की। अज़ीम हाशिम ने कहा: 'भविष्य वह नहीं है जो आपके सामने आता है, बल्कि भविष्य वह है जिसे आप स्वयं बनाते हैं।'

वर्तमान संसार में हर व्यक्ति वही प्रगति प्राप्त कर सकता है जो किसी दूसरे ने हासिल की है। शर्त केवल यह है कि अपने लक्ष्य के लिए आवश्यक कदम उठाए जाएं।

वह कदम क्या हैं? वह कदम हैं — उद्देश्य की स्पष्ट समझ, उसे पाने का दृढ़ संकल्प, अपनी पूरी क्षमता को उस उद्देश्य में लगा देना, योग्य लोगों के साथ मिलकर सामूहिक प्रयास करना, हर चुनौती से नया हौसला प्राप्त करना, और अपनी जानकारी में निरंतर वृद्धि करते रहना। यही इस दुनिया में सफलता के मूल सिद्धांत हैं। और जो व्यक्ति इन सिद्धांतों को पूरी तरह से अपनाता है, उसके लिए प्रगति उतनी ही विश्वसनीय हो जाती है जितना कि शाम के बाद सुबह का निकलना।

बीते कल से आज तक

एक व्यक्ति के पास एक उपजाऊ जमीन थी। उसने उसमें कुछ बीज बोए और अपने बेटों से कहा, "मैं शायद जिन्दा न रहूँ, लेकिन बीस साल बाद तुम यहाँ फलदार पेड़ों का एक बाग़ देखोगे और उससे फायदा उठाओगे।" बीस साल बाद, बेटों ने उस ज़मीन को देखा, लेकिन वहाँ केवल चटियल मैदान था। वहाँ न कोई पेड़ था और न फल।

बेटों ने जाँच की तो मालूम हुआ कि बाप ने नादानी के तहत पत्थरों के टुकड़ों को बीज समझ लिया था। बाप ने ज़मीन में पानी दिया और कुछ चीज़ बिखेरी, मगर वे बीज नहीं थे, पत्थर के छोटे छोटे टुकड़े थे। निश्चय ही पेड़ों का बाग़ बीजों से निकलता है, न कि पत्थर के टुकड़ों से।

अगर किसी क़ौम को आप देखें कि उसके लीडर अतीत में सौ साल तक बड़े- बड़े आन्दोलन चलाते रहे। वे क़ौम के सामने आकर्षक शब्द बोलते रहे और उसको बड़ी-बड़ी उम्मीदें दिलाते रहे। मगर वर्तमान में वह क़ौम इस तरह दाख़िल होती है कि उसकी हैसियत केवल एक बर्बाद समूह की है। उसका कोई भी मामला सही नहीं, किसी भी पहलू से उसके क़दमों के नीचे वह शक्तिशाली ज़मीन नहीं, जिस पर क़ौम खड़ी होती हैं।

ऐसी हालत में यह कहना सही होगा कि अतीत के लीडरों ने पेड़ के बीज नहीं बोए थे, बल्कि बीज के नाम पर पत्थर के टुकड़े बिखेरे थे और पत्थर के टुकड़े कभी किसी क़ौम के लिए लहलहाते हुए बाग़ नहीं बनते।

वर्तमान हमेशा अतीत का परिणाम होता है। जैसा अतीत, वैसा वर्तमान। अगर कोई व्यक्ति या समूह ऐसे वर्तमान का वारिस बनता है, जिसमें उसके लिए कुछ नहीं है, तो उसे दूसरों के ज़ुल्म और साज़िश की शिकायत नहीं करनी चाहिए। बल्कि, उसे यह स्वीकार करना चाहिए कि वह अतीत में कोई वास्तविक कार्य नहीं कर सका। इसलिए, वर्तमान में वह कोई वास्तविक परिणाम का भागीदारी भी नहीं बन सका।

अतीत के लिए अपनी गलती को मानकर वर्तमान में काम की भावना पैदा करता है — ऐसा आदमी नए सिरे से कार्य करके वर्तमान में वह चीज़ पा लेता है जिसे वह अतीत में न पा सका था।

हिम्मत न हारें

साउथ कोरिया ने 1975 में एक स्टील फ़ैक्ट्री स्थापित करने की योजना बनाई। इस फ़ैक्ट्री के लिए उन्हें वर्ल्ड बैंक से कर्ज़ लेने की ज़रूरत पड़ी, और उन्होंने इसके लिए दरख्वास्त भेजी। उसके बाद, नियमानुसार बैंक के

अधिकारियों की एक टीम कोरिया गई ताकि वे हालात का अध्ययन कर सकें। टीम ने हालात का अवलोकन करने के बाद यह रिपोर्ट दी कि कोरिया के वर्तमान हालात को देखते हुए यह योजना सही नहीं है, इसलिए वर्ल्ड बैंक ने कोरिया को इस उद्देश्य के लिए कर्ज़ देने से मना कर दिया।

मगर साउथ कोरिया के लोगों ने हिम्मत नहीं हारी। उन्होंने दूसरे साधन तलाश किए और किसी-न-किसी तरह अपनी फ़ैक्ट्री कायम कर दी। 20 साल बाद कोरिया की यह फ़ैक्ट्री दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी स्टील फैक्ट्री बन चुकी थी। वर्ल्ड बैंक का एक एक्सपर्ट दोबारा कोरिया आया ताकि वह स्थापित हुई फ़ैक्ट्री को देखे। उसने क़रीब से फ़ैक्ट्री की जाँच करने के बाद दोबारा लिखा कि 20 साल पहले हमने जो बात कही, वह अक्षरशः सही थी। मगर हम अपनी रिपोर्ट में एक चीज़ को शामिल न कर सके थे, वह यह कि कोरिया के लोग आत्मविश्वास (self-confidence) का असीमित भण्डार अपने पास रखते हैं। आत्मविश्वास ईश्वर का दिया हुआ एक अनमोल वरदान है, जो हर इंसान को समान रूप से मिलता है। फर्क बस इतना है कि कुछ लोग इस गुण को अपनाकर अपने जीवन को संवार लेते हैं, जबकि कुछ इसके उपयोग में चूक कर इसे यूँ ही व्यर्थ जाने देते हैं।

यदि कोरिया के लोग बैंक के इंकार के बाद यह कहना शुरू कर देते कि बैंक वाले पक्षपाती हैं, वे हमारी प्रगति नहीं चाहते, वे हमें आर्थिक पिछड़ेपन में फंसा कर रखना चाहते हैं, तो इससे उनका आत्मविश्वास की शक्ति दबकर रह जाती। उनका ध्यान कार्य की दिशा में नहीं, बल्कि शिकायत और विरोध की दिशा में लग जाता। और जब वे ऐसा करते, तो उनके अंदर आत्मविश्वास की भावना नहीं जाग्रित हो पाती। यह ईश्वरीय गुण उनके भीतर छिपा रहता, लेकिन वे उसे सही तरीके से इस्तेमाल करने से वंचित रहते। इस तरह, कोरिया का वातावरण शिकायती शब्दों से भर जाता, लेकिन वहां कोई स्टील फैक्ट्री काम करती हुई दिखाई नहीं देती।

ख़ुदा ने इंसान को हर प्रकार की उच्चतम योग्यताएँ बड़ी मात्रा में प्रदान की हैं। मगर उनको इस्तेमाल करना केवल उन्हीं बुलन्द हौसला लोगों के लिए सुरक्षित है जो सकारात्मक सोच व अमल वाले हों, जो नकारात्मक सोच व अमल से आख़िरी हद तक पाक-साफ हों।

सफलता की कुंजी

कस्टम एण्ड सेन्ट्रल एक्साइज डिपार्टमेण्ट में सुपरिण्टेण्डेण्ट मिस्टर मुहम्मद हनीफ़ (जन्म 1951 ई.) दिल्ली में रहते हैं। वे अपने कार्यालय में अपनी इस्लामी पहचान को छुपाते नहीं हैं बल्कि हर मौके पर क़ुरआन और इस्लाम का परिचय भी कराते रहते हैं। इसके बावजूद इनको 1999 का राष्ट्रपति पदक दिया गया, जो एक उच्च सरकारी पदक है।

यह घटना एक असाधारण घटना है। इस उच्च सरकारी सम्मान का तरीका यह है कि 15 वर्षीय रिकॉर्ड के आधार पर यह तय किया जाता है कि यह प्रमुख एवार्ड किसे दिया जाए। हर वर्ष विभाग के तीन वरिष्ठ अधिकारी संबंधित व्यक्ति की कार्यकुशलता का अवलोकन करके उसकी रिपोर्ट तैयार करते हैं। इस प्रकार, 15 वर्षों में कुल 45 अधिकारी इस रिपोर्टिंग प्रक्रिया में शामिल हो जाते हैं। यदि इन 45 में से किसी एक अधिकारी की रिपोर्ट भी प्रतिकूल हो, तो उस व्यक्ति को राष्ट्रीय अवार्डका पात्र नहीं माना जाता। कमेटी की ओर से नामांकन के बाद यह फ़ाइल लगभग आधा दर्जन सरकारी दफ़्तरों में स्वीकृति के लिए भेजी जाती है और अंततः राष्ट्रपति तक पहुँचती है।

भारत के एक मुसलमान को इस असाधारण एवार्ड का हक़ कैसे मिला? इसका जवाब केवल एक है, और वह है उल्लेखनीय कार्यकुशलता और अच्छा आचरण। इस मामले में मुहम्मद हनीफ़ साहब का रिकार्ड

असाधारण रूप से आदर्श है। जहाँ तक उनके अच्छे चरित्र का सम्बन्ध है, इसका पता एक घटना से लगता है। 1996 ई. में स्वीपर्स की भरती के दौरान इनके कार्यालय में एक ऊँची जाति का हिन्दू लड़का इण्टरव्यू के लिए आया। हनीफ़ साहब ने उससे कहा कि स्वीपर्स को नाली की सफ़ाई और झाड़ू लगाने जैसा काम करना पड़ता है और आपका सम्बन्ध एक ऊँची जाति से है। ऐसे में आप ये सारे काम कैसे करेंगे? उसने जवाब दिया कि पेट के लिए सब-कुछ करने के लिए तैयार हूँ। मुहम्मद हनीफ़ साहब ने उस लड़के को वह सर्विस दिला दी। लेकिन मुहम्मद हनीफ़ को इस बात का काफ़ी एहसास था, अतः उन्होंने उसको नाली साफ़ करने और झाड़ लगाने के बजाए दफ़्तर में डस्टिंग के काम पर लगा दिया। कुछ समय बाद मुहम्मद हनीफ़ साहब का उस कार्यालय से तबादला हो गया और उनकी जगह एक हिन्दू अफ़सर आ गया। एक दिन अचानक वह लड़का मुहम्मद हनीफ़ साहब के घर आया। उसने बताया कि हमको नाली की सफाई और झाड़ू लगाने का काम आपके जाने के बाद दे दिया गया है, जिससे आपने मुझे अलग कर दिया था। मुहम्मद हनीफ़ साहब को इसका दुःख हुआ और उन्होंने उस हिन्दू अफ़सर से टेलीफोन पर उस लड़के के बारे में बात की और कहा कि मेरी इच्छा है कि आप इस लड़के को नाली की सफ़ाई और झाड़ के बजाए डस्टिंग के काम पर ही लगा रहने दें। मुहम्मद हनीफ़ साहब के कहने पर नए अफ़सर ने उसको डस्टिंग के काम पर बहाल कर दिया।

हनीफ़ साहब अपने दफ़्तर में हर एक व्यक्ति के साथ अच्छा व्यवहार करते हैं। इसका परिणाम यह है कि छोटे मुलाज़िमों से लेकर बड़े अफ़सरों तक, हर कोई उनकी इज़्ज़त करता है।

इसी प्रकार, मुहम्मद हनीफ़ साहब अपनी सरकारी सेवा को पूरी ईमानदारी से निभाते हैं। सेवा के दौरान उन्हें कई बार ऊपर की आय से

अपनी जेब भरने के अवसर मिलते हैं, लेकिन वे इस तरह की आमदनी से हमेशा दूर रहते हैं। वे केवल अपने वैध वेतन की सीमा में जीवन बिताते हैं और कभी भी अवैध आमदनी को हाथ नहीं लगाते।

मुहम्मद हनीफ़ साहब के इस जैसे गुण ही उनकी असल पूँजी हैं। यही वे गुण हैं जिन्होंने उनको राष्ट्रीय पदक का हक़दार बनाया। इससे आप अंदाज़ा लगा सकते हैं कि इस देश में एक मुसलमान के लिए हर प्रकार के अच्छे अवसर पूरी तरह खुले हुए हैं। शर्त केवल यह है कि वह उच्च आचरण और अच्छी कुशलता का रास्ता अपना ले। इसके बाद उसको अपने माहौल से किसी प्रकार की कोई शिकायत न होगी।

पचीस साल

एलबर्ट साबिन (Albert Sabin) एक अमरीकी वैज्ञानिक था। उसका जन्म 1906 ईस्वी में पोलैंड में हुआ था। जब उसकी उम्र पंद्रह वर्ष थी, तब उसके माता-पिता अपने देश छोड़कर अमेरिका आ बसे। यहीं, 3 मार्च 1993 को उसका निधन हुआ। उसने पच्चीस वर्षों की लगातार मेहनत और अनुभव से पोलियो की एक ऐसी वैक्सीन विकसित की, जिसे मुँह के रास्ते लिया जा सकता था, जबकि आमतौर पर वैक्सीन इंजेक्शन के माध्यम से दी जाती है। ऐसा कहा जाता है कि अब तक पाँच सौ मिलियन (500 मिलियन) लोग उसकी इस खोज से लाभ उठा चुके हैं।

नोबेल पुरस्कार के योग्य होने के बावजूद एलबर्ट साबिन को यह सम्मान नहीं मिला—मगर उसने इसकी कभी परवाह नहीं की। उसका कहना था, “मेरे लिए इतना ही काफ़ी है कि मुझे एक ऐसी जगह मिल जाए जहाँ मैं अपना काम सुकून से कर सकूँ।”

I only ask for a place to work.

उसे अपने शोध के दौरान उसको असंख्य निराशाओं से दो-चार होना पड़ा। मगर निराशा और नाकामी से बेपरवाह होकर उसने अपना काम जारी रखा। यहाँ तक कि उसका शोध-कार्य अन्तिम कामयाबी की मंजिल तक पहुँच गया। वह प्रायः कहा करता था कि आप कितने ही अच्छे हों, आप एक वैज्ञानिक नहीं बन सकते, जब तक आप निराशा के साथ जीना न सीख लें:

> No matter how good you are, you cannot be a scientist unless you learn to live with frustration.

यही मौजूदा दुनिया में कामयाबी का आम उसूल है। यहाँ कोई उल्लेखनीय कामयाबी केवल उस साहसी व्यक्ति के लिए है जो '25 वर्षों' तक एकाग्र होकर अमल कर सके। जो नाकामियों के बीच अपना सफ़र जारी रखे। जो बार-बार गिरने के बावजूद बार-बार उठे। जो स्वीकार और प्रशंसा से बेपरवाह होकर अपने उद्देश्य की प्राप्ति में लगा रहे। जिसकी ताकत का ख़ज़ाना उसके अपने अन्दर हो, न कि उसके बाहर।

वे लोग इस दुनिया में कभी बड़ी सफलता हासिल नहीं कर सकते जो अवहेलना की शिकायत करते हैं, असहमति की स्थिति से घबरा जाते हैं, और जिनकी निगाह अवसरों की बजाय समस्याओं पर टिकी रहती है।

मनुष्य की कथा

पहली शताब्दी ई. पू. का एक रूमी लेखक पबलियूस साइरस (Publius Syrus) है। इसके लेख लातीनी भाषा में हैं। उसके एक कथन का अनुवाद अँगरेज़ी भाषा में इस तरह है:

A good opportunity is seldom presented,
and is easily lost.

अर्थात् एक अच्छा अवसर मुश्किल से सामने आता है, और
वह बहुत आसानी से खो जाता है।

लातीनी लेखक ने यह बात दुनिया की दृष्टि से कही है। दुनिया में कामयाबी हासिल करने के क़ीमती अवसर हर समय मौजूद नहीं रहते। वे कभी - कभी सामने आते हैं। मगर प्रायः लोग उनके महत्त्व को समझ नहीं पाते। वे समय रहते उनको उपयोग नहीं कर पाते। नतीजा यह होता है कि वह अवसर निकल जाता है और उसके बाद लोगों के हिस्से में जो चीज़ बाक़ी रहती है वह केवल यह पछतावा होता है कि कैसा क़ीमती अवसर मैंने अपनी नादानी से खो दिया !

यही मामला जीवन के अंतिम समय में और भी बड़े पैमाने पर देखने को मिलता है। अंतिम समय में कुछ अच्छा करने का अवसर हर व्यक्ति को मिलता है — लेकिन यह अवसर केवल एक बार आता है। फिर अचानक मृत्यु के साथ यह अवसर समाप्त हो जाता है। मृत्यु के बाद जब व्यक्ति की आंख खुलती है, तो उसे गहरा झटका लगता है। तब उसके भाग्य में हमेशा के लिए यह पछतावा दर्ज हो जाता है कि — अंतिम समय की कितनी बड़ी नेमत और कितनी क़ीमती घड़ी मुझे ईश्वर ने दी थी, और मैंने कितनी लापरवाही से उसे गंवा दिया।

दुनिया में हर आदमी को समान अवसर दिए जाते हैं। मगर अन्तिम समय में किसी आदमी का मामला अवसर चूके चूकने वाला होगा और किसी आदमी का मामला अवसर का भरपूर लाभ उठाने वाला का। इन्हीं कुछ शब्दों में हर एक की कहानी छिपी है

यही परिस्थिति जीवन के मसले को दुनिया में बेहद नाज़ुक बना देती है। क्योंकि सामान्य रूप से दुनिया में एक अवसर चूक जाने पर दूसरे अवसर की संभावना बनी रहती है। लेकिन अंतिम समय का अवसर ऐसा नहीं है—वह केवल एक बार मिलता है। यहाँ जो व्यक्ति एक बार सफल हो गया, वह हमेशा के लिए सफल मान लिया जाता है, और जो एक बार असफल रहा, वह हमेशा के लिए असफल कहलाता है।

उन्नति की राह

हिन्दुस्तान के अत्यंत प्रतिष्ठित उद्योगपतियों में श्री जी. डी. बिड़ला का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। उन्होंने ब्रिटिश दौर में मामूली हैसियत से काम आरम्भ किया और अपने जीवन में ही नायकों जैसी हैसियत हासिल कर ली। निःसंदेह, वे भारतीय उद्योग की आधारशिला रखने वालों में शुमार किए जाते हैं।

जी. डी. बिड़ला की एक आत्मकथा छपी है जिसका नाम है 'कर्मयोगी घनश्यामजी'। इस किताब की प्रस्तावना इनके बेटे के. के. बिड़ला ने लिखी है। यह प्रस्तावना *हिन्दुस्तान टाइम्स* (20 अप्रैल, 1994) ने अपने विशेषांक में प्रकाशित की है। इसका एक हिस्सा यहाँ दिया जाता है:

जी. डी. बिड़ला के कैरियर की शुरुआत कलकत्ता की एक ब्रिटिश फर्म में ब्रोकर (दलाल) के रूप में हुई। वे मेहनत और ईमानदारी से अपना काम करते थे, इसी कारण उनसे जुड़े लोग उनसे संतुष्ट और खुश रहते थे। बिड़ला अपने काम से सामान्य रूप से संतुष्ट थे, लेकिन उनके मन में कभी-कभी यह विचार भी आता था कि क्यों न वे खुद अपनी कोई इंडस्ट्री शुरू करें। हालांकि परिस्थितियों को देखते हुए ऐसा निर्णय लेना आसान नहीं था, इसलिए वे ब्रोकर की हैसियत से अपने काम में लगे रहे।

एक दिन की बात है, कम्पनी की बिल्डिंग में ऊपर जाने के लिए बिड़ला एक लिफ़्ट में दाख़िल हुए। उसमें पहले से एक अँगरेज़ था, उसने बिड़ला को यह कहते हुए लिफ्ट से बाहर निकाल दिया कि यह लिफ्ट इण्डियन के लिए नहीं है। यह घटना अपमानजनक और उत्तेजित करने वाली थी। लेकिन बिड़ला ने ऐसा नहीं किया कि इसके बाद वे अँगरेज़ों पर अपना गुस्सा उतारने में व्यस्त हो जाएँ। इसके बजाए यह घटना इनके लिए एक चुनौती बन गयी। बिड़ला के बेटे की ज़बान में, लिफ्ट की घटना ने उन्हें अत्यन्त प्रभावित किया और उनको तत्काल फ़ैसले तक पहुँचाने का कारण बन गयी:

> The lift incident acted as a catalyst and made him to take an early decision. (p. 8)

बिड़ला ने कम्पनी का काम छोड़ दिया और ख़ुद के कारोबार के मैदान में दाख़िल हो गए। वे एकाग्रता के साथ मेहनत करते रहे। यहाँ तक कि वे देश के महान् उद्योगपति बन गए। जीवन में घटनाओं का पेश आना भी स्वाभाविक ही है। बुद्धिमान वह है जिसके लिए घटना प्रगति की सीढ़ी बन जाए।

चुनौती स्वीकार कीजिए

वाल्टर रिस्टन का कथन है कि असफल हो जाना कोई अपराध नहीं है; असली असफलता यह है कि आदमी अपनी असफलता से कुछ सीखने में विफल रहे। जब जिम बर्क को जॉन्सन एंड जॉन्सन के व्यापारिक संस्थान में एक नए विभाग का उच्च अधिकारी नियुक्त किया गया, तो उसकी शुरुआती

योजनाओं में एक यह भी थी कि वह बच्चों के सीने की मालिश के लिए कोई दवा विकसित करे।

उसकी तैयार की हुई दवा बुरी तरह नाकाम रही। बर्फ का विचार था कि उसको नौकरी से निकाल दिया जाएगा। जब उसको बोर्ड के चेयरमैन ने मुलाकात के लिए बुलाया तो यह मुलाकात उसके लिए एक अचम्भे वाली मुलाकात बन गई। क्या तुम ही वह व्यक्ति हो जिसने हमें इतनी बड़ी राशि का नुकसान पहुँचाया है। चेयरमैन रॉबर्ट वुड जॉन्सन ने उससे सवाल किया। इसके बाद कहा – बहुत अच्छा, मैं तुमको केवल मुबारकबाद देना चाहता हूँ। अगर तुम गलतियाँ कर रहे हो तो इस का मतलब यह है कि तुम रिस्क ले रहे हो, और जब तक तुम रिस्क न लो, हम कभी प्रगति नहीं कर सकते :

> Walter Wriston, former chairman of Citicorp, said, Failure is not a crime. Failure to learn from failure is. When Jim Burke became the head of a new products division at Johnson & Johnson, one of his first projects was the development of a children's chest rub. The product failed miserably, and Burke expected that he would be fired. When he was called in to see the chairman of the board, however, he met a surprising reception. "Are you the one who just cost us all that money?" asked Robert Wood Johnson. "Well, I just want to congratulate you. If you are making mistakes, that means you are taking risks, and we won't grow unless you take risks."

आज की दुनिया उन नियमों पर चल रही है जिनका एक अहम सिद्धांत यह है कि किसी भी काम की सफलता के लिए जिन आवश्यकताओं की ज़रूरत होगी, वे पहले से किसी को पूरी तरह मालूम नहीं होतीं। ऐसी स्थिति में सफलता की एकमात्र सम्भावना यही होती है कि आने वाले हालात के बारे में अनिश्चितता के बावजूद भी साहसिक क़दम उठाए जाएँ। इसी को 'रिस्क लेना' कहा जाता है।

निश्चित रूप से रिस्क में खतरे छिपे होते हैं, लेकिन आज के यथार्थ में बिना रिस्क उठाए कोई भी बड़ा काम किया ही नहीं जा सकता।

असल में, जहां रिस्क नहीं है—वहाँ कामयाबी की कोई उम्मीद भी नहीं।

शहर की स्थापना

अमेरिका का एक शहर शिकागो (Chicago) है। शिकागो का शाब्दिक अर्थ जंगली प्याज़ (wild onion) है। पहले यह शहर अपनी गन्दगी, अपराध और अधूरे मकानों के लिए मशहूर था, इसलिए इसका यह नाम पड़ गया। आज शिकागो एक उच्च दर्जे का ख़ूबसूरत शहर है।

इस शहर का आधुनिक इतिहास रिचर्ड जे. डेली (Richard J. Daley) के नाम से जुड़ा हुआ है। उनका जन्म 1902 ईस्वी में हुआ था और 1976 ईस्वी में उनका निधन हुआ। 1955 में वे शिकागो के मेयर चुने गए और जीवन के अंतिम समय तक इस पद पर बने रहे।

मेयर बनने के बाद उन्होंने शहर की योजना नए सिरे से बनायी। उन्होंने प्राचीन शिकागो को हर तरह से नया शिकागो बना दिया।

रिचर्ड जे. डेली की कामयाबी का असल रहस्य यह था कि उन्होंने शिकागो के आधुनिक निर्माण को वहाँ के नागरिकों में से हर एक का

व्यक्तिगत मसला बना दिया। उन्होंने शहर के हर एक बाशिंदे के अन्दर यह सोच पैदा कर दी कि यह काम मुझे करना है, और मैं ही इसको पूरा करूँगा। उन्होंने शिकागो में बसने वाले हर एक व्यक्ति को यह संकल्प थमा दिया — मैं इसको करूँगा : I will do it.

किसी बड़े निर्माणकार्य के लिए यही प्रेरणा देने का सही तरीका यही है। हर व्यक्ति के भीतर यह भावना होनी चाहिए कि जब वह किसी मुद्दे को देखे, तो उसे यह महसूस हो कि यह उसकी अपनी ज़िम्मेदारी है—यह कार्य उसे ही पूरा करना है। यदि समाज के हर सदस्य के भीतर यह भावना जागृत हो जाए, तो फिर किसी भी योजना को सफलतापूर्वक पूरा करना निश्चित हो जाएगा।

शिकागो प्रत्यक्ष में एक बुरा नाम था। मगर असल काम शहर का नाम बदलना नहीं, बल्कि शहरियों का स्वभाव बदलना था। शहर का नाम बदलना एक बेनतीजा काम होता। लेकिन रिचर्ड जे. डेली जानता था, अगर शहरियों के स्वभाव व सोच को बदल दिया जाए तो एक बर्बाद होता शहर भी एक अच्छा शहर बन जाएगा। दूसरों के विरुद्ध नारे समाज में उखाड़-पछाड़ पैदा करते हैं। अपने लिए नारे समाज को प्रगति की गतिविधियों की तरफ़ ले जाते हैं। पहले प्रकार के नारों से लीडर का व्यक्तित्व बनता है और दूसरे प्रकार के नारों से देश बनता है। पहला नारा विनाश है और दूसरा नारा निर्माण।

रुकावट अंत नहीं

एक व्यक्ति एक रास्ते पर चला जा रहा था। अचानक उसने महसूस किया कि उसके सामने एक खाई आ गई है, जिसने उसका रास्ता रोक दिया है। उसे एक पल को लगा कि शायद अब उसके लिए आगे बढ़ना संभव नहीं होगा।

कुछ देर रुककर उसने सोचा तो उसकी समझ में आया कि अगर वह कुछ क़दम पीछे लौटे, तो शायद कोई दूसरा बेहतर रास्ता मिल जाए। उसने यही किया। वह कुछ दूर पीछे चला तो उसे वहाँ एक नया रास्ता दिखाई दिया। उसने उस रास्ते पर चलकर अपना सफ़र पूरा कर लिया।

याद रखिये, जब एक रास्ता आपको बन्द नज़र आए तो आप निराश न हों। इस दुनिया में हर तरफ रास्ते खुले हुए हैं। आप अपनी शक्तियों और क्षमताओं को काम में लाकर इस दूसरी दिशा से अपनी मंज़िल को पहुँच सकते हैं।

इस दुनिया में रास्ता केवल उस इंसान के लिए बन्द है जो रुकावट को तो जाने और सम्भावना को न जाने। सम्भावना को जानने वाले के लिए इस दुनिया में कभी कोई रास्ता बन्द नहीं होता।

मनुष्य के इतिहास में अनगिनत ऐसी मिसालें मौजूद हैं, जब किसी व्यक्ति के सामने रास्ते में कोई रुकावट आ गई या किसी कारणवश उसका रास्ता बंद हो गया। लेकिन उसने हिम्मत नहीं हारी। उसने अपनी बुद्धि का उपयोग किया, दूसरों के अनुभवों से सीखा, और लोगों से सलाह-मशविरा किया। नतीजा यह हुआ कि उसने अपनी समस्या का समाधान ढूंढ़ निकाला। उसने अपने लिए एक नया और बेहतर रास्ता तलाश कर लिया, जिस पर चलकर वह आगे बढ़ता रहा और अंततः सफलता की मंज़िल तक पहुँच गया।

शिकायतों के बावजूद

एक बार की बात है। मैं एक साहब के घर उनसे मिलने गया था। वहाँ उनके चार छोटे बच्चे (दो लड़कियाँ और दो लड़के) खेल रहे थे। मैंने देखा कि वे बार-बार अपने पिता से एक-दूसरे की शिकायत कर रहे थे, जैसे “इसने

मुझे मार दिया", "इसने मेरा खिलौना ले लिया", "इसने मुझे धकेल दिया", "इसने ऐसा कह दिया", आदि। इन शिकायतों के बावजूद वे सभी मिलकर खेलते रहे। उनके बीच आपसी संबंधों में कोई अंतर नहीं आया।

शिकायतों के बावजूद उनकी आपसी मुहब्बत में क्यों कमी नहीं आई? इसकी वजह ख़ूनी रिश्ता है। वे सब भाई और बहन थे। वे एक-दूसरे के साथ ख़ून का रिश्ता रखते थे। यह ख़ूनी रिश्ता शिकायतों के ऊपर छाया रहता हुआ था। विरोध व मतभेद के बावजूद वह उन्हें आपस में जोड़े हुए था।

प्रकृति की यह एक मिसाल है जो बताती है कि आदमी को इस दुनिया में किस तरह रहना चाहिए। लोगों को इस तरह रहना चाहिए कि उनके बीच विभेद और शिकायतें हों, फिर भी उनका आपसी संबंध न टूटे, और वे एक-दूसरे से मुहब्बत के साथ मिलकर जीवन बिताएं।

दुनिया में ऐसा होना तय है कि जब लोग मिल-जुलकर रहेंगे, तो एक को दूसरे से शिकायत जरूर होगी। शिकायतों से मुक्त जीवन इस दुनिया में संभव नहीं। ऐसी स्थिति में जो जरूरी है, वह यह नहीं कि इंसानी समाज शिकायतों से मुक्त हो जाए, बल्कि असल में यह है कि शिकायत को नफ़रत में बदलने से बचाया जाए।

भाई-बहन के मामले में जो चीज़ शिकायत को नफ़रत तक पहुँचने से रोकती है वह ख़ूनी रिश्ता है। और आम इंसान के लिए नैतिक उसूल इसी रोक का काम करता है। ख़ूनी रिश्ता एक भौतिक ज़रूरत है, इसीलिए उसके ऊपर कोई सबाब या इनाम नहीं। मगर नैतिक उसूल को आदमी स्वयं अपने इरादे व मर्जी से करता है, ऐसा आदमी स्वयं अपनी मर्जी से अपने-आप को एक अनुशासन में बाँधता है, इसलिए जो आदमी इस नैतिक अनुशासन का सुबूत दे, उसके लिए बहुत बड़ा इनाम है, दुनिया में भी और आख़िरत की सदैव की ज़िन्दगी में भी।

तरक़्क़ी की राह

वार ऑफ़ इण्डिपेण्डेंस के नाम से अमेरिका में 18वीं शताब्दी (1775- 83) में एक जंग हुई। इसके बाद अमेरिका में ऐसे लीडर उभरे जिन्होंने जंग की बजाए अमन के हिमायत की। उन्हीं में से दूसरे अमेरिकी राष्ट्रपति जॉन एडम्स है जिनको अराजनीतिक राजनेता (Nonpolitical Politician) कहा जाता है। 1783 ई. में पेरिस सन्धि के तहत जब बरतानिया ने उसको आज़ादी दे दी तो उसके बाद अमेरिका ने अपना अलग रास्ता चुन लिया। अब सारा ज़ोर शिक्षा, विज्ञान, शोध, इण्डस्ट्री, सिटी प्लानिंग और युवा पीढ़ी के चरित्र-निर्माण पर दिया जाने लगा।

यही घटना जापान में भी घटी जिसको वे लोग उल्टे अमल (Reverse Course) का नाम देते हैं। दूसरे विश्वयुद्ध तक जापान भीड़ के रास्ते पर चल रहा था। मगर दूसरे विश्वयुद्ध के तजुर्बात के बाद उसने अपना रास्ता बदल दिया। अब उसने जंग के तरीके को मुकम्मल रूप से छोड़ दिया। उसके बजाए उसने शिक्षा के मैदान में अपना सारा ध्यान मोड़ दिया। साइंस और टेक्नोलॉजी में प्रगति को अपना लक्ष्य बना लिया। इसका नतीजा यह हुआ कि चालीस साल में इतिहास बदल गया। उल्टे अमल का यह मरहला हर क़ौम के लिए पेश आता है। जो लोग ऐसा करें, वे कामयाब रहते हैं और जो लोग ऐसा न कर सकें वे नाकाम होकर रह जाते हैं। अमेरिका और जापान दोनों इस उल्टे अमल को अपनाने की मिसाल हैं।

वर्तमान समय के मुसलमानों के लिए भी अब यही समय आ गया है वे लम्बी अवधि से बहुसंख्यक वर्ग से नाराज़ होकर उनके साथ बेकार के टकराव की नीति अपनाए हुए थे। अब ज़रूरत है कि इस बाहरी नीति को छोड़ दिया जाए और उसके बजाए आन्तरिक नीति अपनायी जाए। अर्थात् अपनी कमियों का इकरार करते हुए स्वयं अपने निर्माण में सारा ध्यान लगा

दिया जाए। मुसलमानों के मसलों का यही एकमात्र हल है और इसी को उन्हें दिल से अपना लेना चाहिए।

हर एक के स्थान को जानिए

एक आलिम (धार्मिक विद्वान) की संगत में एक ऐसा व्यक्ति था जो उनके बहुत करीब था। वे उसे दूसरों से ज्यादा मानते थे और अधिक भरोसा करते थे। विद्वान ने उस व्यक्ति को एक कारोबार में लगा दिया, जिसमें उसे सफलता मिली और वह पैसे वाला आदमी बन गया।

एक दिन वह व्यक्ति विद्वान की संगत में उपस्थित था। किसी बात पर विद्वान ने उसे सख़्ती से मना किया। वह व्यक्ति गुस्से में आ गया और सख़्त स्वर में जवाब दिया, फिर उठकर विद्वान के पास से चला गया। कुछ दिनों बाद, जब उसका गुस्सा ठंडा हुआ, तो वह फिर से आया और विद्वान से क्षमा याचना करने लगा। विद्वान ने जवाब दिया, "तुमको क्षमा मांगने की ज़रूरत नहीं है। मैंने पहले ही इस मामले को इस तरह से समाप्त कर दिया है कि अब तक मैं तुम्हें अपने स्तर से देखता था, अब से मैं तुम्हें तुम्हारे स्तर से देखूँगा।"

इस दुनिया में धोका खाने से बचाव का यही एकमात्र उसूल है। एक शब्द में इसका सार यह है कि लोगों से स्वयं उनको देखते हुए व्यवहार करो, न कि अपने को देखकर।

एक आदमी ज्यादा उम्मीद पर पूरा नहीं उतरता तो उससे अपनी उम्मीद को कम कर लीजिए। एक आदमी आपकी पाबन्दी को स्वीकार नहीं करता तो उससे पाबन्दी की माँग करना छोड़ दीजिए। एक व्यक्ति आपका ख़ास आदमी बनने के लिए तैयार नहीं है तो उसको आम आदमियों में गिनना शुरू कर दीजिए। एक आदमी पर आपका काबू नहीं चलता तो

उससे समझौते का रास्ता अपना लीजिए। एक आदमी आपको देने के लिए तैयार नहीं है तो उससे अपनी उम्मीदों को ख़त्म कर दीजिए। एक आदमी उस जगह के योग्य नज़र नहीं आया जहाँ आपने उसको रखा था तो आप सादा रूप से केवल यह कीजिए कि एक जगह से निकाल कर उसको दूसरी जगह में डाल दीजिए।

बाहरी तथ्यों से समझौता करने का नाम ही जीवन है। सूरज, हवा, बारिश, पहाड़ और समुद्र से समझौता करके ही हम इस दुनिया में जीवन बिताते हैं। यही उसूल इंसानों के बारे में भी लागू होता है। यदि आप इंसानों से समझौते के उसूल पर व्यवहार करेंगे, तो दुनिया आपके लिए ख़ुशी और सुरक्षा का घर बन जाएगी।

मुस्तकबिल को देखें

एक साहब मई, 1992 में मुझ से मिलने के लिए आंध्रप्रदेश से दिल्ली आए। वे हमारे लिए उपहार में आम भी लाए थे। आम की टोकरी पेश करते हुए उन्होंने कहा कि जब मैंने इन आमों को अपने यहाँ के बाज़ार से खरीदा था, तो ये बिल्कुल अच्छे थे, लेकिन रास्ते में सख़्त गर्मी पड़ने के कारण अधिकांश आम खराब हो गए।

मैं ख़ामोश रहा। उस समय मजलिस में एक 'माली' भी मौजूद थे। उन्होंने आमों को देखते हुए कहा कि भाई साहब, ये आम गर्मी की वजह से ख़राब नहीं हुए हैं, बल्कि आपकी एक गलती की वजह से ख़राब हुए हैं।

फिर माली ने उनसे पूछा कि आपने अपने यहाँ की मार्किट से जब आम लिए तो क्या वे पके हुए थे? उन्होंने कहा, हाँ। माली ने कहा कि ख़राब होने की वजह यही है। असल बात यह है कि पके हुए आम स्थानीय इस्तेमाल के लिए होते हैं। जब आम को दूर ले जाना हो तो उस समय कच्चे

आम ख़रीदे जाते हैं। अगर आप ने कच्चे आम लिए होते तो एक आम भी ख़राब न होता। सब-के-सब अच्छी हालत में यहाँ तक पहुँच जाते।

ये घटना हमें ये सीख देती है कि छोटे से छोटे मामलों में भी भविष्य को ध्यान में रखना कितना महत्वपूर्ण है। जब भी आप कोई योजना बनाएं जो भविष्य में होने वाली हो, तो केवल वर्तमान का ज्ञान पर्याप्त नहीं होता। ऐसी स्थिति में यह जरूरी है कि आप भविष्य को समझें, आज के दायरे से ऊपर उठकर कल की संभावनाओं और घटनाओं से परिचित हों।

कोई भी तदबीर वर्तमान में की जाती है, मगर उसका नतीजा हमेशा भविष्य में निकलता है। योजना बनाना असल में भविष्य को तराशने की कोशिश है। कामयाब योजना वही होती है जो तात्कालिक जोश के बजाय ठोस सोच पर टिके, भावनाओं की जगह यथार्थ का सहारा ले। सच्ची योजना वही है जो केवल आज की परेशानियों पर नहीं, बल्कि आने वाले कल की संभावनाओं और चुनौतियों पर भी गहरी नज़र रखे।

अपना उत्तरदायित्व

सर विंस्टन चर्चिल दूसरे विश्वयुद्ध (1939-45) के दौरान बरतानिया के प्रधानमन्त्री थे। वे आमतौर से हिंसावादी लीडर की हैसियत से मशहूर हैं। एक बूढ़े बरतानी शहरी ने मुझे बताया कि चर्चिल ने इस युद्ध के ज़माने में बरतानी क़ौम को जो सूत्र दिया वह यह था— सब कुछ मेरे अपने ऊपर निर्भर है:

It all depends on me.

युद्ध और शांति—दोनों परिस्थितियों में समान रूप से यह एक बेहतरीन सूत्र है जो बहुत ही लाभदायक सिद्ध होता है। मेरे भाई, इंजीनियर

अब्दुल मुहीत ख़ान ने बताया कि एक बार वे चंडीगढ़ के एक प्रशिक्षण शिविर (ट्रेनिंग कैम्प) में शामिल हुए। यह कैम्प पालिटेक्निक कॉलेजों के प्रिंसिपलों के लिए आयोजित किया गया था, और इसमें व्याख्यान देने के लिए एक अंग्रेज़ प्रोफ़ेसर को बुलाया गया था।

शिविर का उद्घाटन एक भारतीय मंत्री द्वारा किया जाना था। जब मंत्री मंच पर आए और माइक पर बोलने लगे, तभी अचानक बिजली चली गई और लाउडस्पीकर ने काम करना बंद कर दिया। वहाँ बैकअप के रूप में कोई बैटरी की व्यवस्था नहीं थी, हालाँकि कॉलेज की वर्कशॉप में बैटरी उपलब्ध थी।

उस समय प्रतिभागी प्रिंसिपल कॉलेज के किसी चपरासी या वर्कर को तलाश करने लगे ताकि उसको वर्कशॉप भेज कर वहाँ से बैट्री मँगवाएँ और उससे लाउडस्पीकर को चलाएँ। मगर अँगरेज़ प्रोफ़ेसर को जैसे ही स्थिति का ज्ञान हुआ, वह स्वयं भाग कर वर्कशॉप में पहुँचा और भारी बैट्री को दोनों हाथों से उठा कर दौड़ता हुआ आया और लाउडस्पीकर की व्यवस्था से जोड़कर उसको चला दिया।

किसी क़ौम के लोगों में यही सोच उस क़ौम की सामूहिक प्रगति का सबसे बड़ा रहस्य राज़ है। लोगों के अन्दर यह स्पिरिट जितनी ज्यादा पाई जाएगी, उतना ही अधिक वह क़ौम प्रगति कर सकेगी।

सामान्य रूप से जब लोग समाज में कोई बुराई देखते हैं, तो वे तुरंत कोई नया क़ानून बनाने या व्यवस्था में बदलाव लाकर उसे सुधारने का सुझाव देते हैं। लेकिन क़ानून और व्यवस्था की अपनी एक सीमा होती है। जब वे अपनी सीमा पर पहुँच जाते हैं, तो उनका असर कमज़ोर पड़ जाता है। दरअसल, सुधार का असली रास्ता यह है कि लोगों के भीतर खुद-ब-खुद सुधार की भावना पैदा की जाए।

संघठन या अराजकता

75 साल की शाइस्ता इकरामुल्लाह मिस्टर मुहम्मदअली जिनाह की गहरी श्रद्धालुओं में से हैं। उन्होंने उनके अधीन मातहत काम किया है। वे 1947 से 1954 तक पाकिस्तान की लेजिस्लेटिव कौन्सिल की सदस्य रही हैं। 1964 से 1967 तक वह मराको में पाकिस्तान की दूत थीं, आदि।

रीडर्स डाइजेस्ट (मई, 1991) में इनका एक लेख मिस्टर मुहम्मदअली जिनाह के बारे में छपा है। उस लेख में उन्होंने मिस्टर मुहम्मदअली जिनाह से सम्बन्धित बहुत-सी बातें लिखी हैं। उन्होंने लिखा है कि आरम्भ में हिन्दुस्तान के मुसलमान मुस्लिम लीग के साथ न थे। मगर मिस्टर मुहम्मदअली जिनाह की अगुवाई का यह करिश्मा था कि 1945-46 का इलैक्शन हुआ तो हिन्दुस्तानी रियासतों में 85 प्रतिशत मुस्लिम सीटों पर मुस्लिम लीग का क़ब्ज़ा हो गया।

उन्होंने लिखा है कि नेता (मिस्टर जिनाह) यह कहा करते थे कि उन्होंने एक भीड़ को एक क़ौम की सूरत दी है। आज पाकिस्तान के आन्तरिक झगड़ों को देखते हुए मुझे ऐसा महसूस होता है कि हम दोबारा भीड़ में तब्दील होने की ओर चल पड़े हैं:

> The Quaid used to say that he had fashioned a nation out of a mob. Today, seeing all our internal squabbles, I sometimes think that we have gone back to being a mob.

अक्सर लोग यह गलती करते हैं कि वे जनसभाओं में लोगों के एकत्र होने को एकता मान लेते हैं। जबकि असल में, इस तरह के जलसे केवल भीड़ के अस्थायी रूप होते हैं। यह उससे ज्यादा कुछ नहीं होते। भीड़ का एक संगठित राष्ट्र बनना, जलसा और जुलूस से पूरी तरह अलग है। असल एकता तब आती है जब लोगों के बीच सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित

होता है, जब उनके अंदर मजबूत चरित्र का निर्माण होता है। वे मतभेदों को भुलाकर एक-दूसरे का समर्थन करने को तैयार होते हैं। उनका यह रवैया बन जाता है कि वे व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर उच्च मानवीय उद्देश्यों के लिए काम करते हैं। एकता वह है, जो रोज़मर्रा के वास्तविक जीवन में दिखाई दे, न कि अस्थायी जलसों और जुलूसों में।

अवचेतन संदेह

सुब्रमनिया पूरा (बैंगलोर) में 21 जुलाई, 1996 को एक शिक्षाप्रद घटना घटी। एक लड़का, जी. हरीश बाबू, विवेकानन्द हायर प्राइमरी स्कूल में चौथे दर्जे का छात्र था। उसने अपने घर के एक कमरे में खुद को बंद करके अपने ऊपर मिट्टी का तेल (केरोसीन) उंडेल लिया और अपने कपड़ों को आग लगा ली। इस तरह वह जलकर मर गया। प्रेस रिपोर्ट के अनुसार, इसका कारण परीक्षा में नाकाम हो जाने का डर था:

Fear of failure in examinations.

लड़के के बाप जी. गोपीनाथ ने बताया कि हरीश रोज़ की तरह अपने स्कूल से वापस आया। उसने अपनी माँ लीला से कहा कि उसकी टीचर उससे मिलना चाहती है। उसके अनुसार लीला स्कूल चली गई। उसके बाद हरीश ने किचन में दाख़िल होकर दरवाज़ा बन्द कर लिया और अपने आप को आग लगा ली। आवाज़ सुनकर पड़ोसी दौड़ पड़े। मगर जब किचन का दरवाज़ा तोड़ कर लड़के को निकाला गया तो मालूम हुआ कि वह जलकर मर चुका है।

हरीश की माँ, लीला, जब स्कूल पहुँची, तो वहाँ उसे नतीजे का परचा (Marks Card) दिया गया। उसे देखकर वह बहुत खुश हुई, क्योंकि उसके

बेटे ने 600 में से 379 नंबर हासिल किए थे। लेकिन जब वह घर पहुँची तो उसकी ख़ुशी ग़म में बदल गई, क्योंकि उसको पता चला कि उसके बेटे ने आत्महत्या करके अपनी जान दे दी है। (*टाइम्स ऑफ़ इंडिया,* 22 जुलाई 1996)

हरीश बाबू अगर कुछ घण्टे और प्रतीक्षा कर लेता तो उसको मालूम हो जाता कि उसकी शंका बिलकुल निराधार थी। परीक्षा में वह अच्छे नम्बर लेकर पास हो चुका था, मगर वह अनदेखी शंकाओं का शिकार रहा। यहाँ तक कि उसने इस भय से अपनी जान दे दी।

अक्सर ऐसा होता है कि हालात का गलत अन्दाज़ा करके आदमी डर में घिर जाता है, जबकि भविष्य में ये पता चलता है कि वे शंकाएँ कभी सामने आने वाली ही न थीं।

जो चीज़ आज नहीं मिल रही है, उसे इंतजार के खाने में रखिए, बजाय इसके कि उसको न मिलने वाली चीज़ समझ कर आप निराश और उत्साहहीन हो जाएं।

अध्याय चार

कामयाबी के खुले ख़ज़ाने

एक बीज का पेड़ बन जाना कोई किस्मत की बात नहीं होती। इसी तरह, किसी इंसान का सफल हो जाना भी किस्मत की बात नहीं होती, बल्कि यह कुछ नियमों को पाबन्दी से अपनाने का ज़रूरी नतीजा होता है।

समझदारी से हल

दंगा केवल समझदारी और सूझ-बूझ से ही खत्म हो सकता है, न कि सिर्फ़ "दंगा खत्म करो" की मांग करने से। यह बात निस्संदेह बिल्कुल सही है और इसके अलावा दंगों के मसले का कोई स्थायी समाधान नहीं है।

जब दो इंसानी समूह एक साथ रहते हैं, तो प्रकृति के नियमों के तहत उनके बीच बार-बार मतभेद और विवाद होते रहेंगे। जैसे एक समूह का नारा दूसरे समूह को अप्रिय लगे, या एक समूह दूसरे के पूजा स्थल को उतना सम्मान न दे सके जितना उस समूह को चाहिए।

ऐसी भिन्नताएँ स्वाभाविक हैं और इससे शिकायतें जन्म लेना सामान्य बात है। लेकिन इन शिकायतों का समाधान जवाबी कार्रवाई नहीं हो सकती। इसका एकमात्र रास्ता है इन बातों की अनदेखी करना, और विवादित मामलों में उदारता और सहनशीलता का पालन करना। विवाद और प्रतिशोध की बजाय समझदारी से काम लेना।

हम प्रकृति से लड़ नहीं सकते और विवादित बात घटित होने पर प्रतिक्रिया का तरीक़ा अपनाना मानो प्रकृति से लड़ना है। क्योंकि इस तरह के मतभेद ठीक स्वाभाविक कारणों के अन्तर्गत घटते हैं। ऐसी हालत में प्रकृति से समानता अपनाना मसले का हल है, प्रकृति से टकराव कभी मसले का हल नहीं बन सकता।

हर मसले का हल है। मगर यह हल केवल सूझ-बूझ के तरीकों में है। अगर हम ऐसा करें कि मसला पेश आने के बाद झुंझलाहट का शिकार न हों, बल्कि ठण्डे तरीक़े से पूरी स्थिति पर विचार करें, मसले को केवल मसले की हैसियत से देखें, उसको साख और प्रतिष्ठा का मामला न बनाएँ, तो निश्चय ही हम ऐसी युक्ति खोज लेंगे जिसके ज़रिए उस मसले को आसानी के साथ हल किया जा सके।

इन्सान के सामने जब भी कोई समस्या आए, तो खुद को नकारात्मक भावनाओं के प्रभाव में आने से बचाए। अपने दिमाग को सिर्फ़ समाधान खोजने में लगाए। फिर वो पायेगा कि वह समस्या इस तरह हल हो गई जैसे उसका कोई अस्तित्व ही न था।

अवसर सिर्फ़ एक बार

कामयाबी का अवसर किसी व्यक्ति की चौखट पर केवल एक बार ही दस्तक देता है। इस दुनिया में अवसर रोज़ आते हैं, लेकिन वे रोज़ ही चले भी जाते हैं, और जो एक बार चला गया, वह फिर कभी किसी के लिए वापस नहीं आता।

कामयाबी का गहरा संबंध अवसर से होता है। जब कोई बड़ा अवसर सामने आता है, तो वह केवल थोड़े समय के लिए ही ठहरता है। इसलिए यह बहुत ज़रूरी है कि व्यक्ति उस मौके को तुरंत पहचान ले। जो व्यक्ति अवसर को शुरुआती समय में समझ जाता है, वही उससे सबसे अधिक लाभ उठाता है। और जो इसे पहचानने में देर करता है, वह उस अवसर से बड़ा लाभ पाने में असफल रहता है।

जब एक अवसर आपके हाथ से निकल जाए तो आप अपनी इस महरूमी को इस तरह फ़ायदे में बदल सकते हैं कि पूरे मामले पर बेलाग अन्दाज़ में सोचें। इस तरह आपके अन्दर यह समझ पैदा होगी कि दूसरी बार जब वह अवसर आए तो आप तुरन्त उसे पहचान लें और पहले ही क्षण में उसको इस्तेमाल करके आगे बढ़ जाएँ।

जीवन में कुछ क्षण फ़ैसले के होते हैं। इन क्षणों में चूक जाना एक ऐसी हानि है जिसकी क्षतिपूर्ति बाद में सम्भव नहीं होती। प्रायः ऐसा होता है कि आदमी इन विशेष क्षणों को पहचान नहीं पाता। वह गफलत में इन क्षणों को

नष्ट कर देता है। बाद को वह जागता है, मगर तब उसके लिए अफ़सोस करने के सिवा और कुछ नहीं होता।

जब भी आपके दरवाज़े पर कोई आवाज़ आए, तो तुरंत उसका ध्यान दें। कौन जाने, शायद किसी बड़ी सफलता का मौका आपके इंतज़ार में खड़ा हो। आने वाले अवसर को हाथ से जाने न दें, क्योंकि जो एक बार आकर चला गया, वह फिर वापस नहीं आता।

अधिकांश लोगों की असफलता दरअसल अवसर को खो देने की होती है। वे दूसरों के खिलाफ विरोध जताते हैं, जबकि असलियत यह होती है कि वे समय पर अवसर का सही उपयोग नहीं कर पाए।

कामयाबी के पीछे

फ़िरदौसी का शाहनामा फ़ारसी भाषा की एक प्रसिद्ध वीर गाथा है, जिसमें ईरान के रुस्तम और अन्य नायकों के साहस और पराक्रम का गौरवपूर्ण वर्णन किया गया है। रुस्तम के संदर्भ में फ़िरदौसी ने कहा है कि “यह मैं हूँ जिसने रुस्तम को रुस्तम बनाया, वरना वह ईरान के एक छोटे से क़स्बे का मामूली पहलवान था।”

फ़िरदौसी द्वारा कही गई यह बात केवल व्यक्तिगत अभिमान नहीं, बल्कि प्रकृति के एक सच्चे नियम को दर्शाती है। जैसे वॉलीबॉल के खेल में एक बूस्टर होता है जो बॉल को आगे बढ़ाता है, और एक खिलाड़ी होता है जो उस बॉल को मारता है, ठीक इसी तरह जीवन की व्यवस्था में भी—खुदा की योजना के अनुसार—एक व्यक्ति दूसरे की मदद करता है और उसे आगे बढ़ाता है। इसी तरह से जीवन का सफर चलता रहता है।

यह उसूल इतना सामान्य है कि पैग़म्बर तक उससे अलग नहीं। मिसाल के तौर पर हज़रत यूसुफ़ अलैहि. मिस्र में एक गुलाम की हैसियत से

दाख़िल हुए। फिर वे जेल में पहुँचा दिए गए। इसके बाद ऐसा हुआ कि उन्हें मिस्र की हुकूमत में श्रेष्ठतम पद हासिल हो गया। उनकी यह प्रगति अल्लाह की योजना के अन्तर्गत थी। फिर भी प्रत्यक्ष में मिस्र के बादशाह ने उनके लिए बूस्टर (बढ़ाने वाला) का रोल अदा किया।

यही बात हर उस व्यक्ति के सिलसिले में नज़र आती है जिसको किसी हैसियत से कोई विशेष स्थान हासिल हुआ। इस हैसियत का अध्ययन किया जाए तो हर आदमी के पीछे कोई बूस्टर दिखाई देगा। इंसानी इतिहास में शायद ही कोई व्यक्ति हो जिसके आगे बढ़ने में किसी बूस्टर का दख़ल शामिल न हो।

इस मामले में बूस्टर को किसी भी प्रकार का अभिमान नहीं करना चाहिए। उसे यह नहीं सोचना चाहिए कि सिर्फ उसकी वजह से कोई व्यक्ति आगे बढ़ा है। असलियत यह है कि अगर बूस्टर ईमानदारी से सोचे तो वह खुद भी पाएगा कि उसके अपने जीवन में भी किसी न किसी बूस्टर का योगदान मौजूद है।

बूस्टर को यह समझना चाहिए कि उसने जो भी काम किया, वह उसका व्यक्तिगत कारनामा नहीं था, बल्कि वास्तव में यह खुदा की योजना का हिस्सा था, जिसमें वह सिर्फ एक साधन के रूप में इस्तेमाल हुआ।

अगले अध्याय पर नज़र

जीवन एक लंबी और थका देने वाली कहानी की तरह है। इसे केवल वही व्यक्ति सफलतापूर्वक पढ़ पाता है, जिसका ध्यान लगातार कहानी के अगले वाक्य पर बना रहता है। हर इंसान का जीवन इसी तरह की एक कहानी है, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, चाहे वह सामान्य हालात में जी रहा हो या शानदार परिस्थितियों में।

असल में, जीवन एक कड़वे अनुभवों का समंदर है। खोए हुए अवसरों का दुःख, बीती घटनाओं की तीव्रता, लोगों द्वारा झेली गई बुराइयाँ, अपनी कमज़ोरियों और परेशानियों की शिकायतें—ऐसी कई बातें होती हैं जो इंसान की सोच को नकारात्मक दिशा में ले जाती हैं। अगर कोई व्यक्ति इन सब बातों के प्रभाव में आ जाए, तो उसका जीवन थम सा जाएगा और वह कमजोर पड़ जाएगा।

ऐसी हालत में अक्लमन्दी यह है कि आदमी पीछे देखने के बजाय आगे की तरफ देखे। वह गुज़रे हुए दिनों के बजाय आने वाले दिनों पर अपनी नजरें जमाए रखे।

हर आदमी अपने कार्य व अमल से अपने जीवन की कहानी लिख रहा है। मगर उसको स्वयं नहीं मालूम कि उस कहानी में कौन से अवसर पेश आएँगे, और न कोई व्यक्ति यह जानता है कि यह कहानी कहाँ जाकर ख़त्म होगी। इसलिए जरूरी है कि आदमी हर सामने आने वाले मरहले का स्वागत करे। कहानी के अगले अध्याय लिखने की कोशिश में वह आगे ही बढ़ता चला जाए।

जीवन में असल महत्त्व यह नहीं है कि उसमें क्या पाया। असल महत्त्व की बात यह है कि उसे कैसे जीया। यह सम्भव है कि एक कम आमदनी वाला व्यक्ति अच्छा जीवन गुज़ारे और एक दौलतमन्द आदमी बुरा जीवन गुज़ार कर मर जाए। एक जाहिल आदमी अपने मामलों में ज़्यादा समझदारी का सुबूत दे और एक पढ़ा- लिखा आदमी अपने मामलात को सँभालने में असमर्थ साबित हो।

आप यह मत देखिए कि जीवन में क्या हासिल कर रहे हैं, बल्कि यह देखें कि आप अपना जीवन किस तरह से बिता रहे हैं। जो व्यक्ति अच्छी ज़िंदगी बिताना जानता है, वही असल में दुनिया में कामयाब होता है। वही व्यक्ति है जिसने खुद को अपने उज्जवल भविष्य तक पहुंचाया है।

मुश्किलें सिखाती हैं

अल्लामा शामी ने लिखा है कि कोई भी व्यक्ति तब तक सच्चा सीखने वाला नहीं बन सकता, जब तक उसकी तारीफ़ करने वाले के साथ साथ उसकी निंदा करने वाले भी न हों।

वास्तव में, यह दुनिया एक इम्तहान की जगह है। यहाँ जो कुछ भी होता है, उसमें किसी न किसी रूप में परीक्षा का तत्व ज़रूर शामिल होता है। यही रवैया एक सच्चे सीखने वाले इंसान का भी होता है। जब कोई इंसान ईश्वर की रहमत से सीखने की राह पर निकलता है, तो वह पूरे समाज के लिए एक तरह की परीक्षा का सवाल बन जाता है।

जो लोग सत्य के सच्चे चाहने वाले होते हैं—जिनके भीतर सत्य को पाने की प्यास होती है, जो सच्चाई को अपनी खुद की ज़ात से भी ऊपर मानते हैं—वे पहले से ही मनोवैज्ञानिक उलझनों से मुक्त होते हैं। ऐसे लोग उस सीख देने वाले को अपने दिल की आवाज़ मानकर स्वीकार कर लेते हैं।

उनके बीच वह व्यक्ति एक प्रिय की तरह हो जाता है—जिससे वे दिल से जुड़ जाते हैं। वे उसे सच्चे मन से दुआएँ देते हैं और अपने सबसे अच्छे शब्दों व भावनाओं को उसके लिए समर्पित कर देते हैं।

इसके विपरीत व्यवहार उन लोगों का होता है जो अपनी व्यक्तिगत बड़ाई में जी रहे हों। जो सत्य के अनुसार न हों, बल्कि अपनी कामनाओं पर आश्रित हों। ऐसे लोग जब किसी को सीखता हुआ देखते हैं तो वे तुरन्त ईर्ष्या का शिकार हो जाते हैं। वे सोचने लगते हैं कि इस व्यक्ति के कद का बढ़ना मानो मेरे कद का छोटा होना है। वे लोग ईर्ष्या की आग में भड़क उठते हैं। वे अपने दायरे से बाहर निकल कर उभरने वाले व्यक्ति की निन्दा को तैयार हो जाते हैं। वे उसके विरुद्ध झूठे आरोप लगाते हैं। वे उसको नीचा दिखाने के लिए हर वह ओछी हरकत करने पर अड़ जाते हैं जो उनके बस में हो। सीखने

की हर कोशिश एक परीक्षा है। इस परीक्षा में एक प्रकार के लोग कामयाब होंते हैं और दूसरी प्रकार के लोग नाकाम।

विचार और आचरण में एकता

फ़ारान पत्रिका (कराची) के एडीटर माहिरुल कादिरी (1906-1978) एक प्रसिद्ध साहित्यकार और शायर रहे थे। उनका एक शे'र है :

पहले हर शै को हमआवाज़ किया जाता है
फिर कहीं नगमे का आगाज़ किया जाता है

यह शेर ज़िंदगी की इस अहम सच्चाई को उजागर करता है कि किसी भी काम को अंजाम देने से पहले उसकी सही तैयारी बेहद ज़रूरी होती है। जब तक हालात अनुकूल न हों, तब तक कोई भी काम ढंग से नहीं किया जा सकता। सामूहिक जीवन में किसी भी घटना को अमल में लाने के लिए ज़रूरी है कि उससे जुड़े विभिन्न सामाजिक पहलुओं को पहले उसके अनुकूल ढाल लिया जाए। अगर माहौल को अपने हक़ में किए बिना कोई सुर छेड़ा जाए, तो वह एक ऐसा सुर बनकर रह जाएगा जिसमें कोई असर नहीं होगा — वह व्यवहार में अर्थहीन होगा ही, साथ ही वो किसी को अपनी तरफ आकर्षित भी नहीं कर पायेगा।

मगर ऐसा मालूम होता है कि माहिरुल क़ादरी के लिए यह केवल एक शायराना सूत्र था, वह उनका वैचारिक आविष्कार न था। क्योंकि हम देखते हैं कि उन्होंने स्वयं अपने जीवन में उसके विपरीत अमल किया। पाकिस्तान बनने के बाद मौलाना अबुल आला मौदूदी ने वहाँ ज़रूरी सामाजिक हालात पैदा किए बिना 'इस्लामी व्यवस्था की माँग' की नाकाम मुहिम शुरू कर दी। मानो उन्होंने चीज़ों को अपने पक्ष में किए बिना गीत का आरम्भ कर दिया।

मगर माहिरुल कादिरी ने मौलाना अबुल आला मौदूदी के इस निरर्थक अभियान में उनको पूरा समर्थन दिया। यद्यपि उनके उल्लिखित शे'र का तकाज़ा था कि वे उन की आलोचना करें।

अधिकांश लोगों का हाल यह है कि वे 'मुशायरा' की सतह पर अच्छी-अच्छी बातें कहते हैं, मगर व्यवहार की सतह पर वे उनको अपनाते नहीं। इसकी वजह यह है कि वे बातें उनकी वैचारिक हक़ीक़त नहीं होतीं। वे मौके के हिसाब से इन बातों को शाब्दिक रूप से बोल देते हैं, मगर वे उनकी सोच का हिस्सा नहीं होतीं। वे उनकी सोची-समझी राय नहीं होती जिससे हटना उनके लिए सम्भव न हो।

किसी बात को गहराई से समझना एक अलग बात है, जबकि उसे शब्दों में कह देना या लिख देना बिल्कुल दूसरी चीज़ होती है। कोई भी सच्चाई तभी इंसान के ज़ेहन का हिस्सा बनती है जब वह उसे पूरी चेतना के साथ पाता है। और कोई सच्चाई तब तक किसी इंसान के आचरण में नहीं उतरती जब तक वह उसे सोच-विचार कर स्वयं न समझ ले।

अपना आज सवारें

हर इंसान अपना बीता हुआ कल खो चुका है। असली कामयाब वही है जो अपना आज न खोए। बीता हुआ दिन तो गुज़र चुका है, अब आपके पास केवल आज का दिन है, तो फिर आप आज को क्यों खोएं?

अधिकतर लोगों की हालत ऐसी होती है कि वे अगर अपने बीते कल का सही इस्तेमाल न कर सकें तो इसी बात का अफ़सोस लेकर बैठ जाते हैं, यह असल में कल के लिए आज को भी खो देना है। न मिले हुए की चिन्ता में मिले हुए को भी खो देना है। समझदार व्यक्ति वही है जो खुद को इस दोहरे नुकसान से बचा लेता है।

अगर आपका पिछला कल खो गया है तो उसको खोया हुआ न समझिए, उसको अनुभव कमाने का साधन बनाइए। इस तरह आपकी खोई हुई पूँजी भी पाई हुई पूँजी बन जाएगी। अतीत के अनुभव की पूँजी को अपनी वर्तमान की पूँजी में मिला दीजिए। और फिर आप देखेंगे कि आपकी खोई हुई चीज़ भी और अधिक वृद्धि के साथ आपको दोबारा मिल गई है।

पिछले कल का अफसोस करना मानो अपनी क्षमता के एक हिस्से को नष्ट कर देना है। आप ऐसी ग़लती क्यों करें! आप नए दिन में अपनी अधूरी क्षमता के साथ क्यों प्रवेश करें! पिछले कल के दुख से अपने दिमाग़ को ख़ाली कर लीजिए और अपनी पूरी ताक़त को लेकर अपने नए दिन की योजना में लग जाइए। यही कामयाब जीवन का सही तरीका है।

आप चाहे कितनी ही ज़्यादा पिछले कल की चिन्ता करें, पिछला कल अब दोबारा आपकी तरफ़ वापस आने वाला नहीं। जाने वाली चीज़ जा चुकी रहने वाली चीज़ बाकी है। जाने वाली चीज़ को भुला दीजिए और रहने वाली चीज़ को अपनी पूरी ताक़त के साथ पकड़ लीजिए। यही इस दुनिया में कामयाबी हासिल करने का एकमात्र रहस्य है। यहाँ कामयाबी हासिल करने का दूसरा कोई तरीका नहीं।

बीते कल का मूल्यांकन करना बहुत जरूरी है, लेकिन उसके लिए दुखी होना उतना ही बेकार है। आपको यह जरूर देखना चाहिए कि आपने बीते कल में क्या हासिल किया और क्या खोया, लेकिन यह समीक्षा सिर्फ सीखने और सुधार के लिए होनी चाहिए, न कि पछतावे या दुख व्यक्त करने के लिए।

आज का पूरा उपयोग कीजिए क्योंकि बीता हुआ कल अब कभी लौटकर नहीं आएगा।

कठिनाईयां और संभावनाएं

समस्याओं को इंतजार के खाते में डालना और अवसरों का सही उपयोग करना, यही इस दुनिया में कामयाबी का असली राज़ है। यहाँ हमेशा समस्याओं के साथ नए अवसर भी मिलते हैं। कामयाबी उन्हीं लोगों को मिलती है जो समस्याओं को अनदेखा करके अवसरों का फायदा उठाकर आगे बढ़ते हैं।

समस्याओं का समाधान सीधे समस्याओं से लड़ने में नहीं, बल्कि अवसरों का सही इस्तेमाल करने में है। जब भी आपको मुश्किलों का सामना करना पड़े, तो देखिये कि इन समस्याओं के बावजूद कौन-कौन सी संभावनाएँ अभी भी आपके लिए खुली हैं, जिन पर आप स्वतंत्रता से काम कर सकते हैं।

उन सम्भावनाओं को जान करके अपनी ताकत को उनमें लगा दीजिए। यदि आप ऐसा करें तो जल्द ही आप देखेंगे कि सम्भावनाओं को इस्तेमाल करने के बाद समस्याएँ अपने-आप हल होती जाएँगी। जो कुछ हासिल हो सकता है, उसको हासिल करके आप उसको भी पा लेते हैं जो पहले आपको मिला हुआ नहीं था।

जीवन में सारा महत्त्व कर्म का है और कर्म केवल सम्भव दायरे में किया जा सकता है। असम्भव दायरे में कर्म करना कभी सम्भव नहीं होता। जब आप सम्भव दायरे में अपना कर्म शुरू करें तो इसका मतलब यह होता है कि आप अपनी व्यावहारिक शक्तियों को वहाँ लगा रहे हैं जहाँ उन शक्तियों को बेहतर रूप से लगाना सम्भव है। ऐसी मेहनत कभी-न-कभी अपना परिणाम देकर रहती है।

इसके विपरीत जब आप समस्याओं से उलझें, तो इसका मतलब यह होता है कि आप अपनी क्रियात्मक शक्तियों को वहाँ लगा रहे हैं जहाँ

क्रियान्वयन के बावजूद कोई नतीजा पाना सम्भव नहीं। ऐसी मेहनत के लिए यही निश्चित है कि वह बिना किसी लाभ के व्यर्थ होकर रह जाए।

समस्याएँ अपने आप में कोई स्थायी चीज़ नहीं हैं, असली महत्वपूर्ण बात तो अवसरों पर ध्यान देना है। अवसरों में अपन ध्यान लगाकर ही आप भविष्य में अपनी समस्याओं पर काबू पा सकते हैं। अगर आप लगातार समस्याओं में उलझे रहेंगे, तो न तो अवसरों का फायदा उठा पाएंगे और न ही उन समस्याओं से छुटकारा पा सकेंगे।

कामयाबी : 50% मेहनत, 50% मौका

सफलता का आधा हिस्सा इस बात पर निर्भर करता है कि आप उसके लिए पूरी मेहनत करें, और बाकी आधा हिस्सा इस बात पर कि आप ऐसी कोई गलती या काम न करें जो आपकी मेहनत को बेकार कर दे। यानी कामयाबी आधे-आधे हिस्सों का मेल है—जो करना है, उसे पूरी लगन से करें और जो नहीं करना है, उससे खुद को बचाएं।

उदाहरण के तौर पर, अगर कोई व्यक्ति शहर में दुकान खोलता है और उसे अच्छी तरह सजाता है, तो यह उसके काम का अपेक्षित हिस्सा है। लेकिन अगर वह लेन-देन में बेईमानी करे या ग्राहकों के साथ बुरा व्यवहार करे, तो उसकी दुकान सफल नहीं होगी।

इसी तरह, अगर कोई डॉक्टर पढ़ाई करके क्लीनिक खोलता है और जरूरी सारी चीजें रखता है, लेकिन उसका व्यवहार इतना खराब हो कि जो मरीज उसके पास आए, वे शिकायत लेकर वापस जाएं, तो वह डॉक्टर भी सफल नहीं होगा। क्योंकि उसने एक तरफ़ तो जरूरी काम किया, लेकिन दूसरी तरफ़ गलत काम करके अपनी मेहनत को निरर्थक कर दिया।

इस नियम का रिश्ता जीवन के हर तरह के व्यवहार से जुड़ा है। इंसान चाहे कोई भी काम करे या किसी भी क्षेत्र में सक्रिय हो, लेकिन इन दोनों शर्तों को पूरा करना उसके लिए अनिवार्य है। जो व्यक्ति एक शर्त को अपनाए और दूसरी को नजरअंदाज कर दे, वह इस संसाधनों भरी दुनिया में कभी सफलता नहीं पा सकता।

दुनिया भर की ज़्यादातर असफलताएँ और विफलताएँ नियमों के उल्लंघन का ही परिणाम होती हैं। हर किसी को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह अपने लक्ष्य के लिए सकारात्मक संघर्ष करे, साथ ही इस बात का भी ध्यान रखे कि वह अनजाने में अपने ही उद्देश्य के विरोध में न पड़ जाए। उदाहरण के तौर पर, अगर कोई व्यक्ति अपने जीवन को संवारने की कोशिश करते हुए लगातार लड़ाई-झगड़े करता रहे, तो वह कभी भी अपने मकसद में सफल नहीं हो पाएगा।

कठिनाईयों का सामना करना होगा

एक शायर अपनी सहज और प्रभावशाली शैली में जीवन की एक गंभीर सच्चाई को एक क़ते में इस तरह व्यक्त करता है:

कहा क्या ऊँट पर बैठूं	कहा हाँ ऊँट पर बैठो
कहा कोहान का डर है	कहा कोहान तो होगा
कहा दरिया में क्या उतरूँ	कहा दरिया में हाँ उतरो
कहा तूफ़ान का डर है	कहा तूफ़ान तो होगा
कहा क्या फूल को तोड़	कहा हाँ फूल को तोड़ो
कहा पर ख़ार (कांटा) का डर है	कहा पर ख़ार (कांटा) तो होगा

आज की दुनिया की यही हकीकत है। यहाँ अगर ऊँट है, तो उसके साथ उसकी कूबड़ भी है—ऐसा कोई ऊँट नहीं जो बिल्कुल समतल पीठ

वाला हो। इसी तरह, हर दरिया में तूफ़ानों का खतरा भी होता है—ऐसा कोई दरिया नहीं जहाँ सिर्फ शांति ही हो और तूफ़ान नाम की कोई चीज़ न हो। ठीक वैसे ही, ईश्वर द्वारा रचे इस संसार के बाग़ में यदि खूबसूरत फूल हैं, तो उनके साथ चुभने वाले कांटे भी मौजूद हैं।

इसका मतलब यह है कि इस दुनिया में जो आदमी कोई चीज़ हासिल करने का इच्छुक हो उसको अग्रिम रूप से यह जान लेना चाहिए कि यहाँ प्रगति का सफ़र कभी समतल रास्तों से तय नहीं होता। यहाँ समस्याओं पर काबू पाने के बाद ही किसी आदमी के लिए कामयाबी के दरवाज़े खुलते हैं। जो आदमी परिश्रम व समस्याओं को पार करने का साहस न रखता हो, उसको ख़ुदा की इस दुनिया में किसी प्रकार की कामयाबी की उम्मीद भी न रखनी चाहिए।

ईश्वर की बनाई हुई दुनिया वैसी ही रहेगी जैसी उसने इसे बनाया है। इसे बदलना हमारे लिए असंभव है। ऐसी स्थिति में इंसान के लिए जीवन और सफलता का एकमात्र रास्ता यही है कि वह इस स्थापित व्यवस्था की प्रकृति के साथ सामंजस्य बैठा ले।

इसके अलावा कोई भी दूसरा रास्ता इंसान की असफलता को बढ़ाएगा, न कि उसे कामयाबी की मंज़िल तक पहुंचाएगा।

दिल बड़ा कीजिये

बड़ा दिल रखने वाला इंसान हमेशा सफल होता है, जबकि छोटा दिल रखने वाला अक्सर असफल रह जाता है। इस दुनिया में कामयाबी उसी के हिस्से आती है जिसका बड़ा दिल होता है। कामयाबी का मूल नियम यही है—जितना बड़ा दिल, उतनी बड़ी सफलता।

कोई भी महत्वपूर्ण सफलता पाने के लिए हमें तुरंत सामने आए हालात से ऊपर उठकर सोचना पड़ता है। लोगों के व्यवहार से ऊपर उठकर उनसे व्यवहार करना होता है। हमें यह देखे बिना कि लोगों ने हमें क्या दिया या क्या नहीं दिया, उन्हें देना होता है।

इस प्रकार का चरित्र बड़े दिल के बिना सम्भव नहीं, इसलिए इस दुनिया में बड़े दिल के बिना कोई बड़ी कामयाबी भी किसी को मिलने वाली नहीं। चाहे एक देश हो या दूसरा देश, चाहे एक ज़माना हो या दूसरा ज़माना, हर स्थान पर और हर जगह के लिए यही एक उसूल है। इसमें किसी को कोई छूट नहीं।

जो आदमी छोटे दिल का हो वह ज़रा-ज़रा सी बात में लोगों के विरुद्ध शिकायत लेकर बैठ जाता है। वह उन मामूली बातों में उलझ जाता है जो इस योग्य हैं कि उनकी अवहेलना कर दी जाए। ऐसा आदमी रास्ते के बीच में अटक कर रह जाएगा। वह आख़िरी मंज़िल तक नहीं पहुँच सकता।

इसके विपरीत जो आदमी रास्ते की छोटी-छोटी बातों में न उलझे, वह कामयाबी के साथ अपना सफ़र जारी रखता है। वह अपने सुदृढ़ दिल को हर हाल में बाकी रखता है। वह किसी भी कड़वे - कसैले अनुभव से साहसविहीन नहीं होता। ऐसे आदमी के लिए यही लिखा होता है कि वह अपनी मंज़िल पर पहुँच कर रहे। वह विपदाओं से गुज़र कर आख़िरी चोटी तक पहुँच जाए।

इन्सान इस दुनिया में अपनी दिल की ताकत से ही जीतता है। जीवन की लड़ाई में जो व्यक्ति हताश हो जाता है, वह अपनी पूरी क्षमताओं को भी खो बैठता है। लेकिन जो व्यक्ति हर स्थिति में अपने दिल को आशा और भरोसे से भरपूर रखता है, वह अपनी ताकत और क्षमताओं को और भी बढ़ा लेता है।

सारी सफलताओं का असली मैदान इंसान का अपना दिल होता है। इसलिए बाहर की दुनिया को मत देखिए, बल्कि अपने दिल की दुनिया पर ध्यान दीजिए। अपने भीतर ही आप वह सब कुछ पा सकते हैं, जो आप पाना चाहते हैं।

सबके लिए भलाई

कोई भी इंसान इतना शक्तिशाली नहीं होता कि वह खुद को नुकसान पहुँचाए बिना दूसरे को नुकसान पहुंचा सके। हर बुराई सबसे पहले उसी व्यक्ति के लिए बुराई बनती है जो उसे करता है—दूसरों तक तो वह बाद में पहुँचती है।

अगर आप किसी और की तरक्की में बाधा डालना चाहें, तो सबसे पहले आपको अपने भीतर ईर्ष्या जैसी नकारात्मक भावना को जगाना होगा। जब तक आप खुद के अंदर जलन की आग न भड़काएँ, तब तक आप किसी की प्रगति के खिलाफ कोई साज़िश नहीं कर सकते।

यदि आप किसी को नुकसान पहुँचाना चाहते हैं, तो पहले आपको अपने भीतर ही विनाश का घर बनाना होगा। केवल तभी आप किसी और को उस विनाश की आग में झोंक सकेंगे।

इस दुनिया में सबसे बड़ी बुराई दूसरे का बुरा चाहना है। क्योंकि आप चाहे दूसरे का बुरा न कर सकें, मगर अपना बुरा निश्चय ही कर लेते हैं। दूसरे को तबाह करना किसी आदमी के बस में नहीं। मगर जब कोई व्यक्ति किसी दूसरे की तबाही की योजना बनाता है तो वह अपने आप को निश्चय ही तबाह कर लेता है।

यदि आप किसी दूसरे को हानि पहुँचाना चाहें तो यह इसके बिना नहीं हो सकता कि आप दूसरे के विरुद्ध सोचें। उसके विरुद्ध हानि की कोशिश करें। अपनी कोशिशों को नकारात्मक रुख़ पर चलाना शुरू कर दें। ये तमाम

चीजें अपनी तबाही का सामान हैं। यह दूसरे के बुरा चाहने के लिए स्वयं अपनी ज़ात को बुरा बनाना है। यदि आप दूसरे के विरुद्ध अपने इरादे में कामयाब हो जाएँ तब भी दूसरे को हानि पहुँचाने के लिए आप स्वयं अपने जान व माल का बहुत-सा नुक्सान करते हैं। दूसरे को घाव पहुँचाने की कोशिश में स्वयं अपने-आप को भी घायल कर चुके होते हैं। फिर ऐसी कार्रवाई से क्या फ़ायदा?

किसी और का बुरा चाहना, केवल उसी का बुरा चाहना नहीं होता—बल्कि यह अपने ही साथ बुरा करने जैसा होता है। इंसान को चाहिए कि अगर वह दूसरों का भला नहीं कर सकता, तो कम से कम अपनी भलाई के बारे में तो सोचे।

अगर वह दूसरों को कुछ देने का इरादा नहीं रखता, तो कम से कम खुद को तो वंचित न करे। अगर वह दूसरों के लिए नहीं जीना चाहता, तो कम से कम अपने लिए तो जिए।

ऊँचा लक्ष्य

अरब देश की एक टीम मुम्बई आई और एक होटल में ठहरी। उन्हें अपने देश के लिए कुछ काम करने वालों की ज़रूरत थी। उन्होंने अंग्रेज़ी अख़बारों में विज्ञापन छपवाए। किसी विज्ञापन को देखकर दिल्ली के एक पढ़े-लिखे नौजवान ने भी अपने दस्तावेज़ उन्हें भेजे। इसके जवाब में उसे मुम्बई से इंटरव्यू का कार्ड मिल गया। वह नौजवान रिक्शे में बैठकर घर से रेलवे स्टेशन की ओर निकला। उसके साथ उसका एक दोस्त भी था जो उसे स्टेशन तक छोड़ने जा रहा था। रास्ते में एक जगह कुछ अनपढ़ लड़के खेल रहे थे। जब रिक्शा उनके पास से गुज़रा तो एक लड़के ने उनपर गन्दी टिपण्णी की, और दूसरे ने उनपर पत्थर फेंक दिया। अब उस नौजवान के दोस्त को

गुस्सा आ गया। उसने सोचा कि रिक्शा रोककर नीचे उतरे और लड़कों को मारे। लेकिन नौजवान ने उसका हाथ पकड़कर बैठा लिया और कहा: जाने दो, हमारे पास इतना समय कहाँ है।

इस नौजवान के सामने एक मंज़िल थी। वह चाहता था कि समय पर स्टेशन पहुँच कर ट्रेन पकड़े। मुम्बई जाकर इण्टरव्यू दे और फिर अरब पहुँच कर दस हजार रुपये महीना कमाए। इस उद्देश्य ने उसकी नज़र में लड़कों की गाली या उनकी कंकरी को तुच्छ बना दिया। वह उनकी अवहेलना करके आगे बढ़ गया।

यही मामला ज़्यादा बड़े पैमाने पर ईमान वालों का है। वे लोग ईश्वर की सृष्टि निर्माण योजना से लोगों को अवगत करने को अपना उद्देश्य मानते हैं। ईश्वर की सृष्टि निर्माण योजना की धारणा उनकी नज़र में बाक़ी तमाम चीज़ों को तुच्छ कर देती है। वे लोगों की तरफ़ से बुरे शब्द सुनते हैं, उनकी तरफ़ पत्थर फेंके जाते हैं, मगर वे उन चीज़ों की परवाह नहीं करते। वे यह कहकर आगे बढ़ जाते हैं कि हमारे पास इतना समय कहाँ है कि हम इस प्रकार की छोटी चीज़ों में उलझें।

इस नौजवान की मंज़िल सिर्फ़ दस हज़ार रुपये महीने की तनख्वाह थी। लेकिन लेकिन खुदा का पैगाम पहुँचाने वाले और सच्चे मोमिन के सामने जन्नत की मंज़िल होती है। उसके सामने यह वादा होता है कि उसका वह बंदा जो उसका संदेश लोगों तक पहुँचाएगा और इस रास्ते में हर तरह की तकलीफ़ और मुसीबत को सह लेगा, उसके लिए आख़िरत में हमेशा की जन्नत तय है। वह यह सोचता है कि धैर्य ही तो जन्नत की कीमत है। फिर अगर मैं लोगों की तकलीफ़ों पर सब्र न करूँ तो आख़िरत में जन्नत में मुझे दाख़िला किस तरह मिलेगा!

उपेक्षा में ही इस दुनिया की भी कामयाबी है और इसी में आख़िरत की भी कामयाबी है।

रास्ता तलाश कीजिये

एक माली को कोई पौधा लगाना था। उसने बाग़ में एक गड्ढा खोदा और उस गड्ढे में ज़मीन को नरम करने के लिए एक बाल्टी पानी डाला। कुछ देर बाद जब पानी सूख गया, तो उसने देखा कि ज़मीन के नीचे कहीं एक छेद था। उस छेद से सारा पानी नीचे बह गया था।

यह घटना प्रकृति के एक नियम को दर्शाती है, जिसे पानी ने अपने व्यवहार से समझाया। पानी ने यह कोशिश नहीं की कि वह गड्ढे की सख्त मिट्टी को तोड़कर अपना रास्ता बनाए, बल्कि उसने अंदर कोई कमजोर बिंदु खोजा—एक छोटा-सा छेद—और उसी से गुजरता हुआ नीचे चला गया।

यही प्राकृतिक सिद्धांत इंसानी जीवन पर भी लागू होता है। जब भी किसी व्यक्ति को कोई कार्य करना हो—चाहे वह सांसारिक हो या आध्यात्मिक, जैसे धर्म का प्रचार—तो सबसे पहली आवश्यकता यह होती है कि वह अपने वातावरण का सूक्ष्म अध्ययन करे और यह पहचाने कि उसके लिए सबसे उपयुक्त प्रवेश-बिंदु क्या है। वह कौन-सी जगह या अवसर है जहाँ से वह सहजता के साथ अपने कार्य की शुरुआत कर सकता है। यही वह प्रारंभिक बिंदु होगा, जहाँ से कर्म का आरम्भ करके वह भविष्य में व्यापक और स्थायी मार्गों तक पहुँच सकता है। इंसान जब भी कोई योजना बनाता है तो उसका एक आख़िरी लक्ष्य होता है। जैसे एक मकान निर्माण करना हो तो उसका अन्तिम लक्ष्य ऊपर की छत होगा। लेकिन आप अपने मकान का निर्माण ऊपर की छत से शुरू नहीं कर सकते। आपको निश्चय ही अपने मकान का आरम्भ उसकी बुनियाद से करना होगा।

यही सिद्धांत सभी इंसानी कार्यों पर लागू होता है। हर काम का एक शुरूआती बिंदु होता है और एक समाप्ति का बिंदु। इंसान को इन दोनों के बीच का फर्क समझना चाहिए। उसे यह सत्य जानना चाहिए कि अगर वह

शुरुआत से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ेगा, तो वह अपनी मंज़िल तक पहुँच सकता है। लेकिन अगर वह अपनी योजना को समाप्ति बिंदु से शुरू करने की कोशिश करेगा, तो चाहे वह सदियों तक प्रयास करता रहे, कहीं नहीं पहुँचेगा—यह इस दुनिया के लिए खुदा का तय किया हुआ नियम है।

किसी कार्य के समाप्ति बिंदु को जानना उत्साह और प्रेरणा है, जबकि कार्य के शुरूआती बिंदु को पहचानना समझदारी और होशमंदी।

पराजय नाकामी नहीं

पराजय केवल देर से मिलने वाली सफलता का एक कदम है, लेकिन वह नाकामी नहीं है। पराजय किसी व्यक्ति के लिए एक विराम मात्र है, इसका मतलब यह नहीं कि उसका सफर खत्म हो गया। ऐसी स्थिति में पराजय से निराश होने की कोई जरूरत नहीं है।

जीवन की यात्रा कभी लगातार एक ही रफ्तार से नहीं चलती। इसमें उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। कई बार विभिन्न कारणों से इंसान नुकसान उठाता है या हार जाता है, लेकिन हर हार या नुकसान अस्थायी होता है। आपको ऐसी घटनाओं से निराश नहीं होना चाहिए और अपनी मेहनत जारी रखनी चाहिए। चाहे आज नहीं, तो कल जरूर आप सफलता हासिल करेंगे।

नुकसान सिर्फ़ नुकसान नहीं या हार केवल हारना नहीं। इनमें फ़ायदे का पहलू भी है। हानि या हार की घटना जब पेश आती है तो उससे आदमी को बहुत से नए अनुभव हासिल होते हैं। उसकी क्षमताएँ नए सिरे से जाग उठती हैं। इस तरह नई चीज़ को पाना, खोई हुई चीज़ की क्षतिपूर्ति बन जाता है।

शुरू में जब कोई पराजय होती है तो आदमी तत्काल झुंझला उठता है। लेकिन यदि वह अपने काम को जारी रखे तो नई कामयाबियाँ उसको जल्द

ही इतनी ज्यादा ख़ुशी और सन्तोष दे देंगी कि पिछली बात उसको याद भी नहीं रहेगी। विजय की ख़ुशी पराजय के सारे दुख को बहुत जल्द भुला देगी।

आदमी को चाहिए कि वह हमेशा आगे की तरफ़ देखे। वह आज के बजाय कल पर अपनी नज़रें जमाए रहे। जो व्यक्ति ऐसा करेगा, उसके लिए अस्थायी अप्रियता को झेलना आसान हो जाएगा। आने वाली जीत के लिए वह आज की हार को भूल जाएगा। शाम उसके लिए शाम न होगी, बल्कि सहज रूप से वह सुबह की प्रतीक्षा बन जाएगी।

अस्थायी हार का सामना होना आपकी कोई गलती नहीं है; यह तो प्रकृति के सामान्य नियमों का हिस्सा है। इस दुनिया को इसी तरह बनाया गया है कि यहाँ जीत के साथ हार भी आती है, सफलता के साथ नाकामी का अनुभव भी होता है। ऐसा लगता है कि जो कुछ होता है, वह होना ही था। ऐसे में निराश या दुखी होने की कोई आवश्यकता नहीं है।

चेतना का विकास

आज के दौर में जापान की अद्भुत तरक्की एक जानी-पहचानी सच्चाई बन चुकी है। जापान ने यह तरक्की किसी विरोध प्रदर्शन के ज़रिए नहीं पाई, बल्कि अपने लोगों के अंदर जागरूकता पैदा करके हासिल की है। जापानी मामलों के एक विशेषज्ञ रॉबर्ट हैज़ (Robert Hayes) लिखते हैं कि जापान ने अपने लोगों के लिए गुणवत्ता को सोचने का एक तरीका (Way of thinking) बना दिया। इस बारे में उन्होंने ये शब्द लिखे हैं:

> 'You don't get quality into a product by inspection, you have to build it in.'

> 'किसी चीज़ में गुणवत्ता को केवल निरीक्षण के ज़रिए नहीं डाला जा सकता। इसके लिए हर कर्मचारी के अंदर इसकी चेतना पैदा करनी होती है।' (*हिन्दुस्तान टाइम्स*, 28 दिसम्बर, 1986, पृष्ठ 9)

अमेरिका ने दूसरे विश्वयुद्ध में और उसके बाद जापान के साथ जो कुछ किया था, उसके अनुसार अमेरिका जापान के लिए दुश्मन नम्बर एक की हैसियत रखता था। जापान ने जंग के बाद जब अपना नवनिर्माण शुरू किया तो पहला काम यह किया कि अपने लोगों को नकारात्मक सोच से मुक्त किया। उसने नफ़रत और बदले की चेतना से ऊपर उठकर अमरीकियों से व्यवहार किया। इसका नतीजा यह हुआ कि जापान उससे बच गया कि वह अपनी ताकत को अनावश्यक प्रकार की नकारात्मक कार्रवाइयों में ख़र्च करता। नकारात्मक मनोविज्ञान से ऊपर उठने का नतीजा यह हुआ कि उसने स्वयं अपने दुश्मन को अपना संसाधन बना लिया।

सबसे पहला ट्रांजिस्टर अमेरिका की बेल लैबोरेट्रीज़ (Bell Laboratories) ने ईजाद किया। जापानी अगर अमेरिका के विरुद्ध नफ़रत की भावना अपने सीने में लिए हुए होते तो वे अमेरिका से कुछ सीख नहीं सकते थे। मगर इनकी सकारात्मक सोच का यह नतीजा हुआ कि उन्होंने तुरन्त इस आविष्कार को पकड़ लिया। इससे पहले कि बेल लैबोरेट्रीज़ ट्रांजिस्टर बनाए, जापानियों ने बहुत बड़ी मात्रा में ट्रांजिस्टर बना कर अन्तरराष्ट्रीय मार्किट पर कब्जा कर लिया। इसी तरह फ़ैक्स की तकनीक अमेरिका में आविष्कृत हुई, मगर जापान ने सबसे पहले उसका व्यापारिक लाभ हासिल किया।

बदले से समाधान नहीं

हर उस व्यक्ति को जो किसी से बदला लेना चाहता है सोच ले कि बदले का भी बदला लिया जाएगा। यह जीवन की एक अहम सच्चाई है, और जो कोई इस दुनिया में सफल और सुखी जीवन बिताना चाहता है, उसे इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए।

जब कोई व्यक्ति आपको तकलीफ़ देता है, तो आपके दिल में उसके प्रति बदले की भावना जाग उठती है। आप चाहते हैं कि उसका बदला लेकर अपने मन की आग ठंडी करें। लेकिन सोचने वाली बात यह है कि जिस व्यक्ति ने आपको तकलीफ़ दी, उसी तकलीफ़ को जब आप किसी दूसरे को देंगे, तो क्या उसके मन में फिर से बदले की भावना नहीं जागेगी? निश्चित ही जागेगी।

आपके बदले के बाद वह भी बदला लेने की कोशिश करेगा। इस तरह बुराई का एक चक्र शुरू हो जाएगा, जिसमें आपको एक तकलीफ़ के बाद दूसरी तकलीफ़ सहनी पड़ेगी।

इसलिए समझदारी यही है कि इस चक्र से बचने का रास्ता अपनाएं और विवाद को शुरुआत में ही खत्म कर दें।

जब आप किसी से बदला लें तो यह कोई अच्छी बात नहीं होती। बदला लेने के लिए आपको अपनी ताकत ख़र्च करनी पड़ती है। समय और पैसों की काफ़ी मात्रा ख़र्च किए बिना कोई व्यक्ति किसी दूसरे आदमी से बदला नहीं ले सकता।

अब अगर बदला लेने वाला अपने बदले के मंसूबे में कामयाब हो जाए तब भी यह अपनी कुछ और राशि खोने की कीमत पर होता है। बदला लेकर आदमी आख़िर में जो चीज़ पाता है, वह केवल एक मनोवैज्ञानिक सुख है, इससे ज्यादा और कुछ नहीं।

लेकिन अगर आप वही समय और वही रकम किसी सकारात्मक काम—जैसे कारोबार—में लगाएँ, तो वह रकम रूप बदलकर सुरक्षित हो जाती है और साथ ही कुछ लाभ के साथ आपके पास वापस आती है। बदला लेने में ऊर्जा खर्च करना अपनी ताकत को खो देने जैसा है, जबकि सकारात्मक काम में ऊर्जा लगाना अपनी ताकत को बढ़ाकर वापस पाने जैसा होता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति को अपनी संपत्ति को खोने वाले के बजाय बढ़ाने वाले कार्यों में खर्च करना चाहिए।

ख़ुद पर जीत

एडमण्ड हिलैरी (Edmund Hillary) का जन्म 2 जुलाई, 1919 को न्यूज़ीलैण्ड के शहर आक्लैण्ड में हुआ। उसे पहाड़ों पर चढ़ने का बहुत शौक था। शुरू में वह अपने देश के ही पहाड़ों पर चढ़ा करता था। उसने पहली बार 1951 में एक टीम के साथ हिमालय की चोटी एवरेस्ट पर चढ़ने की कोशिश की, जो 29028 फीट ऊँची है। पहली बार वह सफल नहीं हो सका। 1953 में वह दूसरी बार एक ब्रिटिश टीम के साथ एवरेस्ट पर चढ़ने के लिए निकला। इस बार उसने एक नेपाली व्यक्ति तेनजिंग नॉरगे को गाइड के तौर पर अपने साथ लिया। 29 मई, 1953 को वह एवरेस्ट की चोटी पर पहुँच गया। वह दुनिया का पहला इंसान बना जिसने सबसे ऊँची चोटी पर कदम रखा। इसलिए वह तुरंत ही सारी दुनिया में मशहूर हो गया। ब्रिटेन की सरकार ने 16 जुलाई को उसे ‘सर’ की उपाधि दी। उसने अपने पहाड़ी अनुभवों पर एक किताब लिखी जो 1955 में ‘हाई एडवेंचर’ (High Adventure) के नाम से प्रकाशित हुई।

सर एडमण्ड हिलैरी ने अपनी किताब में जो बातें लिखी हैं उनमें एक शिक्षा की बात यह है कि हम पहाड़ को विजय नहीं करते हैं, बल्कि हम

स्वयं अपने आप को विजय करते हैं : It is not the mountain we conquer but ourselves.

यह एक सादा-सी मगर अत्यन्त अहम बात है। हकीकत यह है कि इस दुनिया में हर विजय असल में अपने-आप पर विजय पाने का नतीजा होती है। हर विजय सबसे पहले यह चाहती है कि उसके लिए ज़रूरी संघर्ष किया जाए। मानो कि आदमी को सबसे पहले अपने आप को संघर्ष के योग्य साबित करना पड़ता है, इसके बाद ही इस दुनिया में वह यह अधिकार पाता है कि संघर्ष की योग्यता को विजय व कामयाबी का स्थान प्रदान किया जाए।

चाहे पहाड़ पर चढ़ना हो या कोई और सफलता हासिल करनी हो, इंसान को सबसे पहले मेहनत और परिश्रम की परीक्षा में पास होना पड़ता है। उसे यह साबित करना होता है कि उसमें धैर्य और सहने की ताकत है। जिस दिन इंसान यह साबित कर देता है कि उसमें ज़रूरी काबिलियत है, उसके अगले ही दिन दुनिया देखती है कि वह सफलता की ऊँची चोटी पर जीत के साथ खड़ा है।

हर रात के बाद सवेरा

एक ने कहा कि शाम हो गई। दूसरे ने कहा: यूँ कहो कि सुबह आने वाली है। अगर आप किसी स्थिति को सिर्फ़ आज की नज़र से देखें तो आपको सामने अंधेरा ही दिखेगा। लेकिन अगर आप उसी बात को आने वाले समय की नज़र से देखें, तो आपको सामने के आसमान में रौशनी दिखाई देने लगेगी।

अधिकतर लोग सिर्फ अपने आज को देखते हैं। इसलिए अगर उनके आज के हालात अच्छे नहीं होते, तो वे मान लेते हैं कि उन्हें अच्छा जीवन नहीं मिला। जबकि समझदारी की बात यह है कि आने वाले कल पर ध्यान

दिया जाए। अनुभव यह बताते हैं कि आने वाला कल अक्सर ऐसे अवसर लेकर आता है, जिनकी पहले किसी ने कल्पना भी नहीं की होती। अवसर ज़मीन हर क्षण घूम रही है। ज़मीन के ऊपर बार-बार शाम भी आती है और सुबह भी होती है। जिन लोगों की नज़र केवल क़रीब पर हो, वह जब शाम को देखेंगे तो कह देंगे कि अब तो जीवन की शाम आ गई। मगर जो लोग दूर तक देखने की योग्यता रखते हों, वे कह उठते हैं कि शाम को शाम की नज़र से न देखो। उसको इस नज़र से देखो कि वह आने वाली सुबह की प्रस्तावना है।

जीवन में जब भी कोई नापसन्दीदा स्थिति पेश आए तो वह एक नई पसन्दीदा स्थिति की प्रस्तावना होती है। वह एक नए भविष्य की ख़बर देती है। आदमी को चाहिए कि वह मायूसी का शिकार होने के बजाए अपने ज़ेहन को इस्तेमाल करे। वह अपनी सोच को हरकत में लाकर आगे बढ़ जाए।

इंसान को इस दुनिया में जो कुछ नहीं मिला है, वह उस चीज़ से कहीं ज़्यादा है जो उसे अब तक मिल चुकी है। इसका मतलब यह है कि अगर वह थोड़ा खो बैठता है, तब भी उसके पास आगे बहुत कुछ पाने का मौका रहता है। लोग जब एक छोटी चीज़ खो देते हैं, तो मायूस हो जाते हैं, जबकि उनके सामने अब भी बड़े अवसर मौजूद होते हैं, जिनसे वे अपने हौसले आज़मा सकते हैं। जब किसी को एक बूँद नहीं मिलती, तो वह शिकायत करने लगता है, यह भूलकर कि उस बूँद के अलावा भी एक पूरा समुंदर अब भी उसका इंतज़ार कर रहा है, उसे पाने के लिए उसको अपनी कोशिश जारी रखनी चाहिए।

दुनिया में जो कुछ भी इन्सान से छिन जाता है, वह अंतिम नुक़सान नहीं होता। जब भी कोई चीज़ छिनती है, तो उसी वक़्त कोई नई चीज़ पाने का मौका ज़रूर सामने आता है। सही सोच रखने वाला वही होता है जो

गुज़रे हुए नुक़सान में उलझने के बजाय, भविष्य में मिलने वाले अवसरों की ओर नज़र टिकाए रखता है।

इल्म की अहमियत

दुनिया की तमाम दौलतों में सबसे बड़ी दौलत सूझ-बूझ है। इस दुनिया में सीखने से बढ़कर कोई और दौलत नहीं है। एक विचारक ने कहा है कि सीखना एक आम इंसान को खास बना देता है:

Learning makes a man super man.

इंसान और जानवर में फर्क यह है कि जानवर की जानकारी सीमित होती है। जानवर यह नहीं कर सकता कि वह अपनी जानकारी को बढ़ा सके। इसके मुकाबले में इंसान की खासियत यह है कि वह अपने ज्ञान को लगातार बढ़ाता रहता है। इस मामले में इंसान के दिमाग़ की छमता की कोई सीमा नहीं होती। यही वजह है कि इंसान उम्र के आख़िरी हिस्से तक नई बातें सीखता रहता है। दिमाग़ की कोई सीमा नहीं होती, इसलिए सीखने और जानने की भी कोई सीमा नहीं होती।

इंसानी व्यक्तित्व की पूर्ति में सबसे ज्यादा हिस्सा इसी ज्ञान का है। यह असल में ज्ञान ही है जो एक आम आदमी को महान आदमी बनाता है, जो एक मामूली इंसान को असाधारण इंसान बना देता है।

ज्ञान के ज़रिए यह सम्भव होता है कि आदमी अपने व्यक्तित्व का विस्तार कर सके। वह गुज़रे हुए इतिहास को किताबों में पढ़कर जान ले। वह अध्ययन करके दुनिया भर में होने वाली घटनाओं से अवगत हो जाए। ज्ञान के ज़रिए आदमी इस क़ाबिल बनता है कि वह बातों का विश्लेषण करके नई- नई हकीकतें मालूम करे। वह अतीत और वर्तमान से शिक्षा लेकर

भविष्य का अन्दाज़ा कर सके। वह बड़े दिमागों के विचारों को जानकर इतिहास के अगले पायदान पर क़दम रख सके।

ज्ञान आदमी को जानवर के दर्जे से उठाकर वास्तविक मानवता के दर्जे पर पहुँचाता है। ज्ञान इंसान को इस काबिल बनाता है कि वह पूरी दुनिया से सोचने-समझने का सामान लेकर अपने जीवन को बेहतर बना सके। वह अपने जीवन की बेहतर और ज्यादा सफल योजना बना सके। ज्ञान के बिना हर इंसान अधूरा होता है, और ज्ञान के साथ हर इंसान पूरा होता है।

मुहब्बत से जीत

अगर आप किसी इंसान की मूर्ति के सामने खड़े होकर उसे सख़्त शब्दों में कुछ कहें या प्यार भरे शब्द बोलें, तो वह किसी भी हाल में कोई प्रतिक्रिया नहीं देगी—न तो सख़्त बात पर नाराज़ होगी और न ही नरम बात पर खुशी ज़ाहिर करेगी। लेकिन एक ज़िंदा इंसान का मामला अलग होता है। वह सख़्त बात पर गुस्सा कर सकता है और मीठे बोल सुनकर नरम हो जाता है।

समाज की बहुत-सी घटनाएँ इसी इंसानी स्वभाव की गवाही देती हैं। जब आप किसी इंसान से सख़्त लहजे में बात करते हैं, तो वह आपका दुश्मन बन सकता है। वह आपके ख़िलाफ़ बदला लेने की सोचने लगता है। लेकिन जब आप उसी इंसान से प्यार भरे अंदाज़ में बात करते हैं, तो वह आपका दोस्त बन जाता है। कुछ तरह की बातें लोगों को आपसे दूर कर देती हैं, और कुछ बातें लोगों को आपके करीब ले आती हैं।

सामाजिक जीवन को कामयाब बनाने का यह सबसे ज़्यादा आज़माया हुआ नुस्खा है। अगर आप समाज के अन्दर सम्मानजनक जीवन गुज़ारना चाहते हैं, अगर आप यह चाहते हैं कि लोग आपके विरुद्ध रुकावट न बनें, बल्कि वे आपके मददगार बन जाएँ, तो केवल एक उसूल को अपनी

ज़िन्दगी में अपना लीजिए और वह है हर एक के साथ नरमी और मुहब्बत के साथ पेश आना।

जो नरमी से पेश आए, उसके साथ नरमी और जो सख़्ती करे, उसके साथ सख़्ती, यह नियम तबाह करने की हद तक ग़लत है। इसके उलट, सही उसूल यह है कि नरमी करने वालों से भी नरमी से पेश आओ और जो सख़्ती करें, उनसे भी नरमी से पेश आओ। अगर कोई व्यक्ति किसी वजह से आपसे नाराज़ हो जाए, तो आप भी ग़ुस्से में आकर प्रतिक्रिया न दें। बल्कि उसके बुरे व्यवहार को नज़रअंदाज़ करते हुए आप उससे अच्छा व्यवहार करें। उसके कड़वे शब्दों का जवाब आप मीठे शब्दों से दें। अगर वह आपको नुक़सान पहुँचाए, तब भी आप उसे फायदा पहुँचाने की कोशिश करें। फिर आप देखेंगे कि जो व्यक्ति पहले आपका दुश्मन था, वही अब आपका सबसे क़रीबी दोस्त बन गया है।

सूझबूझ से व्यापार

एक मुसलमान जो दिल्ली में रहते हैं, एक कामयाब मोटर मैकेनिक माने जाते हैं। उनकी सफलता का राज़ क्या है, इसका अंदाज़ा उनके जीवन की एक घटना से लगाया जा सकता है:

1982 में यह खबर फैली कि जल्दी ही जापानी कंपनी सुज़ूकी की बनाई हुई मारुति कार बाजार में आने वाली है। इस मुसलमान के दिमाग में तुरंत यह बात आई कि जब मारुति कार भारत की सड़कों पर चलने लगेगी, तो उसकी सर्विस और मरम्मत का काम भी शुरू होगा। उस समय जो व्यक्ति यह काम जानता होगा, वह ज़रूर कामयाब रहेगा।

इस मुसलमान को मालूम था कि जापान की सुज़ूकी कंपनी पिछले दस सालों से पाकिस्तान में यही कार बनाकर बेच रही है। वहाँ की सड़कों

पर हजारों की संख्या में ये कारें चल रही हैं। इसलिए उन्होंने यह काम सीखने के लिए पाकिस्तान जाने का फैसला किया। वे दिल्ली से कराची गए। वहाँ उन्होंने दो महीने रहकर सुज़ूकी की मरम्मत और सर्विस का काम सीखा। और फिर दोबारा दिल्ली लौट आए।

हिन्दुस्तान में बनी हुई मारुति गाड़ी जब यहाँ की सड़कों पर चलने लगी, उस समय तक वे उसका काम सीख चुके थे। उन्होंने मारुति का काम लेना शुरू कर दिया। ग्राहकों को उनका काम पसन्द आ गया। उन्होंने मारुति की सर्विस में काफ़ी पैसे कमाए।

ज़रा सोचिए तो उपरोक्त मुसलमान की इस कामयाबी में तीन चीजें शामिल हैं : जानकारी, पूर्व योजना और प्रगति। वे उससे परिचित थे कि पाकिस्तान में सुजूकी कम्पनी की गाड़ियाँ चल रही हैं। फिर उन्होंने अग्रिम तौर पर यह अनुमान लगाया कि जल्द ही हिन्दुस्तान में इन गाड़ियों की सर्विस और मरम्मत का काम शुरू होने वाला है। फिर उनके अन्दर यह साहस था कि वे इसकी तरफ़ बढ़ सकें।

इन्हीं खूबियों को व्यापारिक समझदारी कहा जाता है। जिस इंसान में यह व्यापारिक समझदारी होती है, वह इस दुनिया में ज़रूर कामयाब होता है। कामयाबी एक फ़िफ़्टी-फ़िफ़्टी का मामला है। इसका रिश्ता पचास प्रतिशत मौकों से होता है और पचास प्रतिशत उन मौकों का सही इस्तेमाल करने की काबिलियत से।

निरंतर संघर्ष

सौ साल की यात्रा केवल इतना भर करने से पूरी नहीं हो जाती कि हम कैलेंडर में सौ साल आगे की तारीख दर्ज कर दें। जो लोग वास्तविकता की

कसौटी पर पीछे खड़े हों, वे सिर्फ़ बड़े-बड़े दावे कर के आगे नहीं बढ़ सकते। आगे बढ़ने के लिए ज़रूरी है कि वे तथ्यों को अपने पक्ष में मोड़ें।

जिस तरह ज़मीन को सूरज के चारों ओर सौ बार चक्कर लगाने में सौ साल लगते हैं, उसी तरह इंसान की मंज़िल भी लंबी और सतत कोशिशों के बाद ही हासिल होती है। अगर इंसान को किसी दूर के लक्ष्य तक पहुँचना है, तो उसे लगातार उस दिशा में बढ़ते रहना होगा—तब जाकर मंज़िल उसके क़रीब आएगी।

अगर कोई व्यक्ति समाज में ऊँचा मुकाम पाना चाहता है, तो उसे पहले उस मुकाम के लिए ज़रूरी संघर्ष करना होगा और सफलता के सभी कारणों को इकट्ठा करना होगा। तभी वह सच्चे मायनों में सम्मान का हकदार बन सकता है। और यदि किसी क़ौम को तरक्की करनी है, तो उसे पहले तैयारी के एक लम्बे दौर से गुज़रना पड़ेगा। जब तक तैयारी पूरी न हो, तब तक कोई क़ौम प्रगतिशील नहीं बन सकती।

प्रगति और कामयाबी हमेशा किसी तैयारी का नतीजा होती हैं। पहले तैयारी की जाती है, उसके बाद उसका नतीजा सामने आता है। यदि आप चाहें कि तैयारी के बिना उसका नतीजा पा लें, तो मौजूदा दुनिया में यह बिलकुल असम्भव है। आप नतीजे से अपने जीवन का सफ़र शुरू नहीं कर सकते। जीवन का सफ़र जब भी शुरू होगा तो वह तैयारी से शुरू होगा, वरना कभी शुरू ही न होगा।

लोग किसी की प्रगति को देखकर ईर्ष्या क्यों करते हैं? उसकी वजह यह है कि वे तैयारी को पीछे छोड़कर नतीजे को हासिल करना चाहते हैं। और इस तरह जब उन्हें नतीजा नहीं मिलता तो वे दूसरे व्यक्ति से जलन का शिकार हो जाते हैं। यद्यपि वे दूसरे व्यक्ति की तरह ज़रूरी तैयारी करते तो निश्चय ही वे भी उसी नतीजे को पा लेते, जिसको दूसरे व्यक्ति ने पाया है।

अगर आप सौ साल की दूरी तय करना चाहते हैं, तो भी आपको रोज़ थोड़ा-थोड़ा करके ही आगे बढ़ना होगा। आप कागज़ पर कुछ भी मनचाहा

लिख सकते हैं, लेकिन ज़मीन की हकीकत को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ बनाने के लिए संघर्ष के सिवा और कोई रास्ता नहीं है।

दो तरह के लोग

एक तरह का इंसान वह होता है जो कम बोलता है और ज़्यादा काम करता है। दूसरी तरह का इंसान वह होता है जो ज़्यादा बोलता है और कम काम करता है। पहले प्रकार का इंसान ही असली इंसान होता है, जबकि दूसरा इंसान, इंसान के रूप में होते हुए भी असल में मानव नहीं।

भारत में आपातकाल (1975-77) के दौरान फ़ख़रुद्दीन अली अहमद राष्ट्रपति थे। उनके पास उत्तर प्रदेश से एक मुसलमान शख़्स आया। उसने बताया कि उसके भाई को पुलिस ने मीसा क़ानून के तहत गिरफ़्तार करके जेल में डाल दिया है, जबकि वह पूरी तरह निर्दोष है। फ़ख़रुद्दीन अली अहमद ने उसके भाई का नाम और पता लिख लिया और उस मुसलमान को रवाना कर दिया। उस आदमी को लगा कि फ़ख़रुद्दीन साहब ने उसकी बात को अनसुना कर दिया। लेकिन जब वह ट्रेन से सफर करके अपने घर पहुँचा, तो देखा कि उसका भाई रिहा होकर पहले ही घर लौट चुका था।

बात यह थी कि उपरोक्त मुसलमान को रुख़सत करने के बाद फ़ख़रुद्दीन अली अहमद साहब ने अपने सैक्रेटरी से कहा कि अमुक ज़िला के कलेक्टर को फ़ोन करो और उससे कहो कि इस नाम के एक साहब आपके यहाँ जेल में हैं। राष्ट्रपति साहब ने उनका हाल-चाल पूछा है। कलक्टर ने जब यह सुना तो वह डर गया। वह समझा कि जिस आदमी को उसने जेल में बन्द कर रखा है, वह कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है, इसीलिए तो राष्ट्रपति महोदय उसका हाल-चाल पूछ रहे हैं, अतः तुरन्त उसको जेल से रिहा कर दिया।

एक साहब जो दिल्ली में रहते हैं अक्सर मुझसे कहते थे कि अंग्रेज़ी अख़बारों में उनके अच्छे संबंध हैं। वे मुस्लिम नौजवानों को अंग्रेज़ी समाचार पत्रों में जगह दिला सकते हैं। मगर मुसलमानों में इसके लिए कोई रुचि ही नहीं है। इसके बाद मेरी मुलाकात एक मुस्लिम नौजवान से हुई। उन्होंने अंग्रेज़ी में एम.ए. किया था और मेहनती भी थे। मैंने उन्हें उन साहब के पास भेजा। उन साहब ने उस नौजवान को बिना किसी का नाम लिखे एक चिट्ठी दे दी, जिसमें यह लिखा था: 'मैं इनसे सीधे तौर पर परिचित नहीं हूँ। आप इनका टेस्ट ले लें और अपने टेस्ट में जैसे भी पाएँ, उसी के अनुसार इनसे व्यवहार करें।' यह कहने की ज़रूरत नहीं कि उस नौजवान ने उस चिट्ठी का कोई उपयोग नहीं किया।

ज़िंदगी में असली महत्त्व काम करने का है, न कि बातों का। कम बोलना और ज़्यादा काम करना इंसान को सम्मान दिलाता है। इसके उलट ज़्यादा बोलना और कम काम करना इंसान को लोगों की नज़र में भी और ख़ुदा की नज़र में भी महत्वहीन बना देता है।

धैर्य की प्रतिकिर्या

इस दुनिया में कामयाबी का सबसे बड़ा रहस्य यही है कि अपने काम की शुरुआत हमेशा संभव और वास्तविक लक्ष्यों से की जाए। वहीं, असफलता का सबसे बड़ा कारण यह होता है कि अपनी शक्ति और ऊर्जा असम्भव लक्ष्यों की ओर खर्च कर दी जाए। इंसानों की सफलता और विफलता का पूरा इतिहास इन्ही दो सिद्धांतों की व्याख्या करता है।

दूसरे शब्दों में कहें तो, हिंसात्मक और उग्र कार्यशैली इंसान को विनाश की ओर ले जाती है, जबकि शांतिपूर्ण और संयमित कार्यविधि सफलता की राह दिखाती है। हिंसात्मक व्यवहार अक्सर अधैर्य का परिणाम होता है।

इसके विपरीत, वे लोग जो विवादों में धैर्य और सहनशीलता दिखाते हैं, वे शांति की शक्ति को अपनाते हैं। शांति की ताकत सबसे बड़ी ताकत होती है, और धैर्य इंसान को इस ताकत को प्रभावी ढंग से इस्तेमाल करने के लिए सक्षम बनाता है।

अधिकांश लोगों का हाल यह होता है कि वे क्या होना चाहिए और क्या हो सकता है के बीच अन्तर नहीं कर पाते। वे अपनी सूझ-बूझ में निपुण न होने की वजह से अपनी इच्छाओं के पीछे दौड़ पड़ते हैं, और समझते हैं कि वे मंज़िल की तरफ अपना सफ़र तय कर रहे हैं। यहाँ तक कि आख़िर में उन्हें मालूम होता है कि उन्होंने केवल समय बर्बाद किया। अपने समय और अपनी ताकत को अन्तिम सीमा तक इस्तेमाल करने के बावजूद वे कुछ भी हासिल न कर सके।

इंसान जन्मजात आदर्शवादी होता है। हर आदमी के मस्तिष्क में एक आदर्श दुनिया की कल्पना बसी हुई है, मगर दूसरी बड़ी सचाई यह है कि इस परीक्षा-स्थल में किसी व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं कि वह अपनी आदर्श दुनिया को हासिल कर सके। व्यावहारिक रूप से जो चीज़ सम्भव है वह केवल यह है कि आदमी अपने पसन्दीदा स्तर से कम को लेने पर राज़ी हो जाए। वह क्या होना चाहिए को छोड़कर, क्या हो सकता है, को अपना व्यावहारिक लक्ष्य बनाए।

आप जब कोई ऐसी चीज़ पाने की कोशिश करते हैं जो असम्भव है, तो आपके अंदर बेचैनी और आक्रामकता जन्म लेती है। लेकिन जब आप सिर्फ़ वही हासिल करने का प्रयास करते हैं जो संभव है, तो आपके मन में विश्वास जगेगा, आपकी कोशिश शांति के दायरे में शुरू होगी। पहली स्थिति में आपकी सोच पूरी तरह नकारात्मक हो जाती है, जबकि दूसरी स्थिति में आपकी सोच सकारात्मक बनती है। इसी सकारात्मक सोच से आपके भीतर उच्च मानवीय गुण विकसित होने लगते हैं।

बेवजह टकराव

पश्चिमी एशिया के मामलों के माहिर समझे जाने वाले मिस्टर ऐलबर्ट होरानी (Albert Hourani) की एक मशहूर किताब है जिसका नाम है—*अरबों का इतिहास* (A History of the Arab Peoples)। इस किताब में वे लिखते हैं कि अरब देशों के लिए सबसे उपयुक्त राजनीतिक नीति धर्मनिरपेक्षता है। उनके शब्दों में:

> ‘राजनीतिक जीवन से धर्म का अलग होना, आधुनिक दुनिया में एक सफल राष्ट्रीय जीवन की शर्त लगता है।’
>
> (The separation of religion from political life seemed to be a condition of successful national life in the modern world.)

आज के दौर में प्रगतिशील सोच रखने वाले लोग यह मानते हैं कि धर्म को सिर्फ निजी जीवन तक सीमित रहना चाहिए। उनके अनुसार, धर्म और राजनीति को अलग रखना एक शांतिपूर्ण समाज के निर्माण के लिए ज़रूरी शर्त है। इसके जवाब में आज के इस्लामपसन्द लोग कड़ी प्रतिक्रिया देते हैं। उनका कहना है कि धर्म और राजनीति दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं और उन्हें अलग नहीं किया जा सकता।

यह अनावश्यक बहस दो प्रकार की द्विवैकल्पिक सोच (Dichotomous Thinking) की वजह से पैदा होती है। ये लोग केवल दो बातों के बीच सोच पाते हैं। धर्म राजनीति सहित या धर्म बिना राजनीति। इसीलिए वे एक-दूसरे को अपना विरोधी समझ कर उनसे लड़ने लगते हैं। यद्यपि यहाँ एक तीसरा दृष्टिकोण भी है और वह क्रम से सम्बन्ध रखता है। अर्थात् वर्तमान व्यवस्था व्यावहारिक रूप से धर्म को जिस दायरे में काम

का मौका दे रही हो उस दायरे को बिला बहस कुबूल कर लेना और उसको शुरुआती अमल समझ कर अपना काम वैचारिक अन्दाज़ में शुरू कर देना।

इस झगड़े का आसान हल यह है कि जिस बात को धर्मनिरपेक्ष वर्ग सिद्धांत के स्तर पर विभाजन के रूप में देखता है, उसे इस्लामी वर्ग एक व्यावहारिक विभाजन के रूप में स्वीकार कर ले। इस व्यावहारिक व्यवस्था के बावजूद इस्लामी वर्ग अपनी शिक्षाओं का शांतिपूर्ण तरीके से प्रचार करते रहने के लिए पूरी तरह आज़ाद है, और आज के दौर में उसे यह आज़ादी पूरी तरह हासिल भी है। ऐसी स्थिति में परेशान होने की कोई ज़रुरत नहीं?

लक्ष्य एक हो

एक जापानी कहावत का अंग्रेज़ी में अनुवाद इस तरह किया गया है—

"Chase one rabbit, and you will get it"

सिर्फ एक खरगोश का पीछा करो, और देखो,
तुम उसे पकड़ लोगे।

अगर आप एक ही समय में दो खरगोश पकड़ने की कोशिश करेंगे तो क्या होगा? एक खरगोश पूरब की ओर दौड़ेगा और दूसरा पश्चिम की ओर। आप कभी पूरब की तरफ़ भागेंगे, कभी पश्चिम की तरफ़— और नतीजा यह होगा कि दोनों ही आपकी पकड़ से बाहर हो जाएँगे।

इसके उलट, अगर आप सिर्फ एक खरगोश की तरफ़ दौड़ लगाएँ, तो आपकी सारी ताकत उसी एक दिशा में केंद्रित होगी। तब उसके पकड़े जाने की पूरी संभावना बन जाएगी।

यह मामला केवल 'ख़रगोश' का नहीं, बल्कि यही मामला तमाम चीज़ों का है। जीवन में प्रायः ऐसा होता है कि आदमी को प्रत्यक्ष में कई

चीजें दिखाई देती हैं। वह हर एक को चाहने लगता है। मगर कई को पाने की कोशिश में वह एक को भी खो देता है। यद्यपि, यदि वह अपना सारा ध्यान केवल एक पर लगाता तो निश्चय ही उसको हासिल कर लेता।

इसकी एक मिसाल कश्मीर की समस्या है। इण्डिया और पाकिस्तान का बँटवारा आबादी की बुनियाद पर हुआ। इस हिसाब से कश्मीर को पाकिस्तान का हिस्सा होना चाहिए था, क्योंकि कश्मीर में मुसलमानों की संख्या अधिक थी। इसके बावजूद क्या वजह है कि कश्मीर पाकिस्तान को न मिल सका? इसकी एकमात्र ज़िम्मेदारी पाकिस्तान के लीडरों पर जाती है।

जब भारत और पाकिस्तान का 1947 में बंटवारा हुआ, तो पाकिस्तानी नेताओं ने हैदराबाद और कश्मीर—दोनों पर कब्जा करने की कोशिश की। हैदराबाद पर इसलिए नज़र थी क्योंकि वहाँ का शासक मुसलमान था, और कश्मीर पर इसलिए क्योंकि वहाँ की आबादी बहुसंख्यक मुसलमानों पर आधारित थी।

हैदराबाद के मामले में उन्होंने शासक की सत्ता को आधार बनाया, जबकि कश्मीर के मसले पर जनसंख्या के आधार का तर्क अपनाया। यानी, वे दो अलग-अलग तर्कों से दो अलग-अलग लक्ष्यों को एक साथ पाना चाहते थे— मानो एक साथ दो खरगोशों का पीछा करना।

लेकिन जो लोग एक समय में दो खरगोशों के पीछे दौड़ते हैं, उनके हिस्से में अक्सर यही आता है कि वे एक भी नहीं पकड़ पाते।

उत्साह: असली पूंजी

अगर सब कुछ खोने के बाद भी आपके अंदर उत्साह बना हुआ है, तो समझ जाइए कि आपने अभी कुछ भी खोया नहीं है। उत्साह निस्संदेह सबसे कीमती चीज़ है—दरअसल, उत्साह ही जीवन का सब कुछ है।

इंसान की असली पूंजी उसका उत्साह होता है। इसी उत्साह की नींव पर वह बड़े-बड़े सपने देखता है। उत्साह के बल से वह कार्य करता है, जोखिम उठाता है, और मुश्किलों पर विजय पाता है। यही उत्साह उसे जीवन के उतार-चढ़ाव में स्थिर और मजबूत बनाता है।

उत्साह ही इंसान के अंदर उच्चतम आचरण को जन्म देता है, जो सभी प्रगति और सफलता का सबसे बड़ा आधार है।

साहसी इंसान वह है जो ओछी बातों से ऊपर उठकर सोच सके। जो माहौल से प्रभावित न होकर अपनी राय बनाए। ख़तरे जिसका रास्ता न रोक सकें और हानियाँ जिसका दिल न तोड़ सकें, जो अपने-आप में जीने की ताकत रखता हो, चाहे तमाम लोग उसका साथ छोड़ दें, चाहे साधन नाम की कोई चीज़ उसके पास बाक़ी न रहे।

साहस न होना सबसे बड़ी कमज़ोरी है और उत्साह सबसे बड़ी ताकत। आदमी अगर साहसविहीन हो जाए तो 99 चीज़ रखते हुए भी वह एक चीज़ खोने पर अपने को नष्ट कर लेगा। और यदि वह अपने उत्साह को बाक़ी रख सके तो 99 चीजें खोकर एक चीज़ के बल पर दोबारा उठकर खड़ा हो जाएगा।

बेसाहस व्यक्ति मुर्दा व्यक्ति जैसा है, जबकि साहसी व्यक्ति सचमुच ज़िंदा होता है। जो काम बेसाहस इंसान के लिए मुश्किल बन जाता है, वही साहसी इंसान के लिए सफलता की सीढ़ी साबित होता है। जहाँ बेसाहस व्यक्ति एक बहाने की वजह से रुक जाता है, वहाँ साहसी व्यक्ति नए रास्ते खोजकर आगे बढ़ जाता है।

बेसाहस की दृष्टि घटनाओं के अंधेरे पहलू पर टिकती है, लेकिन साहसी की नजर उन पहलुओं पर होती है जिनमें उजाला और उम्मीद होती है।

उन्नति का इतिहास दरअसल साहसी लोगों के प्रयासों और कार्यों का ही परिणाम है।

जो दोगे वही मिलेगा

बाज़ार में हर चीज़ एक तय कीमत पर मिलती है—जितना दो, उतना पाओ। यही उसूल सिर्फ़ बाज़ार तक सीमित नहीं, बल्कि पूरे मानव जीवन पर भी लागू होता है। किसी ने ठीक ही कहा है:

> "Give the world the best you have, and the best will come back to you"
>
> दुनिया को जो सबसे अच्छा आपके पास है, वह दो, और तुम्हारी तरफ़ भी दुनिया का बेहतरीन वापस आएगा

अगर आप दूसरों के भले की सोचेंगे, तो लोग भी आपके भले की सोचेंगे। अगर आप दूसरों से मधुरता से बात करेंगे, तो वही मिठास आपको भी सुनने को मिलेगी। और अगर आप लोगों से मुहब्बत से पेश आएँगे, तो वही मुहब्बत लोग भी आपको लौटाएँगे।

यह दुनिया लेन-देन की दुनिया है। यहाँ आदमी वही पाता है जो उसने दूसरों को दिया हो। यहाँ दूसरे लोग किसी आदमी के लिए वही कुछ साबित होते हैं जो कि वह स्वयं दूसरों के लिए साबित हुआ हो।

इसका मतलब यह है कि इस दुनिया में जीवन गुज़ारने के लिए अच्छा वातावरण पाना आदमी के अपने बस में है। आप दूसरों के दोस्त बन जाइए, उसके बाद आपको भी दोस्तों से भरा हुआ वातावरण मिल जाएगा। आप दूसरों की अप्रिय बातों को सहन कीजिए, उसके बाद आप भी अपने आस-पास ऐसे पड़ोसी पा लेंगे जो आपकी अप्रिय बातों को सहन करें। आप दूसरों

को फ़ायदा पहुँचाइए, उसके बाद आपको भी जीवन गुज़ारने के लिए ऐसी दुनिया मिल जाएगी जहाँ हर एक आपको फ़ायदा पहुँचाने में व्यस्त होगा।

यदि आप खुद को फूल की तरह नर्म और सुखद बना लें, तो ज़िंदगी आपको अपने लिए फूलों की क्यारी खुद ही सौंप देगी। लेकिन अगर आपके अस्तित्व से काँटे जुड़ जाएँ—अर्थात आपके भीतर सख़्ती, कड़वाहट या चुभन हो—तो फिर आपको जो दुनिया मिलेगी, वह भी काँटों से भरी झाड़ी जैसी होगी।

मुश्किल के साथ आसानी

पैग़म्बरों के दृष्टिकोण का एक खास पहलू यह है कि वह 'नहीं' को भी 'है' की तरह देखते हैं। इसकी वजह यह है कि ख़ुदा ने इस दुनिया को ऐसे बनाया है कि यहाँ कोई चीज़ हमेशा के लिए मुश्किल नहीं होती, बल्कि हर मुश्किल के साथ आसानी भी मौजूद होती है। ज़िंदगी की यही सच्चाई क़ुरआन में इन शब्दों में बताई गई है:

'बेशक मुश्किल के साथ आसानी है। (6) बेशक मुश्किल के साथ आसानी है।' (सूरह अल-इंशिराह)

इब्ने इसहाक बताते हैं कि 8 हिजरी में मक्का से तायफ़ जाते वक्त पैग़म्बर इस्लाम एक ऐसे पहाड़ी रास्ते से गुज़रे जो बहुत तंग और कठिन था। आपने पूछा कि इस रास्ते का नाम क्या है? लोगों ने बताया कि इसका नाम 'मुश्किल' है। आपने कहा, नहीं। बल्कि इसका नाम 'आसान' है।

यह घटना पैग़म्बर के सोचने के तरीके को बताती है। पैग़म्बर दुनिया की हर चीज़ को ख़ुदा की नज़र से देखता है। यही वजह है कि उसको मुश्किल भी आसानी के रूप में दिखाई देती है। क्योंकि ख़ुदा ने अपनी

दुनिया को इसी कानून के अन्तर्गत बनाया है कि यहाँ हर मुश्किल के साथ आसानी भी हमेशा मौजूद रहे।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के जीवन का अध्ययन बताता है कि आपको अपने देश में कठिनाइयों से सामना करना पड़ा। इसके बावजूद आपने दुनिया की सबसे बड़ी कामयाबी हासिल की। यह एक ऐसी जीती-जागती घटना है जिससे इन्कार असम्भव है।

क़ुरआन में बताया गया है कि रसूल के जीवन में तुम्हारे लिए दृष्टान्त है (अल- अजाब)। यह दृष्टान्त किसी सीमित अर्थ में नहीं है। बल्कि यह जीवन के हर व्यवहार के बारे में है। आपने जिस तरह नमाज़ और हज का तरीका बताया उसी तरह आपने अपने अमल से यह भी बताया कि समस्याओं का मुकाबला किस तरह किया जाए और मुश्किल को आसान किस तरह बनाया जाए !

पैग़म्बर सल्ल. ने अपने व्यवहार से दुनिया में इस सम्भावना की सबसे बड़ी मिसाल पेश की है। आपने सबसे मुश्किल हालात में सबसे बड़ी सफलता पाई। यहाँ तक कि आपने अपने दुश्मनों को भी अपना साथी बना लिया। जो लोग आपके खिलाफ थे, आपने उन्हें भी अपने साथ जोड़ लिया। आपके समय में आपको बहुत कठिन हालात का सामना करना पड़ा, लेकिन आपने अपनी समझदारी से उन हालात को पूरी तरह अपने अनुकूल बना लिया।

समझदारी

कोई व्यापारी ऐसा नहीं करता कि वह बस अपना व्यापार शुरू कर दे और यह मान ले कि अब दूसरों की जिम्मेदारी है कि वे खुद आएँ और उसकी

दुकान से अपनी पसंद का सामान खरीद लें। बल्कि इसके बाद वह एक और ज़रूरी काम करता है, जिसे व्यापार को आगे बढ़ाना कहा जाता है। वह अपने व्यापार की तरक्की के लिए कई तरह की कोशिशें करता है।

इन्हीं कोशिशों में से एक तरीका है कि वो सामान की कीमत कम करके बेचता है। जैसे कोई व्यक्ति एक पाक्षिक पत्रिका निकालता है। उसकी असली कीमत प्रति कॉपी दस रुपये होती है। लेकिन वह कुछ समय के लिए इसकी कीमत घटाकर सिर्फ़ दो रुपये कर देता है। इस कम कीमत को आम तौर पर आमन्त्रण मूल्य (Invitation Price) कहा जाता है। इसी तरह जब कोई व्यक्ति बाज़ार में नई दुकान खोलता है, तो शुरू में कुछ दिनों तक वह ऐसा करता है कि सौ रुपये का सामान सिर्फ़ 75 रुपये में देता है। इसे आरम्भिक छूट (Inaugural Discount) कहा जाता है।

यह तरीक़ा केवल व्यापार के लिए नहीं है। इसका सम्बन्ध तमाम सामूहिक मामलों से है। जब भी आप किसी से सम्बन्ध बढ़ाना चाहें, किसी हलके में दाख़िल होना चाहें, किसी को अपनी तरफ़ करना चाहें तो आप को यही तरीका अपनाना होगा। दूसरों को छूट देकर ही इस दुनिया में दूसरों के बीच स्थान हासिल होता है।

हिन्दुस्तान में कुछ ऐतिहासिक या गैर - ऐतिहासिक कारणों से हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच सम्बन्ध ख़राब हो गए हैं। इस ख़राबी की सबसे ज्यादा हानि मुसलमानों को भुगतनी पड़ रही है। अब दोनों समुदायों के बीच सम्बन्ध को सन्तुलित बनाने की अमली सूरत केवल एक है। वह यह कि मुसलमान इस मामले में आगे बढ़कर वही विधि अपनाएँ जिसको उपरोक्त मिसाल में लुभाने वाली क़ीमत या आरम्भिक छूट कहा गया है।

ऐसा करना कोई दबने या झुकने का संकेत नहीं है, बल्कि यह समझदारी की बात है। निजी मामलों में हर इंसान इसी समझदारी को अपनाता है। ज़रूरत इस बात की है कि यही तरीका सामाजिक मामलों

में भी अपनाया जाए। इसके अलावा कोई और तरीका मौजूदा हालात को खत्म नहीं कर सकता।

हार मान लेना

हार मान लेना यह संकल्प जाहिर करता है कि इंसान फिर से मेहनत करके अपनी खोई हुई बाज़ी जीतना चाहता है। हार के बाद हार स्वीकार करना ही फिर से जीत की ओर बढ़ने का पहला कदम होता है।

अगर आप हार के बाद अपनी हार को स्वीकार नहीं करते, तो आप वहीं अटके रहेंगे जहाँ आपने हार का सामना किया था। ऐसे में आप नए सफर की शुरुआत करने के काबिल नहीं बन पाएंगे। लेकिन जब आप हार स्वीकार कर लेते हैं, तो आपका सफर तुरंत फिर से शुरू हो जाता है।

हार मान लेना इस बात का संकेत है कि मैं प्रतिस्पर्धा में पिछड़ गया हूँ। लेकिन हार न मानना मानो यह जताना है कि मैं अब भी दौड़ में सबसे आगे हूँ। ऐसे में यदि कोई व्यक्ति वास्तविकता में पीछे हो, लेकिन खुद को आगे मानने का दिखावा करे, तो वह एक झूठी गलतफहमी में जी रहा है। और जो लोग ऐसी भ्रांतियों में उलझे रहते हैं, वे कभी भी इस संसाधन-संचालित दुनिया में सफलता हासिल नहीं कर पाते।

हारने के बाद हार को स्वीकारना बहादुरी है। हारने के बाद हार को न स्वीकारना बुज़दिली। आदमी को चाहिए कि वह हमेशा अपने-आप को बहादुर साबित करे। वह अपने-आप को बुज़दिली की सतह पर जाने न दे।

इस दुनिया में कभी हार होती है और कभी जीत। श्रेष्ठ इंसान वह है जो हार- जीत से ऊपर उठकर सोचे, जो हार-जीत से असर लिए बिना अपनी राय कायम करे। जो लोग इस उच्च योग्यता का सुबूत दें, वही इस दुनिया में अपने उद्देश्य तक पहुँचते हैं। जो लोग इसका सुबूत न दे सकें, वे जीवन

के तूफ़ान में घिर कर रह जाते हैं। वे अपनी अपेक्षित मंज़िल तक पहुँचने में कामयाब नहीं होते।

जो व्यक्ति अपनी हार स्वीकार करता है, उसने मानो हार में भी जीत का राज़ जान लिया है। क्योंकि वह बाहरी दुनिया में भले ही आंशिक रूप से हार गया हो, लेकिन अपने अंदर की सच्ची दुनिया में हमेशा विजेता बना रहता है। उसने अपनी हार को अपने ज़ेहन की हार बनने नहीं दिया।

वहीं, जो व्यक्ति हार को स्वीकार नहीं करता, उसने इसे अपने लिए प्रतिष्ठा का मसला बना लिया है। और जब कोई व्यक्ति हर बात को प्रतिष्ठा का मसला बना लेता है, तो वह बार-बार गलतियाँ करता रहेगा। ऐसे में वह लगातार हारता रहेगा और उसके लिए फिर से जीतने का कोई मौका नहीं होगा।

प्रतिक्रिया नहीं

धैर्य क्या है? धैर्य का मतलब है कि जब कोई परिस्थिति भावनात्मक या उत्तेजना से भरी हो, तब इंसान अपने आप को संभाले रखे। प्रतिक्रिया देने से पहले अपने जज़्बातों पर नियंत्रण रखे और सोच-विचार करे कि इस समय मेरे लिए सबसे सही रास्ता कौन-सा है और कौन-सी कार्रवाई सबसे अधिक असरदार हो सकती है।

कभी धैर्य का अर्थ होता है कि हम अपनी भावना को रोक लें, कभी इसका मतलब होता है कि हम खुद को तत्काल प्रतिक्रिया देने से रोकें, और कभी यह कि हम कार्रवाई ज़रूर करें, लेकिन वह सोच-समझकर और योजना के तहत हो—सिर्फ भावना में बहकर नहीं।

अब सवाल यह उठ सकता है कि अगर कोई विरोधी नुकसान पहुँचा दे, तो क्या हमें चुप रहना चाहिए या उसका जवाब देना चाहिए?

जवाब यह है कि धैर्य का मतलब बेकार में हानि उठाना नहीं है। धैर्य का मतलब यह है कि अनुचित स्थिति पेश आने के बाद ठण्डे मन से आप यह सोचें कि आपका जवाबी क़दम आपके सत्य में कोई सकारात्मक नतीजा पैदा करेगा या आपकी हानि को और बढ़ाने का कारण बन जाएगा? धैर्य का मतलब अपने-आप को और अधिक हानि से बचाना है, न कि अनावश्यक रूप से अपने-आप को विनाश में डालना।

धैर्य कभी कर्म का नाम होता है और कभी अपने आप को कर्म से रोक लेने का। यह असल में हालात हैं जो फ़ैसला करते हैं कि किस अवसर पर कौन - सा धैर्य वांछित है।

धैर्य और अधैर्य में यही फर्क होता है कि अधीर व्यक्ति बिना नतीजों पर सोचे-समझे हालात की लहर में बह जाता है, जबकि धैर्यवान व्यक्ति पहले गहराई से सोचता है, सलाह लेता है, और फिर ऐसा कदम उठाता है जो सबसे बेहतर परिणाम ला सके।

धैर्य का मतलब है सूझ-बूझ और विवेक से काम लेना, जबकि अधैर्य वह स्थिति है जिसमें इंसान अस्थायी भावनाओं के असर में आकर ऐसा काम कर बैठता है जिसका समझदारी से कोई वास्ता नहीं होता।

कामयाबी के दस सूत्र

एक सफल अमेरिकी व्यापारी द्वारा लिखी गई एक किताब मेरी नज़र से गुजरी जो अमेरिका में प्रकाशित हुई है। इस किताब को उसने अपने बीस वर्षों के व्यावसायिक अनुभवों के आधार पर तैयार किया है। इस सुंदर पुस्तक के हर पृष्ठ पर दो व्यापारिक सिद्धांत बड़े अक्षरों में लिखे गए हैं। लेखक का मानना है कि टॉप परफॉर्मेंस हमेशा सकारात्मक आदतों (Positive Habits) के माध्यम से ही हासिल की गई है। यह किताब है:

The Book of Excellence by Byrd Baggett,

236 habits of effective salespeople

लेखक ने इन सकारात्मक आदतों को 236 छोटे-छोटे वाक्यों में समेटा है। मैंने किताब पढ़कर उनमें से दस वाक्य चुने हैं, जो निम्नलिखित हैं:

- A bad attitude cancels all other positive skills.
- Be as critical of yourself as you are of others.
- You are not learning anything when you are talking.
- Excellence is not optional.
- Take an active, not passive, role in helping your community.
- Customers love humility.
- Patience is a virtue. Don't give up.
- There is no replacement for effort.
- Success does not come easily. Are you willing to pay the price?
- Stop, listen, and think before you respond.

अर्थात्:

- एक बुरा रवैया सभी अन्य सकारात्मक गुणों को खत्म कर देता है।
- अपने बारे में उतने ही आलोचनात्मक बनो जितने तुम दूसरों के लिए हो।
- जब तुम बोल रहे होते हो, तब तुम कुछ नहीं सीख रहे होते।
- उत्कृष्टता कोई विकल्प नहीं है।

- अपने समुदाय की मदद करने में सक्रिय भूमिका निभाओ, निष्क्रिय मत रहो।
- ग्राहक हमेशा विनम्रता को पसंद करते हैं।
- धैर्य एक महत्वपूर्ण सद्गुण है, कभी हार मत मानो।
- मेहनत का कोई विकल्प नहीं है।
- सफलता आसानी से नहीं मिलती, क्या तुम उसके लिए कीमत चुकाने को तैयार हो?
- जवाब देने से पहले रुककर सुनो और सोचो।

ये कथन उन स्वाभाविक उपायों को बयान करते हैं जिनको अपनाकर कोई व्यक्ति दुनिया में अपनी कामयाबी को विश्वसनीय बना सकता है। ये कथन कामयाबी की कुंजी हैं।

मूर्खता और बुद्धिमानी

नासमझ ने कहा कि मैंने अपना अतीत और अपना वर्तमान बर्बाद कर दिया है। समझदार ने जवाब दिया, लेकिन तुम्हारा भविष्य तो अब भी बरबाद नहीं हुआ है। इंसान की ज़िंदगी सिर्फ़ अतीत और वर्तमान पर ही खत्म नहीं हो जाती। उसकी लंबी ज़िंदगी में भविष्य भी ज़रूरी तौर पर शामिल होता है। फिर कोई इंसान अतीत और वर्तमान के चले जाने का दुख क्यों करे, जबकि भविष्य तो अब भी पूरी तरह उसके पास मौजूद है।

इंसान अपने बीते हुए दिन खो सकता है। लेकिन उसके आने वाले दिन तो अभी भी उसके पास हैं। अगर इंसान अपनी सोचने-समझने की ताकत को बीते हुए दिनों की कड़वी यादों में ना लगाए, बल्कि उसी ताकत को आने वाले दिनों में लगाने लगे, तो मुमकिन है कि उसने पहले जो कुछ खोया है, उसे वह आगे चलकर और ज़्यादा बढ़कर प्राप्त हो जाए।

अतीत आपके हाथ से निकल चुका। वर्तमान भी आपका साथ छोड़ रहा है। अब जो चीज़ आपके पास बाक़ी है वह केवल आपका भविष्य है। आप बीते हुए दिन या जाने वाले क्षणों का दुख क्यों करें ! आने वाले दिन, जो अब भी पूरी तरह आपके क़ब्जे में हैं, उन पर अपना सारा ध्यान लगा दीजिए। यही सम्भव भी है और यही अक्ल का तकाज़ा भी।

नादान की नज़र हमेशा पीछे की तरफ़ होती है और अक्लमन्द की नज़र सदैव आगे की तरफ़। नादान आदमी केवल उसको जानता है जो हो चुका। अक्लमन्द उसको भी जानता है जो हो सकता है। आप नादान न बनिए, आप कोशिश कीजिए कि आप का नाम अक्लमन्दों की सूची में लिखा जाए।

अगर एक मनुष्य के पास समझदार बनने का मौका भी हो और इसी के साथ नासमझ बनने का भी, तो वह नासमझ क्यों बने, क्यों न वह समझदार बनने की कोशिश करे! वह अंधेरे में क्यों भटके, जबकि उसके लिए रौशनी के दरवाज़े भी खुले हुए हैं।

ज़िंदगी एक लगातार चलने वाला सफर है, जो अतीत से वर्तमान और वर्तमान से भविष्य की ओर बढ़ता रहता है। जो इंसान अतीत और वर्तमान में ही उलझा रह जाए, वह ऐसा है जैसे ज़िंदगी की सच्चाई को मानने से इंकार कर रहा हो। और जो सच्चाई को नहीं मानता, वह असल में खुद को ही नहीं मानता, क्योंकि सच्चाई को वह किसी भी हालत में बदल नहीं सकता।

अग्रिम सावधानी

प्रकृति का एक अहम सिद्धांत है—अग्रिम सावधानी। इसी सिद्धांत के अंतर्गत जीवन के अनेक क्षेत्रों में एहतियाती कदम (precautionary measures)

उठाए जाते हैं। अक्सर ऐसा होता है कि यदि पहले से सतर्कता बरती जाए, तो बहुत-सी परेशानियाँ और संकट घटित ही नहीं होते।

मिसाल के रूप में हरनिया एक बीमारी है। जिस आदमी को यह बीमारी हो जाए उसको ऑपरेशन थिएटर में जाना ज़रूरी हो जाता है। मगर इस बीमारी की अग्रिम युक्ति लगभग विश्वसनीय रूप से उसको बढ़ने से रोक देती है। यह अग्रिम युक्ति लंगोट का इस्तेमाल है। हरनिया कभी अचानक नहीं होता। इसके आरम्भिक लक्षण बहुत पहले से स्पष्ट होना शुरू हो जाते हैं। अगर आदमी ऐसा करे कि आरम्भिक लक्षण स्पष्ट होते ही वह लंगोट पहनना शुरू कर दे तो वह इस बीमारी का शिकार होने से बच जाएगा।

मौजूदा ज़माने में खिलाड़ियों के इस्तेमाल के लिए बहुत अच्छी तरह के अण्डरवियर बनाए गए हैं। इनको एथलेटिक सपोर्टर (Athletic supporter) कहा जाता है। यह एथलेटिक सपोर्टर मानो अत्यन्त प्रभावी प्रकार की अग्रिम युक्ति है जो हरनिया की बीमारी से बचाव की लगभग विश्वसनीय ज़मानत है।

ठीक इसी प्रकार, सामूहिक झगड़ों की रोकथाम के लिए भी अग्रिम उपाय मौजूद हैं, जो अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध होते हैं। जैसे—आपसी ग़लतफ़हमियों को समय रहते दूर करना, फैलती अफ़वाहों का तत्काल खंडन करना, हर मोहल्ले या बस्ती में शांति समिति का गठन करना, मतभेद की स्थिति में टकराव का रास्ता छोड़कर संवाद का तरीका अपनाना, दूसरों को दुश्मन नहीं बल्कि इंसान समझना और उनके साथ भाईचारे का व्यवहार करना। यदि कोई विवाद व्यवहार में उत्पन्न हो भी जाए, तो उसे ‘लो और दो’ की नीति से शांतिपूर्ण ढंग से सुलझाना, और टकराव के बजाय सौहार्द का रास्ता चुनना—यही वे उपाय हैं जो समाज में स्थायी शांति की नींव रखते हैं।

मौजूदा दुनिया के बनाने वाले ने हर मामले में अग्रिम बचाव के तरीके भी बना कर रख दिए हैं। आदमी को चाहिए कि वह इन तरीकों को मालूम करे और उनको इस्तेमाल करके अपने-आप को बीमारियों का शिकार होने से बचा ले।

अष्टक का क़ानून

आप एक चौकोर कागज लें और उसे मोड़ना शुरू करें, तो आप केवल आठ बार ही उसे मोड़ पाएंगे। नौवां या दसवां मोड़ आपके लिए बेहद मुश्किल हो जाएगा। यह नियम हर काग़ज़ के लिए सही है, चाहे आपका कागज पोस्टकार्ड जितना छोटा हो, दैनिक समाचार पत्र जितना बड़ा हो, या कोई बहुत बड़ा पोस्टर, हर स्थिति में मोड़ आठ बार तक ही संभव होता है।

इसे 'क़ानून-अष्टक' यानी 'आठ का नियम' कहा जाता है। यह प्रकृति द्वारा स्थापित एक अटल नियम है, जिसमें कोई बदलाव संभव नहीं। इसी तरह जीवन के हर क्षेत्र में ऐसे सीमित करने वाले नियम होते हैं जो किसी भी गतिविधि को एक निश्चित हद तक सीमित कर देते हैं। यह हद इतनी सख्त होती है कि सबसे ताकतवर व्यक्ति के लिए भी उसे तोड़ पाना असंभव होता है।

उदाहरण के तौर पर, इस दुनिया में एटम बम केवल एक बार गिराया जा सकता है; बार-बार गिराना मुमकिन नहीं। कोई व्यक्ति बर्बर शब्द बोलने के लिए स्वतंत्र हो सकता है, लेकिन अपने उन शब्दों को लागू करना और उनका असर पूरे समाज पर डालना संभव नहीं। कोई व्यक्ति नकारात्मक नारे लगाकर सत्ता तक पहुंच सकता है, लेकिन ऐसी कोई सत्ता नहीं होती जिससे वह अपने नारों को इतिहास की मिसाल बना सके।

प्रकृति का यह अटल कानून इस दुनिया में हर इंसान के लिए शान्ति और सुरक्षा की सबसे बड़ी ज़मानत है। जब तक यह दुनिया मौजूद है, उसका यह कानून भी निश्चित रूप से मौजूद रहेगा। प्रकृति का यह क़ानून केवल उस समय ख़त्म होगा जबकि स्वयं यह दुनिया ही ख़त्म हो जाए और कोई ऐसा व्यक्ति यहाँ बाकी ही न रहे जो बर्बरतापूर्ण शब्द बोल कर लोगों को डराए या बुराई की योजना बनाकर लोगों के अन्दर असुरक्षा की भावना पैदा करे।

कुदरत का यह अपरिवर्तनीय नियम अपनी शांत आवाज़ में हमसे कहता है—''हे लोगो, अपने ही किए हुए ज़ुल्म से खुद को बचाओ, क्योंकि तुमसे बाहर इतना बड़ा कोई नहीं जो तुम्हें अपने ज़ुल्म और दंगों का शिकार बना सके।''

इसी 'क़ानून-अष्टक' को क़ुरआन में 'क़ानूने बचाव' (22:40) कहा गया है, यानी रोक लगाने वाला नियम, जो हर चीज़ को एक निश्चित सीमा तक रोके रखता है।

अध्याय पाँच

जीवन का प्रकाशमय मार्ग

हर इंसान के लिए ज़रूरी है कि उसके पास एक ऐसी किताब हो, जो उसे जीवन के अलग-अलग मौके पर सही और रचनात्मक दिशा दिखाए और दुनिया के रास्तों में खो जाने से बचाए।

जहाँ समस्या वहां हल

मुझे अपने जीवन की सबसे बड़ी सीख क़ुरआन से मिली है। इस्लाम के शुरुआती दौर में मुसलमान बहुत कम थे और उनके विरोधी उन्हें बहुत सताते थे। उस वक्त उनके मन में यह सवाल था कि इतनी कठिनाइयों के बीच हम कैसे रहें।

उस समय क़ुरआन में एक आयत आई जिसने उनका मार्गदर्शन किया। वह आयत है: "मुश्किल के साथ आसानी है।" इस आयत में यह नहीं कहा गया कि मुश्किल के बाद आसानी आएगी, बल्कि यह बताया गया है कि जहाँ मुश्किल होती है, वहीं उसी समय आसानी भी होती है।

इसका मतलब यह है कि इस दुनिया को बनाने वाले ने इसको इस तरह बनाया है कि यहाँ समस्या के साथ उसका हल भी मौजूद है। जहाँ समस्या या कठिनाई है वहीं ऐसे अवसर (Opportunities) भी मौजूद हैं जिनको इस्तेमाल करके आदमी आगे बढ़ सके। इस दुनिया में समस्या और हल, दो ऐसे जुड़वाँ भाई- बहन हैं जो कभी एक-दूसरे से अलग नहीं होते।

मैं अपनी ज़िन्दगी में कई बार हानि या नाकामी से दो-चार हुआ हूँ, मगर मैंने हर बार इसी उसूल को इस्तेमाल किया। फलतः जब भी मैंने विचार किया, तो मैंने पाया कि जहाँ समस्या पैदा हुई, वहीं उसका हल भी मौजूद था। जैसे यह कि जहाँ औसत दर्जे की मेहनत से काम न बन रहा हो वहाँ आदमी ज्यादा मेहनत करके अपना काम बना ले।

एक बार मैंने एक दृश्य देखा। लगभग सौ स्कूल के बच्चे स्कूल से बाहर निकल कर सड़क पर आ गए। वे फुटपाथ पर चलना चाहते थे, लेकिन तंग फुटपाथ पर वे भीड़ में नहीं चल सकते थे। अपने अध्यापक के निर्देश पर उन्होंने दो-दो की लंबी पंक्ति बना ली, जिससे वे आसानी से फुटपाथ से गुजर गए। वो पूरी सड़क पर फैल कर ट्रैफिक की परेशानी की वजह नहीं बने।

उन छात्रों के लिए दाईं और बाईं तरफ फैलने का कोई मौका नहीं था, इसलिए उन्होंने आगे-पीछे फैलकर अपना रास्ता बना लिया। इस दृश्य को देखकर मुझे समझ आया कि "मुश्किल में आसानी" का क्या मतलब है। यह एक ऐसा उदाहरण है जो इस बात को बड़े अच्छे तरीके से दर्शाता है। सड़क पर यह घटना जीवन के अन्य कई मामलों में भी मार्गदर्शन करती है।

मुश्किल में आसानी का यह मामला नैचर का एक अटल कानून है। इनको एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। नैचर का यह तरीका है कि जब भी कहीं एक समस्या पैदा होती है, तो वह स्वयं ही अपने-आप अपने हल की तरफ दौड़ पड़ती है। हर समस्या खुद एक ऑटोमैटिक मशीन की तरह मुश्किल के साथ आसानी लाती है।

जैसे एक व्यक्ति जब किन्हीं मुश्किल हालात से दो- -चार होता है तो प्रकृति की प्रक्रिया के तहत अपने-आप उसके दिमाग़ के न्यूट्रोन और अधिक प्रेरित हो जाते हैं। उसकी मानसिक दुनिया में एक नई जागरूकता आ जाती है। वह पहले से अधिक सोचने लगता है। इस तरह वह इस योग्य हो जाता है कि ज़्यादा बढ़ी हुई सोच और ज्यादा बढ़ी हुई ताकत से आई हुई मुश्किल को हल कर सके।

अगर आपके रास्ते में चट्टान आ जाए, तो उसके किनारे से अपना रास्ता खोजिए। जिस समस्या का समाधान टकराव से नहीं हो पा रहा, उसे धैर्य से समझने की कोशिश करें। जहाँ बात-चीत से कोई फायदा न हो, वहाँ ख़ामोशी अपनाइए।

जो काम शारीरिक ताकत से संभव न लगे, वहाँ बुद्धि और सूझ-बूझ की ताकत का इस्तेमाल करें। यही इस दुनिया में सफल जीवन के निर्माण का एकमात्र नियम है। इस दुनिया में सफल वही होता है जो इस नियम को समझकर अपने लिए अपनाता है, और असफल वही होता है जो प्रकृति के इस नियम को नहीं समझ पाता और अपने कार्य की सही योजना बनाने में असमर्थ रहता है।

चरित्र ही पहचान है

एक अठारह साल के मसीही (ईसाई) युवक ने, जो मुंबई में रहता था, आत्महत्या कर ली। उसका नाम ग्रीनवेल गोम्स (Greenwell Gomes) था। अखबार की खबर के मुताबिक, इस साल उसने एच.एस.सी. की परीक्षा पास की थी और अब वह बी. कॉम. में दाख़िला लेना चाहता था। लेकिन उसे बताया गया कि बिना पंद्रह हज़ार रुपये 'डोनेशन' दिए उसका दाख़िला नहीं हो सकता। यह बात गोम्स को गहरी ठेस पहुंचाने वाली लगी। परेशान होकर उसने आत्महत्या कर ली। (*दैनिक हिन्दुस्तान*, मुंबई, 7 जुलाई 1993)

वहीं दूसरी ओर इसी देश में एक और मिसाल देखने को मिलती है। एक आदमी को अपने बेटे के इलाज के लिए अच्छे अस्पताल में दाख़िला नहीं मिल पाया, सिर्फ इसलिए क्योंकि वह उस अस्पताल की फीस देने में असमर्थ था। तब उस व्यक्ति ने यह फैसला किया कि वह खुद एक ऐसा अस्पताल शुरू करेगा जो न सिर्फ अच्छा होगा बल्कि वहाँ कोई भी व्यक्ति सिर्फ इस वजह से इलाज से वंचित नहीं रहेगा कि वह फीस नहीं दे सकता। इस काम में उसने पूरी लगन के साथ मेहनत शुरू की और आखिरकार वह ऐसा अस्पताल बनाने में सफल हो गया। यह अस्पताल आज सफलतापूर्वक चल रहा है और हज़ारों लोग इससे इलाज की सुविधा पा चुके हैं।

इस तरह के निर्णायक अवसर हर व्यक्ति के जीवन में आते हैं। इस समय उसका मन जिस तरफ़ मुड़ जाए, बस उसी तरफ़ वह चलने लगता है। ऐसे अवसर पर ज़रूरत होती है कि आदमी को ऐसा कोई रचनात्मक मार्गदर्शक मिल जाए जो उसको नकारात्मक दिशा में मुड़ने से बचा सके। जो उसको वहाँ वैचारिक सहारा दे जहाँ उसका अपना ज़ेहन सोचने में असमर्थ साबित हो रहा है।

उपरोक्त नौजवान के लिए यह भी सम्भव था कि वह अपने जीवन में पेश आने वाली शैक्षिक घटना को रुकावट के बजाय चैलेंज समझता। वह पन्द्रह हज़ार रुपये का डोनेशन माँगने वालों से कहता कि अगर तुम समझते हो कि तुम मेरा रास्ता रोक सकते हो तो तुम बहुत बड़ी भूल के शिकार हो। तुम इंसान को अण्डर एस्टीमेट कर रहे हो। एक इंसान की ताकत इससे कहीं ज़्यादा होती है कि कोई उसके जीवन में बाधक बन सके; कोई उसको आगे बढ़ने से रोक दे।

इसके बाद वह नौजवान यह तय करता कि मैं एक ऐसा शैक्षिक संस्थान खोलूँगा जहाँ नौजवान छात्रों को डोनेशन या रिश्वत दिए बिना दाख़िला मिल सके। यदि वह इस प्रकार का फ़ैसला करके उसको अपने जीवन का मिशन बना लेता और उत्साह के साथ इस मुहिम में लग जाता, तो हो सकता था कि वह एक नया शानदार शैक्षिक संस्थान बनाने में कामयाब हो जाता जहाँ डोनेशन के बिना केवल मेरिट की बुनियाद पर दाखिला दिया जाता हो।

संसार में असफलता का सबसे बड़ा कारण हिम्मत की कमी है, और सफलता का सबसे बड़ा राज़ यह है कि इंसान बहादुर हो। ऊपर जिस नौजवान ने आत्महत्या की, उसका कारण यही था कि वह हिम्मत हार गया। अगर वह ऐसा न करता और नए शैक्षिक संस्थान की स्थापना को अपना लक्ष्य बना लेता, तो उसे यह एहसास होता कि इसी दुनिया में बहुत से लोग हैं जो उसका साथ देते, उसका समर्थन करते और हर तरह से मदद करते। पहले अनुभव में उसे यह लगा कि वह अकेला है, लेकिन अगर वह आगे बढ़ता तो दूसरे अनुभव में वह अकेला न होता। एक कवि ने बिल्कुल ठीक कहा है:

सफ़र है शर्त, मुसाफ़िर नवाज़ बहुतेरे
हज़ारहा शजर सायादार राह में हैं

यह शे’र दिल्ली में सबसे पहले मुझे एक व्यापारी ने सुनाया था। वह एक व्यापारिक ख़ानदान में पैदा हुआ, मगर कुछ कारणों से उसके साथ यह दुखद घटना पेश आयी कि वह बिल्कुल अकेला हो गया। उसके पास दिल्ली में न घर रहा और न कारोबार।

यह घटना उसके साथ नौजवानी की उम्र में पेश आयी। उसने हिम्मत नहीं हारी। वह मामूली सामान लेकर फुटपाथ पर बैठ गया। सुबह से शाम तक वह मेहनत करता। उसके बाद मुश्किल से कुछ रुपये कमाता, मगर हर प्रकार के ख़राब हालात के बावजूद उसने अपनी मेहनत जारी रखी। यहाँ तक कि उसको मददगार मिलने शुरू हो गए।

किसी ने उसे उधार पर सामान देना शुरू किया। किसी ने उसे एक दुकान दिलवाने में मदद की। किसी और ने उसे घर लेने में सहारा दिया। इस तरह वह धीरे-धीरे ज़िंदगी में आगे बढ़ता गया। आख़िरकार वह दिल्ली का एक सफल व्यापारी बन गया।

अगर कोई इंसान लगातार एक रास्ते पर डटा रहे, और साथ ही वो उसूल-पसनद और अच्छे चरित्र वाला भी हो, तो वह एक न एक दिन ज़रूर सफल होता है। तब कोई भी चीज़ उसे सफलता की मंजिल तक पहुँचने से नहीं रोक सकती।

डाँडी का सबक़

17वीं सदी ईस्वी की शुरुआत में सर थोमस रो (Sir Thomas Roe) लंदन से हिन्दुस्तान आया और यहाँ तीन साल (1615–1618) तक ठहरा। उसने मुग़ल शासक जहाँगीर से संपर्क स्थापित किया। कई और खूबियों के साथ उसकी एक विशेषता यह भी थी कि वह तुर्की भाषा जानता था, जिसकी वजह से वह जहाँगीर से सीधे बातचीत कर सकता था।

जब सर थोमस रो (1581–1644) हिन्दुस्तान आया, उस समय जहाँगीर अजमेर में था। थोमस रो वहीं पहुँचा और तीन साल तक वहीं रुका। जहाँगीर कभी-कभी उसे अपने दरबार में बुलाता और उससे सामान्य बातचीत करता रहता। थोमस रो ने यह महसूस किया कि जहाँगीर को चित्रकला में काफी रुचि है। एक दिन उसने जहाँगीर की सेवा में एक चित्र भेंट किया। जहाँगीर को वह तस्वीर बेहद पसन्द आई।

थोमस रो ने महसूस किया कि वह जिस समय की प्रतीक्षा कर रहा था वह समय अब उसके लिए आ गया है। उसने बादशाह से एक ऐसी चीज़ माँगी जो देखने में मामूली थी। यह चीज़ थी, हिन्दुस्तान के तटीय शहर सूरत में फैक्ट्री (व्यापारिक संस्थान) कायम करने की इज़ाज़त। बादशाह ने एक आदेश लिख दिया। जिसके अनुसार अँगरेज़ों (ईस्ट इण्डिया कम्पनी) को सूरत में अपना व्यापारिक संस्थान क़ायम करने की अनुमति मिल गई। हिन्दुस्तान के एक शहर में व्यापारिक संस्थान खोलने की अनुमति देखने में बहुत मामूली चीज़ थी, क्योंकि इसके बावजूद हिन्दुस्तान का विशाल देश मुगल बादशाह के ही कब्जे में था। महानता व शान और क़ुव्वत व ताकत की तमाम चीज़ों पर दूसरों का क़ब्जा वैसे ही बाक़ी था, मगर सूरत में व्यापारिक संस्थान क़ायम करना अँगरेज़ को वह सिरा पकड़ा रहा था जो अन्ततः उसको तमाम दूसरी चीज़ों पर कब्जा दिला दे। अतः अँगरेज़ों ने इस तुच्छ चीज़ को स्वीकार कर लिया और इसके बाद इतिहास ने बताया कि जो तुच्छ पर राज़ी हो जाए वह आख़िरकार श्रेष्ठ पर भी कब्जा हासिल करने में कामयाब होता है।

यह इतिहास की शिक्षा है, मगर बहुत कम लोग हैं जो इस इतिहास से शिक्षा हासिल करें।

इस दुनिया में असल महत्त्व इस बात का है कि आपको मामले का प्रारम्भिक सिरा मिल जाए। प्रारम्भिक सिरा जिसके हाथ में आ जाए वह आख़िरकार अन्तिम सिरे तक पहुँच कर रहेगा।

हिन्दुस्तान की आज़ादी का आन्दोलन 1799 में शुरू हुआ जबकि सुलतान टीपू अँगरेज़ों से जंग करते हुए मारे गए। उसके बाद अँगरेज़ों से लड़ना, अँगरेज़ों पर बम मारना, उन पर हमला करने के लिए विदेशी हुकूमतों को भड़काना, ऐसे हंगामे सौ साल से ज़्यादा अवधि तक जारी रहे।

इस तरह की गतिविधियाँ अपने आप में हिंसात्मक होती थीं, इसलिए जैसे ही इनका नाम लिया जाता, अंग्रेज़ तुरंत सतर्क हो जाते और पूरी ताक़त के साथ उन्हें दबा देते। इसके बाद जब गाँधी राजनीतिक मंच पर आए, तो हालात अचानक बदल गए। पहले जो लोग हिंसा के ज़रिए आज़ादी की माँग करते थे, गाँधी ने इसके उलट अहिंसा का रास्ता अपनाया। उन्होंने आज़ादी के आंदोलन को ऐसे उसूलों पर चलाने का ऐलान किया जो अंग्रेज़ों को अजीब लगते थे।

गाँधी के इसी तरीक़े का एक उदाहरण वह घटना है जिसे डाँडी मार्च कहा जाता है। गुजरात के समुद्री तट पर प्राचीन समय से नमक बनाया जाता था। अंग्रेज़ी सरकार ने वहाँ नमक के कारोबार को अपने नियंत्रण में ले लिया था। गाँधी ने इस क़ानून का शांतिपूर्वक विरोध करने का निर्णय लिया और साबरमती आश्रम से पैदल चल पड़े। उन्होंने 24 दिनों में 240 मील की दूरी तय की और डाँडी के तट पर पहुँचकर नमक का एक टुकड़ा उठाकर सरकारी क़ानून का उल्लंघन किया।

गाँधी ने जब अपनी योजना की घोषणा की तो अँगरेज़ पदाधिकारियों की एक मीटिंग हुई। इस अवसर पर एक अँगरेज़ अफ़सर ने अपनी राय देते हुए कहा था कि उनको अपना नमक बनाने दो। मिस्टर गाँधी को चुटकी भर

नमक से बहुत ज़्यादा बड़ी चीज़ दरकार होगी जिससे वे बरतानिया एम्पायर को समाप्त कर सकें :

> Let him make his salt. Mr. Gandhi will have to find a great deal more than a pinch of salt to bring down the British Empire.

मौजूदा दुनिया में कामयाब काम वह है जो देखने में साधारण दिखाई दे, मगर हक़ीक़त में वह महत्त्वपूर्ण हो; जो विरोधी को देखने में 'चुटकी भर नमक' नज़र आए, मगर अन्त को पहुँचे तो वह 'पहाड़-भर नमक' बन जाए।

सेवा का फल

नई दिल्ली से प्रकाशित अंग्रेज़ी पाक्षिक *इंडिया टुडे* (15 अगस्त, 1990) के पृष्ठ 68 पर एक शिक्षाप्रद घटना छपी थी। यह घटना मुहम्मद हनीफ़ सुलैमान (उम्र 35 साल) की है, जो लखनऊ के एक मुसलमान हज्जाम थे। वे पिछले दस वर्षों से मिस्टर मुलायम सिंह यादव की हजामत करते आ रहे थे। उस समय मिस्टर यादव केवल एक नेता थे, लेकिन बाद में वे उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बन गए।

मुहम्मद हनीफ़ सुलैमान ने मिस्टर यादव से कहा कि अब जबकि वे एक ऊँचे पद पर पहुँच चुके हैं, तो उन्हें लखनऊ के बाज़ार हज़रतगंज में एक दुकान दिला दें। मिस्टर यादव ने इस बात पर सहमति ज़ाहिर की, लेकिन उसके बाद वे अपना यह वादा भूल गए। मुहम्मद हनीफ़ सुलैमान कुछ महीनों तक इंतज़ार करते रहे। बाद में उन्होंने मुख्यमंत्री निवास जाना ही छोड़ दिया। जब मिस्टर यादव ने उनकी ग़ैरमौजूदगी के बारे में जानकारी

ली, तो उन्हें बताया गया कि सुलैमान वायदा न निभाने की वजह से नाराज़ हैं और अब उनके पास नहीं आते।

यह जानकर मिस्टर यादव ने अपने अधिकारियों को आदेश दिया कि हज़रतगंज में सुलैमान के लिए एक दुकान ढूँढ़ी जाए। अधिकारियों ने खोजबीन की तो पता चला कि उस क्षेत्र में कोई भी दुकान ख़ाली नहीं है।

हज़रतगंज में लखनऊ डेवेलपमेंट अथॉरिटी के पॉवर डिपार्टमेंट का एक सरकारी दफ़्तर स्थित था। मिस्टर यादव के आदेश पर यह दफ़्तर ख़ाली करवाया गया और सुलैमान को दे दिया गया ताकि वह वहाँ अपनी दुकान खोल सकें। रिपोर्ट के अनुसार, उस समय हज़रतगंज में दुकान पाने के लिए 1250 लोग प्रतीक्षा सूची में थे। मगर सुलैमान ने उन सभी पर से छलाँग लगाकर एक ही दिन में लखनऊ के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र में एक ऐसी दुकान पा ली जिसकी क़ीमत उस समय लाखों रुपये थी।

अब मुहम्मद हनीफ़ सुलैमान को इस दुकान में अपना काम शुरू किए काफ़ी वक़्त हो चुका है। इस दुकान के ऊपर एक नाम पट्ट लगा हुआ है—बम्बई हेयर ड्रेसर। रिपोर्टर के एक सवाल के जवाब में सुलैमान ने जो बात कही, उसे रिपोर्टर ने अपनी भाषा में इस तरह दर्ज किया है:

I deserved this much all my seva.

"मैं अपनी सेवा की वजह से इस सम्मान का हक़दार था।"

सेवा के चमत्कार को दूसरे शब्दों में लाभ प्राप्त करने का चमत्कार कहा जा सकता है। यदि आप किसी आदमी को यह विश्वास दिलाएँ कि आप उसके लिए लाभकारी हैं तो वह आपका दीवाना हो जाएगा। दूसरों को जीतने का सबसे अधिक आसान उपाय यह है कि आप उसके लिए लाभकारी बन गए हों।

हर आदमी स्वाभाविक रूप से किसी एक चीज़ से गहराई से विरक्त होता है और दूसरी चीज़ को वह बहुत ज्यादा पसन्द करता है। पहली चीज़ हानि है और दूसरी चीज़ लाभ। यदि किसी आदमी की राय यह हो जाए कि आप उसको हानि पहुँचाने वाले हैं, आप उसके लिए किसी पहलू से प्रोब्लम बन सकते हैं, तो वह आपको सख़्त नापसन्द करने लगेगा। हानि पहुँचाने वाला आदमी कभी किसी को प्रिय नहीं हो सकता।

इसके उलट, अगर किसी इंसान की छवि ऐसी हो कि वह दूसरों को फ़ायदा पहुँचाने वाला है, तो हर व्यक्ति उससे लगाव महसूस करेगा—चाहे वह फ़ायदा कितना ही छोटा क्यों न हो। मीठे शब्द कहना, किसी की ज़रूरत के समय फ़ौरन मदद करना, दूसरों की मुश्किल में उनका सहारा बनना, और लोगों से मुस्कुरा कर मिलना—ऐसी कोई भी आदत एक इंसान को दूसरों की नज़रों में पसंदीदा बना देती है। लोग ऐसे इंसान को अपना समझते हैं, अपनी बातों और मामलों में उस पर भरोसा करते हैं, और उनके दिल में उसके लिए एक नर्म कोना बन जाता है।

अगर आप ऐसे लोगों के बीच मौजूद हैं जिन्हें आप पराया समझते हैं या जिन्हें आप अपना दुश्मन मानते हैं, तो उनके लिए लाभदायक बन जाइए। आप अपने व्यवहार और काम से यह साबित कीजिए कि आप उनके लिए कोई बोझ नहीं बल्कि एक क़ीमती धरोहर हैं। अगर आप ऐसा करने में सफल हो जाते हैं, तो न आपको किसी से शिकायत होगी और न किसी को आपसे। फिर आप यह पाएँगे कि आपके चारों ओर का माहौल आपका हमदर्द और मददगार बन गया है।

आत्मिक बल

अबुल बरकात की उम्र 63 साल है, उत्तर प्रदेश के ज़िला आज़मगढ़ के निज़ामपुर गाँव के रहने वाले हैं। 29 अगस्त, 1989 ई. को हुई मुलाक़ात में उन्होंने अपने इलाके की एक घटना सुनाई, जिसमें बहुत बड़ी सीख छिपी है।

आज़मगढ़ के उत्तर-पश्चिम में एक गाँव है—रैदा—जो मझोई नदी के किनारे फ़ैज़ाबाद की सीमा पर बसा हुआ है। इस गाँव में मुसलमानों के केवल चार घर हैं, जबकि हिन्दुओं के लगभग दो सौ घर आबाद हैं। नवम्बर 1987 ई. में एक दिन ऐसा हुआ कि बाहर से एक नीलगाय गाँव में आ गई और गन्ने के खेत में घुस गई। गाँव के एक मुसलमान, झन्नू दर्जी, ने यह सोचा कि उसका शिकार किया जाए। उसने पास के मख़दूमपुर गाँव में एक मुसलमान को यह बात बताई, जिसके पास बन्दूक थी। वह अपनी बन्दूक लेकर आया और नीलगाय पर गोली चलाई।

अगर नीलगाय वहीं मर जाती, तो कोई समस्या पैदा नहीं होती, लेकिन निशाना ठीक नहीं लगा। नीलगाय घायल हो गई और ख़ून बहाते हुए भाग गई। जब हिन्दुओं ने जगह-जगह ख़ून देखा, तो वे बहुत उत्तेजित हो गए। जब उन्हें पता चला कि झन्नू दर्जी ने सूचना देकर नीलगाय पर गोली चलवाई है, तो उन्होंने गाँव में पंचायत बुलाई और झन्नू को बुलाकर यह सज़ा सुनाई कि उसकी इस ग़लती के बदले उस पर एक हज़ार रुपये का जुर्माना लगाया जाता है।

उस गाँव में कोई चालू लीडर झन्नू दर्जी को बहकाने के लिए मौजूद न था और न मुसलमानों का वहाँ कोई ज़ोर था जो झन्नू दर्जी को झूठे भ्रम का शिकार करे। अतः प्रकृति ने झन्नू दर्जी का मार्गदर्शन किया। वह लोगों के सामने खड़ा हो गया और कहा, 'पंचों का फ़ैसला मुझे मंज़ूर है। मैं ग़रीब

आदमी हूँ। मेरे पास नकद रुपया मौजूद नहीं। मगर मैं अपने घर का सामान बेचकर उसे अदा करूँगा।'

तीन दिन गुज़रे कि हिन्दुओं की अन्तरात्मा जाग उठी। उन्होंने दोबारा पंचायत बुलाई। उन्होंने आपस में कहा कि यहाँ मुसलमान बहुत थोड़े और कमज़ोर हैं। बाहर के लोग जब सुनेंगे कि हमने उनसे जुर्माना वसूल किया है, तो वे हम लोगों को बहुत गिरा हुआ समझेंगे और हमारी बदनामी होगी कि हमने मुसलमानों को कमज़ोर पाकर उन्हें दबा लिया। आम सहमति से यह तय हुआ कि झन्नू दर्जी से जुर्माना न लिया जाए। अतएव उस आम सहमति के अनुसार झन्नू दर्जी का जुर्माना माफ़ कर दिया गया।

हर इंसान के अन्दर अन्तरात्मा है। यह अन्तरात्मा दूसरे पक्ष के अन्दर आपकी प्रतिनिधि है। इस स्वाभाविक प्रतिनिधि को इस्तेमाल कीजिए और फिर आपको किसी से शिकायत न होगी।

सी. एफ. डोल (C. F. Dole) ने कहा है कि मेहरबानी का बरताव दुनिया में सबसे बड़ी व्यावहारिक ताक़त है : Goodwill is the mightiest force in the universe.

यह केवल एक व्यक्ति का कथन नहीं, बल्कि एक स्वाभाविक तथ्य है। इंसान को पैदा करने वाले ने इंसान को जिन गुणों के साथ पैदा किया है, उनमें से महत्त्वपूर्ण गुण यह है कि किसी आदमी के साथ बुरा व्यवहार किया जाए, तो वह बिफर उठता है और अगर उसके साथ अच्छा व्यवहार किया जाए तो वह कृतज्ञता के एहसास के साथ व्यवहार करने वाले के आगे बिछ जाता है।

इस साधारण और स्वाभाविक उसूल में किसी भी इंसान के साथ कोई भेदभाव नहीं किया जाता—यहाँ तक कि दोस्त और दुश्मन के बीच भी नहीं। अगर आप अपने किसी दोस्त से कड़वे शब्द कहें, उसे अपमानित करें या तकलीफ़ पहुँचाएँ, तो आप देखेंगे कि वह तुरंत अपनी सारी दोस्ती को

भुला देगा। उसके अंदर अचानक बदले की भावना जाग उठेगी। वही इंसान, जो पहले आप पर फूल बरसाता था, अब आपके ऊपर काँटे और आग बरसाने के लिए तैयार हो जाएगा।

इसके उलट, अगर आप किसी ऐसे इंसान से नरमी से पेश आएँ, जिसे आप अपना दुश्मन मानते हैं—उससे मीठा बोलें, उसकी कोई ज़रूरत पूरी कर दें, या किसी मुश्किल वक़्त में उसकी मदद कर दें, यहाँ तक कि उसकी प्यास के समय उसे एक गिलास ठंडा पानी पिला दें—तो आप देखेंगे कि उसका पूरा रवैया बदल जाएगा। जो इंसान पहले आपका खुला दुश्मन था, वही अब आपका दोस्त और शुभचिंतक बन जाएगा।

ख़ुदा ने इंसान की प्रकृति में यह स्वभाव रख कर हमारी बड़ी मदद की है। इस प्रकृति ने एक निहत्थे आदमी को भी दूसरों को वश में करने का सबसे बड़ा हथियार दे दिया है। इस दुनिया में शेर और भेड़िए को मारने के लिए गोली की ताकत चाहिए, मगर इंसान को झुकाने के लिए किसी गोली की ज़रूरत नहीं। उसके लिए सद्व्यवहार की एक फुहार काफ़ी है। कितना आसान है इंसान को अपने क़ाबू में लाना, मगर मूर्ख लोग इस सहज काम को अपने लिए मुश्किलतरीन काम बना लेते हैं।

ज्ञान ही असली दौलत

थॉमस जैफ़रसन (Thomas Jefferson) अमेरिका के तीसरे राष्ट्रपति थे। उनका जन्म 1743 ईस्वी में हुआ और 1826 ईस्वी में उनका निधन हुआ। वे 1801 से 1809 तक अमेरिका के राष्ट्रपति रहे। जैफ़रसन एक बेहद योग्य व्यक्ति थे। वे अंग्रेज़ी, लातीनी, यूनानी, फ्रांसीसी, स्पेनी, इतालवी और एंग्लो-सैक्सन भाषाएँ जानते थे। इतिहासकार उनके बारे में लिखते हैं कि वे एक बेहद असाधारण विद्वान थे:

> He was an extraordinary learned man (Encyclopedia Britanica, Vol. 10, p. 130).

उसने अपनी लम्बी उम्र में दर्शनशास्त्र और विज्ञान से लेकर धर्म तक लगभग सारी विद्याओं का गहरा अध्ययन किया। आख़िरी उम्र में उसने यह कोशिश की कि वह इंजील (बाइबिल) का अध्ययन करे और यह मालूम करे कि हज़रत मसीह ने वास्तव में क्या कहा था और बयान करने वालों ने उनके बारे में क्या बयान किया : He attempted an analysis of the New Testament in order to discover what Jesus really said as distinguished from what he was reported to have said.

जैफ़रसन ने आख़िरी उम्र में यह वसीयत की थी कि उसके मरने के बाद उसकी क़ब्र पर जो कतबा लगाया जाए उसमें यह न लिखा जाए कि वह अमेरिका का राष्ट्रपति था, बल्कि यह लिखा जाए कि वह वरज़ीनिया यूनीवर्सिटी का संस्थापक था, उसकी वसीयत के अनुसार उसकी कब्र पर जो कतबा लगा हुआ है उसमें ये शब्द मौजूद हैं : Here was buried Thomas Jefferson....... Father of the University of Verginia (10/131).

ये एक हक़ीक़त है कि ज्ञान सबसे बड़ी दौलत है। जो लोग ज्ञान की अहमियत को समझ लेते हैं, उन्हें अमेरिका के राष्ट्रपति का ओहदा भी छोटा लगने लगता है।

ज्ञान सबसे बड़ी दौलत है। यह एक ऐसी चीज़ है जिससे इंसान कभी नहीं थकता, और जिसकी कोई सीमा नहीं होती। ज्ञान हर मामले में फ़ायदेमंद होता है। यह हर क्षेत्र में सफलता की सीढ़ी है। ज्ञान से इंसान को वह समझ मिलती है जिससे वह इस दुनिया को समझ सके, चीज़ों की गहराई तक पहुँच सके।

ज्ञान एक ऐसा सिक्का है जिससे आप दुनिया की हर चीज़ हासिल कर सकते हैं। ज्ञान ही हर तरह की तरक्की की कुंजी है — चाहे वह किसी इंसान का हो या किसी समाज की। जिसके पास ज्ञान होता है, उसके पास मानो सब कुछ होता है।

जनाब अब्दुर्रहमान अन्तोले (बैरिस्टर एट ला और पूर्व मुख्यमन्त्री महाराष्ट्र) ने 5 फ़रवरी, 1987 ई. की मुलाकात में एक घटना बतायी। शायद 1954 ई. की बात है। उस समय वे लन्दन की कौंसिल ऑफ़ लीगल एजूकेशन में क़ानून के छात्र थे। एक लैक्चर के दौरान एक क़ानूनी मसले को स्पष्ट करते हुए उनके अँगरेज़ प्रोफ़ेसर ने उन्हें यह घटना सुनायी थी।

प्रोफ़ेसर ने बताया कि एक बड़ा औद्योगिक कारख़ाना चलते-चलते अचानक बन्द हो गया। कारख़ाने के इंजीनियर उसको दोबारा चलाने की कोशिश में कामयाब न हो सके। आख़िर एक बड़े एक्सपर्ट को बुलाया गया। वह आया तो उसने कारख़ाने का एक राउण्ड लिया। उसने उसकी मशीनें देखीं। उसके बाद वह एक जगह रुक गया। उसने कहा कि एक हथौड़ा ले आओ। हथौड़ा लाया गया तो उसने एक स्थान पर हथौड़े से मारा। उसके बाद मशीन हरकत में आ गई और कारख़ाना चलने लगा।

उस एक्सपर्ट ने वापस जाकर एक सौ पाउंड का बिल भेजा। कारख़ाने के मैनेजर को यह बिल बहुत ज़्यादा लगा। उसने एक्सपर्ट को एक खत लिखकर कहा कि आपने तो यहां आकर बस एक हथौड़ा मारा, कोई बड़ा काम नहीं किया, तो फिर सौ पाउंड का बिल समझ से बाहर है। कृपया हमारे प्रतिनिधि को इसका सही ब्योरा दें:

> Please furnish my client with further and better particulars.

इसके जवाब में उस एक्सपर्ट ने लिखा कि मैंने जो बिल भेजा है, वह पूरी तरह सही है। उसका ब्योरा यह है—

> £99.19 मशीन की ख़राबी को पहचानने और सही जगह समझने की फीस है, और £0.01 हथौड़ा उठाकर सही जगह पर मारने के लिए है:
>
> £99.19 to diagnose the disease and one shilling to pick up the hammer and to strike at right spot.

इस दुनिया में सबसे ज़्यादा कीमत अगर किसी चीज़ की है, तो वह ज्ञान की है। अगर सौ में एक हिस्सा मेहनत की कीमत है, तो बाकी निन्यानवे हिस्सा ज्ञान की कीमत मानी जाएगी।

वंचित होने के बावजूद

उन्नीसवीं सदी का एक मशहूर अंग्रेज़ लेखक सेमुअल बटलर (Samuel Butler) था। उसने लिखा था:

> "Life is the art of drawing sufficient conclusions from insufficient premises."
>
> "जीवन एक ऐसी कला है जिसमें कम आधार से भी पूरे और सही नतीजे निकाल लिए जाएँ।"

सेमुअल बटलर ने यह बात इंसानी जीवन की प्रकृति के बारे में कही थी। लेकिन जीवन को लेकर शरीअत की जो सोच है, वह भी इसी तरह की

है। कुरआन में बताया गया है कि इस दुनिया की व्यवस्था में, जिसे ख़ुदा ने बनाया है, आसानी के साथ-साथ मुश्किल भी रखी गई है। (क़ुरान, 94:5-6)

एक बार रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने एक पहाड़ी रास्ता देखा, जिसे लोगों ने "दुश्वार" (मुश्किल) नाम दिया था। आपने फ़रमाया: "नहीं, इसका नाम तो 'आसान' है।" (सीरत इब्ने हिशाम, जिल्द 2, पेज 482) यानी इस्लाम की तालीम यह है कि इंसान मुश्किल में भी आसानी को पहचान ले। वह कठिन रास्ते को भी आसान निगाह से देखे।

पैगम्बर इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का जीवन इस शिक्षा का श्रेष्ठ उदाहरण है। आपको अजीमतर मुश्किलात पेश आईं, मगर आपने सूझ-बूझ की विधि से उनको अपने नज़दीक आसान बना लिया। आपने डिस ऐडवाण्टिज (disadvantage)को ऐडवाण्टिज (advantage) में तब्दील कर लिया। एक विद्वान मिस्टर केलेट (E. E. Kellet) ने आपकी इस विशेषता का उल्लेख करते हुए लिखा है कि उन्होंने मुश्किलों का सामना इस दृढ़ता के साथ किया कि नाकामी से कामयाबी को निचोड़ा जाए: He faced adversity with the determination to wring success out of failure.

संसार में एक तरफ इंसान है, जो दूसरे इंसान के लिए मुश्किलें पैदा करता है। दूसरी तरफ खुदा की बनाई हुई व्यवस्था है, जिसमें हर मुश्किल के साथ उसका हल भी मौजूद है। ऐसे में अगर कोई इंसान मुश्किलों पर शोर करता है, तो इसका मतलब यह होता है कि उसने इंसान के काम को तो देखा, लेकिन खुदा के काम को नहीं देखा। क्योंकि अगर वह खुदा के काम को देखता, तो शिकायत करने के बजाय उसे अपने फ़ायदे के लिए इस्तेमाल करने में लग जाता।

इस दुनिया में हर नाकामी के बाद इंसान के लिए एक नई कामयाबी की संभावना ज़रूर होती है। बस ज़रूरत इस बात की है कि इंसान उस

संभावना को पहचाने और उसका सही इस्तेमाल करके खुद को दोबारा कामयाब बना ले।

अल रिसाला (दिसम्बर, 1998 ई.) में कनाडा के खिलाड़ी बेन जॉनसन (Ben Johnson) का क़िस्सा छप चुका है। दौड़ के अन्तरराष्ट्रीय मुक़ाबले में उसने प्रथम दर्जे की कामयाबी हासिल की। मगर अगले ही दिन उसका जीता हुआ गोल्ड मेडिल उससे छीन लिया गया और उसके बारे में सख़्त फ़ैसला लिया गया कि वह अगले दो साल तक खेल के मुकाबलों में हिस्सा न ले सकेगा। बेन जॉनसन के लिए यह उसकी ज़िन्दगी की सबसे भयानक घटना थी। फिर भी उसने 'अन्यायी जजों' के विरुद्ध विरोध में समय बर्बाद नहीं किया। उसने दोबारा अपनी तैयारी की योजना बनायी।

इटली के टेलीविज़न नेटवर्क ने नवम्बर, 1988 ई. में जॉनसन का एक लाइव इण्टरव्यू उसके आवास (टोरण्टो) पर लिया जिसका विवरण समाचार पत्रों में भी प्रकाशित हुआ है। टाइम्स ऑफ़ इण्डिया (29 नवम्बर, 1998 ई.) के अनुसार, एक सौ मीटर दौड़ के अन्तरराष्ट्रीय चैम्पियन बेन जॉनसन ने टेलीविज़न कैमरे के सामने रोते हुए कहा कि उन्होंने जान-बूझ कर खेल के नियमों का कोई उल्लंघन नहीं किया। फिर भी वे अपनी तैयारी जारी रखे हुए हैं और वह बारसिलोना (स्पेन) में 1992 ई. में होने वाले ओलम्पिक खेलों में वापस आने का सपना देख रहे हैं। उन्होंने कहा कि उनका अन्तरराष्ट्रीय रिकार्ड ट्रैक पर 13 साल की निरन्तर मेहनत का नतीजा था। देखने में वे बहुत दुखी दिखाई दे रहे थे। सियोल ओलम्पिक के बाद पेश आने वाले मुश्किल क्षणों का उल्लेख करते हुए वह फूट-फूट कर रो पड़े। इण्टरव्यू लेने वाले मिस्टर गियानी मनोली ने कहा कि शूटिंग का काम पाँच मिनट तक रोक देना पड़ा। क्योंकि जॉनसन अपनी सिसकियों पर काबू नहीं पा सके थे।

बेन जॉनसन ने बताया कि ट्रैक पर वापसी के लिए वह हफ्ते में छह दिन, रोज़ चार घंटे ट्रेनिंग कर रहे हैं। उन्होंने कहा, "मेरा काम सिर्फ दौड़ना है। मैं बैठ कर रहने की सोच भी नहीं सकता। मेरी ख्वाहिश है कि मैं फिर से मुकाबले में हिस्सा लूँ।" उन्होंने कहा, "उन्होंने मेरा सोने का पदक मुझसे लिया है, मेरी रफ़्तार नहीं":

> They have taken away my gold medal,
> not my speed.

जो चीज़ छीनी जाती है, वह हमेशा आपकी कोई बाहरी चीज़ होती है, आप खुद नहीं। आपकी असल काबिलियतें, आपका वजूद, फिर भी आपके पास रहता है। उस मिली हुई चीज़ को इस्तेमाल कीजिए और फिर हर कमी या नुकसान के बाद आप एक नया इतिहास रच सकते हैं।

फासला रखें

सड़क पर बहुत सी गाड़ियाँ एक साथ चलती हैं— कुछ आगे से, कुछ पीछे से, कुछ दाएँ और कुछ बाएँ से। इसलिए सड़क पर सुरक्षित सफ़र के लिए कई नियम बनाए गए हैं। ये ट्रैफ़िक नियम सड़क के किनारे हर जगह लिखे होते हैं ताकि आने-जाने वाले लोग उन्हें पढ़ें और उसी के अनुसार अपना सफ़र तय करें।

दिल्ली की एक सड़क से गुज़रते हुए मुझे एक ऐसा ही नियम एक बोर्ड पर लिखा दिखा। उस पर लिखा था — फ़ासला बनाए रखो (Keep Distance). जब मैंने ये शब्द पढ़े, तो मुझे लगा कि ये दो शब्द बहुत ही समझदारी की बात कह रहे हैं। इसमें बहुत गहराई है। इसका मतलब न सिर्फ़ सड़क पर चलने से है, बल्कि जीवन के पूरे सफ़र से भी जुड़ा हुआ है।

मौजूदा दुनिया में कोई आदमी अकेला नहीं है। हर आदमी को दूसरे बहुत-से इंसानों के बीच रहते हुए अपना काम करना पड़ता है। हर आदमी के सामने उसका व्यक्तिगत इण्ट्रेस्ट है। हर आदमी अपने अन्दर एक अहं लिए हुए है। हर आदमी दूसरे को पीछे करके आगे बढ़ जाना चाहता है।

यह स्थिति विवश करती है कि हम जीवन के सफ़र में 'फ़ासले पर रहो' के उसूल को हमेशा पकड़े रहें। हम दूसरे से इतनी दूरी पर रहें कि उससे टकराव का ख़तरा मोल लिए बिना हम अपना सफ़र जारी रख सकें।

इसी तत्त्वदर्शिता को क़ुरआन में उपेक्षा कहा गया है। यदि आप उपेक्षा की इस तत्त्वदर्शिता को सामने न रखें तो कहीं आपका लाभ दूसरे के लाभ से टकरा जाएगा। कहीं आपका एक बड़ा शब्द दूसरे को उत्तेजित करने का कारण बन जाएगा। कहीं आपकी असावधानी आपको असाधारण रूप से दूसरों से उलझा देगी।

इसके बाद वही होगा जो सड़क पर होता है—यानि एक दुर्घटना (accident)। सड़क पर होने वाली दुर्घटना इंसान के सफ़र को रोक देती है। कभी-कभी यह मुसाफ़िर की ज़िन्दगी को भी ख़त्म कर देती है। इसी तरह, अगर इंसान ज़िन्दगी में ऊपर बताए गए उसूल को सामने नहीं रखेगा, तो उसका आगे बढ़ने का सफ़र रुक जाएगा। यह भी हो सकता है कि वह अपनी ज़िन्दगी से हाथ धो बैठे। उसे इतिहास के पन्नों से एक ग़लत लफ़्ज़ की तरह मिटा दिया जाए।

अतीत और वर्तमान में इसकी अनगिनत मिसालें हैं। जब भी कोई व्यक्ति अपनी तय की गई सीमा को पार करता है, वह ज़रूर किसी बुरे अंजाम का सामना करता है।

नितिन वालिया एक तीन साला बच्चा है। वह अपने माँ-बाप (विजयपाल वालिया और सुनीता) के साथ शाहदरा में रहता है। बच्चे को चिड़ियाघर देखने का शौक़ था। उसके माँ-बाप उसको दिल्ली का चिड़ियाघर

दिखाने के लिए ले गए। विभिन्न जानवरों को देखते हुए ये लोग वहाँ पहुँचे जहाँ सफ़ेद शेर का पिंजरा था। वह शेर और उसके बच्चे को देखने के लिए रुके। यहाँ नितिन रेलिंग के अन्दर दाख़िल हो गया और पिंजरे में अपना हाथ डाल दिया। शेरनी (नेमा) ने झपट कर उसका हाथ अपने मुँह में ले लिया। लोगों ने उसको लकड़ी से मार कर हटाया, मगर इस दौरान वह बच्चे का हाथ कन्धे तक चबा चुकी थी। ऑपरेशन के बाद बच्चा ज़िन्दा है मगर वह सारी उम्र के लिए अपने दाएँ हाथ से महरूम हो चुका है।

टाइम्स ऑफ़ इण्डिया (21 मार्च, 1988 ई.) के रिपोर्टर के अनुसार, बच्चे के माँ-बाप ने इस दुर्घटना की ज़िम्मेदारी चिड़ियाघर के स्टाफ़ पर डाली। उन्होंने कहा कि उस समय पिंजरे के पास कोई चौकीदार मौजूद न था: The parents claim that there were no guards around.

अधिकांश लोगों का यह हाल है कि जब उनके साथ कोई घटना पेश आती है तो वे तुरन्त अपने से बाहर किसी को तलाश करते हैं जिस पर घटना की ज़िम्मेदारी डाल सकें। मगर मौजूदा दुनिया में इस प्रकार की कोशिश सरासर निरर्थक है यहाँ घटनाओं से केवल वह व्यक्ति बच सकता है जो अपने आप को कण्ट्रोल में रखे। जो व्यक्ति स्वयं बेकाबू हो जाए, वह निश्चय ही घटना से दो-चार होगा, फिर चाहे दूसरों को ज़िम्मेदार ठहराने के लिए उसने शब्दकोश के तमाम शब्द दोहरा डाले हों।

चिड़ियाघर में ख़तरनाक जानवरों के घेरे से लगभग चार फ़ीट की दूरी पर एक रेलिंग (railing) लगाई जाती है। इसका मक़सद यह होता है कि इंसान को जानवर के सामने एक महफ़ूज़ दूरी पर रखा जा सके। ठीक इसी तरह, ज़िन्दगी के हर मोड़ पर भी एक तरह की रेलिंग मौजूद होती है। जो इंसान उस रेलिंग को एक सीमा मानकर वहीं रुक जाएगा, वह सुरक्षित रहेगा। लेकिन जो इंसान उस रेलिंग को पार करेगा, वह खुद को हादसों से नहीं बचा पाएगा—न चिड़ियाघर के अंदर और न ही चिड़ियाघर के बाहर।

भड़काएं नहीं

भारत में सबसे ज़्यादा शेर गिर के जंगलों में पाए जाते हैं। यहाँ उनके लिए एक बहुत बड़ा खुला पार्क बनाया गया है जिसे Gir Forest Sanctuary कहा जाता है। 20वीं सदी की शुरुआत में यहाँ शेरों की संख्या 20 से भी कम थी। लेकिन मई 1990 ईस्वी की गिनती के मुताबिक अब यहाँ 280 शेर हैं।

इन शेरों की मौजूदगी से इंसानों के जीवन को ख़तरा पैदा हो गया है। *टाइम्स ऑफ इंडिया* (22 अगस्त, 1990) की एक रिपोर्ट के अनुसार, पिछले दो वर्षों में इन शेरों ने इलाके के 16 लोगों को मार डाला और 140 लोगों को घायल कर दिया।

इन घटनाओं के बाद मिस्टर रवि चेलम की अगुवाई में एक टीम बनाई गई ताकि वे हालात की जाँच कर सकें। जाँच के बाद उन्होंने बताया कि भले ही शेरों ने कई इंसानों को नुकसान पहुँचाया और उन पर हमला किया, लेकिन ये हमले सिर्फ़ शेरों की दरिंदगी की वजह से नहीं हुए। रिसर्च करने वालों ने ज़्यादातर शेरों के हमलों की वजह जानवरों को उकसाया जाना बताया है:

> The researchers have attributed most of the lion attacks on humans to provocations of the animals.

शेर एक भयानक दरिन्दा है। वह इंसान के लिए सबसे बड़ा ख़तरा है, मगर शेर अपनी सारी दरिन्दगी के बावजूद अपनी प्रकृति के अधीन रहता है और उसकी प्रकृति यह है कि वह उत्तेजना के बिना किसी इंसान के ऊपर हमला न करे।

यह कुदरत की मिसालों में से एक मिसाल है, जो यह बताती है कि हिंसक इंसानों के अत्याचार से किस तरह बचा जाए। दरिन्दा इंसान के जुल्म

से बचने का एकमात्र विश्वसनीय उपाय यह है कि उसको उसकी प्रकृति की अधीनता में रहने दिया जाए। उत्तेजना दिलाने से पहले हर इंसान अपनी प्रकृति के हुक्म के तहत रहता है और उत्तेजित करने के बाद हर आदमी अपनी प्रकृति के हुक्म से बाहर आ जाता है। मानो प्रकृति स्वयं हर आदमी को ज़ुल्म व फ़साद से रोके हुए है। ऐसी हालत में आपको जवाबी कार्रवाई करने की क्या ज़रूरत है?

उत्तेजित होने से पहले शेर एक कष्ट न देने वाला हैवान है। उत्तेजित होने के बाद शेर एक आदमख़ोर हैवान बन जाता है। आप शेर को उत्तेजित न कीजिए, आप उसके नुक्सान से महफ़ूज़ रहेंगे।

नर्मी और सहन करना बुज़दिली की बात नहीं, यह जीवन का एक महत्त्वपूर्ण उसूल है जो स्वयं अल्लाह ने तमाम जीवों को सिखाया है।

अरबी की एक कहावत है : 'व्यवहार में नर्मी और दिल की उदारता का तरीका हमेशा हितकारी होता है। '

यह मिसाल इंसानी तजर्बों से निकली है। इंसान ने हज़ारों सालों में दोनों तरह के रवैये आज़माए हैं — नर्म रवैया भी और सख़्त रवैया भी। आख़िरकार अनुभव से यह बात साफ़ हो गई कि सख़्त रवैया अक्सर उलटा असर करता है, जबकि नर्म रवैया ऐसा नतीजा देता है जो फ़ायदेमंद होता है।

रेलवे स्टेशन पर दो आदमी चल रहे थे। एक आदमी आगे था और दूसरा पीछे। पीछे वाले के हाथ में एक बड़ा बक्सा था। जब वह तेज़ी से चला, तो उसका बक्सा आगे चल रहे आदमी के पैर से टकरा गया। वह आदमी प्लेटफॉर्म पर गिर पड़ा।

पीछे वाला आदमी फ़ौरन रुक गया और शर्मिंदगी के साथ बोला, "मुझे माफ़ कीजिए" (Excuse me)। आगे वाले ने यह सुना, तो उसका ग़ुस्सा ठंडा हो गया। उसने कहा, "कोई बात नहीं" (O.K.), और फिर दोनों अपनी-अपनी मंज़िल की तरफ़ बढ़ गए।

दूसरी सूरत यह है कि इस प्रकार की कोई अप्रिय स्थिति पेश आए तो दोनों बिगड़ जाएँ। एक कहे कि तुम अन्धे हो। दूसरा कहे कि तुम मूर्ख हो, तुमको बोलना नहीं आता, आदि। अगर ऐसे अवसर पर दोनों इस प्रकार की बोली बोलने लगें तो बात बढ़ेगी। यहाँ तक कि दोनों लड़ पड़ेंगे। पहले अगर उनके शरीर पर मिट्टी लग गई थी तो अब उनके शरीर पर ख़ून बहेगा। पहले अगर उनके कपड़े फटे थे तो अब उनकी हड्डियाँ टूटेंगी।

बात चाहे घरेलू जीवन की हो या बाहर की, एक ही समुदाय के लोगों के बीच झगड़ा हो या दो अलग-अलग समुदायों के लोगों के बीच — हर जगह विनम्रता और उचित आदर के साथ मामलों को आसानी से सुलझाया जा सकता है। इसके उलट, कठोर और अभद्र व्यवहार से समस्याएँ और ज़्यादा बढ़ जाती हैं।

नम्रता का रवैया ऐसा होता है जैसे आग पर पानी डालना — यह ग़ुस्से और टकराव को शांत कर देता है। जबकि सख़्त और रूखा रवैया ऐसा होता है जैसे आग पर पेट्रोल डालना — यह हालात को और ज़्यादा बिगाड़ देता है।

हर एक संभावित दोस्त

करनोल (दक्षिण भारत) में जन्मे डॉ. अब्दुल लतीफ़ (1891–1971) अपने क़ुरआन के अंग्रेज़ी अनुवाद और अन्य सेवाओं के कारण काफी प्रसिद्ध हुए। उन्होंने स्थानीय हाई स्कूल में अपने पिता को बताए बिना दाख़िला ले लिया था, जबकि उनके पिता को अंग्रेज़ों और अंग्रेज़ी शिक्षा से सख़्त नफ़रत थी। जब उन्हें यह पता चला, तो वे बहुत नाराज़ हुए और सख़्त लहजे में पूछा: “अंग्रेज़ी पढ़कर क्या करेगा?” दुबले-पतले, छोटे क़द के उस लड़के ने जवाब दिया: “अंग्रेज़ी पढ़कर क़ुरआन का अनुवाद अंग्रेज़ी में करूँगा।”

1915 ईस्वी में उन्होंने बी.ए. की परीक्षा अच्छे अंकों से पास की। 1920 ईस्वी में उन्हें जामिया उस्मानिया, हैदराबाद में अंग्रेज़ी के उस्ताद के रूप में नियुक्त किया गया। 1922 ईस्वी में उनके लिए एक नया शैक्षिक अवसर सामने आया, जब जामिया उस्मानिया के चार उस्तादों को उच्च शिक्षा के लिए यूरोप भेजने का निर्णय हुआ। राज्य की ओर से उन्हें 30 हज़ार रुपये का ब्याज-रहित ऋण दिया गया। इन चार शिक्षकों में से एक डॉ. सय्यद अब्दुल लतीफ़ भी थे।

लन्दन पहुँच कर वे वहाँ बी. ए. (ऑनर्स) में दाख़िला लेना चाहते थे, मगर किंग्स कॉलेज के अँगरेज़ी विभाग के अध्यक्ष और दूसरे अँगरेज़ उस्ताद आपकी योग्यता से इतने प्रभावित हुए कि आप को बी. ए. और एम. ए. से अलग करते हुए सीधे पीएच. डी. करने की इजाज़त दे दी। आपके थिसिस का शीर्षक 'उर्दू अदब पर अँगरेज़ी अदब के असरात' तय हुआ। निबन्ध की तैयारी की अवधि तीन साल निर्धारित की गई थी, मगर आपने दो साल में ही पीएच. डी. के निबन्ध को पूर्ण कर लिया। किंग्स कॉलेज के अधिकारियों ने उसको स्वीकार करते हुए आपको डॉक्टरेट का हक़दार क़रार दिया। सय्यद अब्दुल लतीफ़ निर्धारित मुद्दत से एक साल पहले डॉक्टर हो कर हैदराबाद वापस आ गए। यहाँ आपको तुरन्त जामिया उस्मानिया का प्रोफ़ेसर बना दिया गया।

1922 ई. में अँगरेज़ों को मुसलमानों का सबसे बड़ा दुश्मन समझा जाता था। मगर इसी दुश्मन ने मुसलमान छात्र के साथ उदारता का वह मामला किया जिसकी मिसाल मुस्लिम संस्थानों में भी मुश्किल से मिलेगी। वास्तविकता यह है कि 'दुश्मन इंसान' के अन्दर भी 'दोस्त इंसान' मौजूदा होता है, मगर उस दोस्त इंसान को वही लोग तलाश कर पाते हैं जो दोस्ती और दुश्मनी से ऊपर उठ कर इंसानों से व्यवहार करना जानते हों।

आम धारणा यह है कि लोग अपनों को अपना और ग़ैरों को ग़ैर समझते हैं, मगर खुले दिल वाले इंसान के लिए हर एक उसका अपना है, कोई उसका ग़ैर नहीं।

स्वामी रामतीर्थ (1873-1906 ई.) अत्यन्त योग्य आदमी थे। उनका एक बहुत अर्थपूर्ण कथन है, 'जीवन के सब दरवाज़ों पर लिखा हुआ होता है 'खींचो' मगर प्रायः हम उसे 'धक्का' देना शुरू कर देते हैं।'

स्वामी रामतीर्थ फरटि के साथ अँगरेज़ी बोलते थे। वे धर्म के प्रचार के लिए 1903 में अमेरिका गए। इनका जहाज़ सान फ्रांसिस्को के समुद्री तट पर लंगर- अंदाज़ हुआ। वे उतरे तो एक अमेरिकी परिचय के उद्देश्य से उनके निकट आया। उसके बाद जो वार्ता हुई, वह यह थी:

'आपका सामान कहाँ है?'

अमेरिकी ने पूछा।

'मेरा सामान बस यही है'

स्वामी रामतीर्थ ने जवाब दिया।

'अपना रुपया-पैसा आप कहाँ रखते हैं? '

'मेरे पास रुपया-पैसा है ही नहीं?'

''फिर आपका काम कैसे चलता है? '

'मैं सबसे प्यार करता हूँ, इसी से मेरा सब काम चल जाता है।'

'तो अमेरिका में आपका कोई दोस्त ज़रूर होगा।'

'हाँ, एक दोस्त है और वह दोस्त यह है।'

स्वामी रामतीर्थ ने बस इतना ही कहा और अपने दोनों बाज़ू उस अमेरिकी व्यक्ति के गले में डाल दिए। अमेरिकी उनकी इस बात से बहुत प्रभावित हुआ। इसके बाद वह व्यक्ति उनका इतना गहरा दोस्त बन गया कि उन्हें अपने घर ले गया, और जब तक स्वामी रामतीर्थ अमेरिका में रहे, वह व्यक्ति लगातार उनके साथ रहा और उनकी सेवा करता रहा। यहाँ तक कि वह उनका शिष्य बन गया।

इस दुनिया में मोहब्बत सबसे बड़ी ताकत है। मोहब्बत के ज़रिए आप अपने विरोधी को भी झुका सकते हैं और एक अजनबी को अपना बना सकते हैं — बशर्ते कि आपकी मोहब्बत सच्ची हो, दिखावे के लिए न हो।

ख़ामोशी हल है

अल्ताफ़ हुसैन हाली पानीपती (1837–1914) एक क्रांतिकारी सोच वाले इंसान थे। उन्होंने उर्दू साहित्य में सुधार का आंदोलन चलाया। उन्होंने पुराने उर्दू काव्य की तीखी आलोचना की। उनका कहना था कि उर्दू शायरी में ज़रूरत से ज़्यादा कल्पना और प्रेम-प्रसंगों को बढ़ा-चढ़ाकर दिखाया गया है। उन्होंने कहा कि शायरी में कोई मक़सद होना चाहिए। इसका एक उदाहरण उन्होंने खुद 'मुसद्दस' के रूप में पेश किया।

हाली की इस आलोचना से वे लोग बहुत नाराज़ हुए जो उर्दू शायरी को अपना गर्व समझते थे और उसे अपने लिए बहुत कीमती मानते थे। नतीजा यह हुआ कि हाली के ख़िलाफ़ कई आपत्तिजनक और तीखे लेख छपने लगे। लखनऊ का अख़बार *'उर्दू पेज'* अक्सर बहुत अपमानजनक भाषा में उनके खिलाफ़ लिखता और अपने लेखों का शीर्षक इन शब्दों में रखता:

अबतर हमारे हमलों से हाली का हाल है
मैदाने पानीपत की तरह पायमाल है

हाली ने इन अनर्गल विरोधों का कोई जवाब नहीं दिया। वे ख़ामोशी के साथ अपना काम करते रहे। आख़िरकार कुछ साल के बाद वे लोग थककर चुप हो गए। किसी ने हाली से सवाल किया कि आपके विरोधी कैसे ख़ामोश हो गए? इसके जवाब में हाली ने किसी का नाम लिए बिना यह शे'र कहा :

क्या पूछते हो क्योंकर सब नुक्ता चीं हुए चुप
सब-कुछ कहा उन्होंने पर हमने दम न मारा

फ़र्ज़ी दुश्मनियों का सबसे आसान और असरदार जवाब यही है कि उन्हें कोई जवाब ही न दिया जाए। झूठी दुश्मनी हमेशा बिना आधार के होती है। इसका अंजाम तय होता है—वह खुद-ब-खुद खत्म हो जाती है। ऐसे विरोध का जवाब देना ऐसा है जैसे उसकी उम्र बढ़ा देना। अगर इंसान सब्र से काम ले, तो ये दुश्मनियाँ एक दिन जड़ से उखड़ कर अपने-आप गिर जाती हैं। वे कभी ज़्यादा समय तक ईश्वर की बनाई इस धरती पर टिक नहीं सकतीं।

झूठ को खत्म करने वाला सबसे बड़ा ज़रिया समय होता है। आपको बस आने वाले समय का इंतज़ार करना चाहिए, और फिर आप देखेंगे कि समय ने उस झूठ और फ़साद को साफ़ तरीके से पूरी तरह मिटा दिया है — जिसे आप आजमाइश में पड़कर खुद नुकसान पहुँचाकर खत्म करना चाहते थे।

इस नीति का सम्बन्ध किसी एक मामले से नहीं। जिस मामले में भी ख़ामोश प्रतीक्षा की यह नीति अपनायी जाएगी, आख़िर में वह कारगर साबित होगी।

कुछ ईसाइयों ने दिल्ली के पुलों और दीवारों पर काले रंग से अँगरेज़ी में यह वाक्य लिख दिया कि ईसा मसीह जल्द आने वाले हैं। इसके बाद कुछ हिन्दू नौजवानों में जवाबी जोश पैदा हुआ। उन्होंने उपरोक्त वाक्य के ठीक पहले हर जगह ये शब्द लिख दिए कि हिन्दू बनने के लिए। वाक्य की बनावट बताती है कि यह पढ़े-लिखे हिन्दुओं का काम नहीं था, क्योंकि अँगरेज़ी के हिसाब से सही वाक्य यूँ होगा : To become a Hindu.

इसी तरह की कोई घटना अगर किसी शहर में मुसलमानों के साथ घटती, तो तुरंत कुछ हलकी सोच वाले लोग यह कहना शुरू कर देते कि यह पैग़म्बर का अपमान है। यह मुसलमानों की भावनाओं को ठेस पहुँचाना है, यह हमारे समुदाय के स्वाभिमान को चुनौती देना है। इसके बाद कुछ मुस्लिम नौजवान ग़ुस्से में आकर जवाबी कार्रवाई करते, और फिर शहर में हिन्दू-मुस्लिम दंगा हो जाता।

इसके बाद कुछ तथाकथित बड़े नेता बयान देकर प्रशासन की नाकामी को उजागर करने लगते। कुछ लोग रिलीफ़ फ़ण्ड खोलकर सामुदायिक सेवा का क्रेडिट लेने की कोशिश करते। मुसलमानों के उर्दू अख़बारों में गरम सुर्ख़ियाँ छपतीं, जिससे उनकी बिक्री बढ़ जाती। और जहाँ तक आम मुस्लिम जनता की बात है, तो उनके हिस्से में इसके अलावा कुछ नहीं आता कि उनकी तबाही और ज़्यादा बढ़ जाए।

मगर ईसाइयों ने इस 'उत्तेजित कार्रवाई' का कोई नोटिस नहीं लिया। नतीजा यह हुआ कि यह घटना केवल एक महत्त्वहीन घटना (Non-Event) बन कर रह गयी।

मैं ओबराय होटल (नई दिल्ली) के पास 19 फ़रवरी, 1990 ई. की सुबह को फ्लाईओवर पर खड़ा हुआ उसकी दीवारों पर यह दृश्य देख रहा था— - पुल के दोनों तरफ़ की खुली सड़क पर सवारियाँ तेज़ी से गुज़र रही थीं। किसी को भी यह फ़ुरसत न थी कि वह ठहर कर पुल के ऊपर लिखे हुए

इन शब्दों को पढ़े। ये शब्द पुल की दीवारों पर उपेक्षित रूप में केवल इस बात का इन्तज़ार कर रहे थे कि बारिश का पानी या हवाओं का झोंका इनको मिटा दे, इससे पहले कि कोई उनको पढ़े और उनसे कोई असर क़ुबूल करे।

जो 'उत्तेजना' इतनी महत्त्वहीन हो, उस पर जो लोग उत्तेजित होकर दंगे के सामान पैदा करते हैं, वे निस्सन्देह दुनिया के तमाम मूर्खों से ज्यादा मूर्ख हैं।

चुनौती अवसर है

एडमण्ड बर्क (Edmund Burke) का कहना है कि "जो इंसान हमारे खिलाफ़ लड़ता है, वह हमारे नसों को मज़बूती देता है और हमारे हुनर को बेहतर बनाता है। हमारा विरोधी ही हमारा मददगार होता है।"

> He that wrestles with us, strengthens our nerves, and sharpens our skill. Our antagonist is our helper.

यही बात शैख़ सादी ने अपनी किताब *गुलिस्ताँ* की एक कहानी में रूपक के अंदाज़ में इस तरह कही है, "क्या तुमने नहीं देखा कि जब बिल्ली मजबूर हो जाती है, तो वह अपने पंजों से शेर की आँख तक निकाल लेती है?":

> नबीनी कि चूं गुर्बा आजिज़ शवद
> बर आरद ब-चंगाल चश्म-ए पलंग?

जब किसी दूसरे की तरफ़ से आपके खिलाफ़ कोई बात सामने आती है, तो आपके पास दो तरह की सोच हो सकती है। एक यह कि आप उसे ज़ुल्म मानें। दूसरी यह कि आप उसे एक चुनौती समझें। अगर आप उसे

ज़ुल्म मानते हैं, तो आप में शिकायत करने का रवैया आ जाता है। लेकिन अगर आप उसे चुनौती मानते हैं, तो आप में मुकाबला करने की भावना पैदा होती है।

शिकायती सोच का काम केवल यह नज़र आता है कि वह दूसरे पक्ष के विरुद्ध चीख-पुकार शुरू कर दे। वह उसके विरुद्ध अपने तमाम विरोधी शब्द इस्तेमाल कर डाले। इसके विपरीत मुकाबले की सोच अमल की तरफ़ ले जाती है। वह हालात को समझ कर जवाबी तरीका तलाश करने में लग जाती है ताकि सूझ- बूझ और कारगर ढंग से दूसरे पक्ष की विरोधी योजनाओं को नाकाम बना दे।

शिकायत और विरोध की सोच आदमी को ऐसे रास्तों की तरफ़ ले जाती है जहाँ वह अपनी बची हुई क़ुव्वत भी बेकार के हंगामों में जाया कर दे, जबकि चैलेंज और मुकाबले की सोच आदमी की छुपी हुई क्षमताओं को जगाती है, वह उसको नया उत्साह प्रदान करती है। वह उसको इतना महान बना देती है कि कमज़ोर भी ताक़तवर पर छा जाए और बिल्ली भी शेर को पीछे हटने पर मजबूर कर दे।

मौजूदा दुनिया मुक़ाबले की दुनिया है। यहाँ शिकायत की सोच आदमी को विनाश की तरफ़ ले जाती है और तदबीर की सोच निर्माण व प्रगति की तरफ़।

आप रास्ता चल रहे हैं। बीच में एक झाड़ी के काँटे से आपका दामन उलझ जाता है। ऐसे समय में आप क्या करते हैं? आप 'शिकायत' के बजाए 'उपाय' का तरीका अपनाते हैं। आप झाड़ी के विरुद्ध प्रदर्शन नहीं करते, बल्कि यह सोचने लगते हैं कि कौन-सी सूरत अपनाएँ जिससे समस्या हल हो जाए।

समझदार इंसान यह जानता है कि उसे यही तरीका इंसानों के मामले में भी अपनाना चाहिए। जब हम लोगों के बीच रहते हैं, तब भी ऐसा होता है

कि किसी से टकराव हो जाता है, कोई हमें तकलीफ़ पहुँचा देता है, कभी हमें लगता है कि किसी ने हमारे अधिकार से हमें वंचित किया है। ऐसे हर मौके पर हमें शिकायत करने के बजाय हल निकालने का रास्ता अपनाना चाहिए।

ज़िंदगी का हर मसला एक चुनौती है, न कि किसी इंसान द्वारा दूसरे पर ज़ुल्म करने का मामला। अगर आपके सामने कोई मुश्किल आती है और आप उसे ज़ुल्म समझते हैं, तो आप में शिकायत और विरोध करने की सोच पैदा होती है। यह सोच धीरे-धीरे आपको वहाँ तक पहुँचा सकती है जहाँ आप मायूसी में डूब जाएँ। आपको लग सकता है कि इस माहौल में आपके लिए कुछ भी करना मुमकिन नहीं है। शिकायत करने की आदत इंसान को मायूसी तक पहुँचा देती है, और मायूसी की सोच एक तरह की मानसिक आत्महत्या बन जाती है।

इसके विपरीत अगर आपका यह हाल हो कि जब कोई मसला पेश आए और आप उसको अपने लिए एक चैलेंज समझें, तो उससे आपकी सोई हुई क्षमताएँ जागेंगी। आपके अन्दर हालात से मुक़ाबला करने का उत्साह पैदा होगा। पहली सूरत में आपका ज़ेह्न अगर नकारात्मक रुख़ पर चल रहा था तो अब आपका ज़ेह्न पूरी तरह सकारात्मक रुख़ पर चल पड़ेगा — इसी एक अमल में, मौजूदा दुनिया में कामयाबी और नाकामी का रहस्य छिपा है। इस दुनिया में जो व्यक्ति समस्याओं से शिकायत और विरोध का आहार ले, उसके लिए यहाँ बर्बादी के सिवा कोई और चीज़ मौजूद नहीं। इसके विपरीत जिस व्यक्ति का हाल यह हो कि समस्याएँ पेश आने के बाद उसका ज़ेहन उपाय तलाश करने में लग जाए, वह निश्चय ही कामया

निर्माण की ताक़त

रीडर्स डाइजेस्ट के फरवरी 1987 के अंक में एक लेख छपा था, जिसका शीर्षक था:

Dare to change your life
(अपने जीवन को बदलने का साहस करें)।

इस लेख में कई ऐसे उदाहरण दिए गए हैं जिनमें किसी व्यक्ति को शुरू में नाकामी मिली, उसे नुकसान और मुश्किलों का सामना करना पड़ा, लेकिन उसने हिम्मत नहीं हारी। उसने एक मौका खोने के बाद भी उम्मीद नहीं छोड़ी और अगला मौका तलाशता रहा। यही तरीका उसके लिए काम आया — पहली बार असफल होकर वह दूसरी बार कामयाब हो गया।

लेख के अंत में लेखक ने लिखा है कि जीवन दूसरा मौका लेने का नाम है। और इस दूसरे मौके का फायदा उठाने के लिए बस यही ज़रूरी है कि इंसान उस मौके को पहचान ले और हिम्मत के साथ उस पर अमल करे:

> Life is full of second chances. All we need for a second chance is the ability to recognize it and the courage to act.

जीवन दूसरे मौके को अपनाने का नाम है — यह एक सच्चाई है, जो हर इंसान और हर क़ौम दोनों पर लागू होती है। इतिहास इस बात का गवाह है। पहली बार इस्लाम को मक्का में मौका नहीं मिला, लेकिन बाद में इस्लाम ने मदीना के मौके को अपनाकर अपना इतिहास बना लिया। पश्चिमी क़ौमों को सलीबी युद्धों में सफलता नहीं मिली, तो उन्होंने बौद्धिक युग (intellectual age) को अपनाकर दोबारा कामयाबी हासिल की — और भी ऐसे कई उदाहरण हैं।

मौजूदा दुनिया में प्रायः ऐसा होता है कि आदमी पहले अवसर को खो देता है। कभी अपने ख़राब अनुभव की वजह से और कभी दूसरों की उद्दण्डता की वजह से। मगर पहले अवसर को खोने का मतलब एक अवसर को खोना है, न कि सारे अवसरों को खोना। पहला अवसर खोने के बाद

यदि आदमी मायूस न हो तो जल्दी ही वह दूसरा अवसर पा लेगा जिसको इस्तेमाल करके वह दोबारा अपनी मंज़िल पर पहुँच जाए।

जो मौके पहले ही दूसरों ने ले लिए हैं, उन्हें छीनने की कोशिश करना समझदारी नहीं है। समझदारी तो यह है कि जो मौके अब भी बचे हैं, उन पर ध्यान दिया जाए और उन्हें पाने की कोशिश की जाए।

13 अप्रैल 1989 के टाइम्स ऑफ़ इंडिया, (सेक्शन 2, पृष्ठ 4) में न्यूयॉर्क से एक रिपोर्ट छपी थी। उसका शीर्षक था: *सुपर कम्प्यूटर में अमेरिका से आगे बढ़ने की जापान की कोशिश* (Japan's bid to excel the US in Supercomputers)।

इस रिपोर्ट में कहा गया कि सुपर कम्प्यूटर के क्षेत्र में अमेरिका का लंबे समय से बना दबदबा अब नहीं माना जा सकता। अमेरिका की एक कंपनी के अनुभवी लोगों ने रिसर्च के बाद बताया कि जापान द्वारा बनाया गया एक नया सुपर कम्प्यूटर 1990 में बाज़ार में आ जाएगा। यह दुनिया की सबसे तेज़ मशीन होगी।

जापान ने इस नए कम्प्यूटर का नाम Sx-X रखा है। इसकी स्पीड इतनी तेज़ है कि यह एक सेकंड में साइंटिफिक गणनाओं के 20 मिलियन ऑपरेशन कर सकता है। यह जापानी कम्प्यूटर अमेरिका के सबसे तेज़ कम्प्यूटर से भी 25 प्रतिशत तेज़ है। इसके अलावा, इसकी दूसरी खूबियाँ यह हैं कि यह भरोसेमंद, काम में तेज़ और खर्च में कम है।

इस सुपर कम्प्यूटर का महत्त्व केवल साइन्टिफिक रिसर्च, तेल की तलाश और मौसम की भविष्यवाणी जैसी चीज़ों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसे नेशनल सिक्यूरिटी के लिए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा गया है। क्योंकि यह न्यूक्लियर हथियारों की तैयारी में बहुत ज्यादा इस्तेमाल किया जाता है।

नए जापानी कम्प्यूटर ने दुनिया को एक नए औद्योगिक दौर में पहुँचा दिया है। मौजूदा कम्प्यूटर, जो किसी ज़माने में 'आधुनिक' समझे जाते थे, अब पारम्परिक मात्र बन कर रह गए हैं। यहाँ तक कि जापान की इस ईजाद ने उसको फ़ौजी मैदान में भी उच्चता प्रदान कर दी है।

1945 में अमेरिका ने 'सुपरबम' बनाकर जापान को बर्बाद कर दिया था। लेकिन इसके बावजूद वह जापान से यह संभावना नहीं छीन सका कि वह 'सुपर कम्प्यूटर' बनाकर दोबारा एक नया जीवन पा सके और सिर्फ़ 45 साल में इतिहास की दिशा बदल दे। तोड़-फोड़ चाहे जितनी भी बड़ी हो, वह नए निर्माण के मौकों को खत्म नहीं कर सकती। और निर्माण की ताक़त हमेशा तोड़-फोड़ की ताक़त से ज़्यादा होती है।

कल्पना और हक़ीक़त

सऊदी अरब के शहर रियाद से निकलने वाली अरबी मासिक पत्रिका 'अल-फ़ैसल' (ज़ी क़अदा 1413 हिजरी, मई 1993 ई.) में एक लेख छपा था, जिसका नाम था अल इत्फ़ाल कल्बी। इस लेख में इसराइल के पहले के रक्षा मंत्री मोशे दायान (1915–1981) की एक टिप्पणी दी गई थी, जो उन्होंने अपने दुश्मन अरबों के बारे में कही थी। अरबी में यह बात कुछ यूँ लिखी गई है:

"अरब न सिर्फ़ दूसरों को धोखा देना चाहते हैं बल्कि खुद को भी धोखा देते हैं। और यह सब वे बिना सोचे-समझे करते हैं। वे हमेशा अपने पुराने बुज़ुर्गों की तारीफ़ करते रहते हैं—सलाहुद्दीन की, हतीन और यरमूक की लड़ाइयों की। और जब वे ऐसा करते हैं, तो हम उन पर हँसते हैं। क्योंकि वे खुद को अतीत की तारीफ़ों के आईने में देखते हैं, जबकि हम उन्हें आज की हक़ीक़त के आईने में देखते हैं। काश वे खुद से यह सवाल करते कि

वे हमेशा पुराने लोगों की बातें क्यों करते हैं। वजह यह है कि उन्हें आज के समय में कोई ऐसा इंसान नहीं मिलता जिसकी बात कर सकें।” (पृष्ठ 3)

यह बात सिर्फ़ अरबों की नहीं है, बल्कि आज की पूरी मुस्लिम दुनिया की यही हालत है। आज हर जगह के मुसलमान अपने गुज़रे हुए बुज़ुर्गों की बातें करके जी रहे हैं। जबकि बीते सूरमाओं की तारीफ़ों में जीना खुद के लिए तो नशे जैसा है और दूसरों के लिए मज़ाक की बात।

सही और बेहतर बात यह है कि स्वयं अपना हिसाब किया जाए। अपनी कमज़ोरियों और कोताहियों को मालूम करके उनको दूर करने की कोशिश की जाए। अपने पूर्वजों के कारनामों की चर्चा करके ख़ुश होना आदमी को केवल झूठे भ्रम का शिकार बनाता है। यह केवल समय को नष्ट करना है, न कि समय का कोई इस्तेमाल।

मोशे दायान का यह उदाहरण बहुत अर्थपूर्ण है कि मुसलमान अपने-आप को अपने अतीत के हिसाब से देखते हैं और हम उनको उनके वर्तमान के हिसाब से देखते हैं। इसी बात को एक पश्चिमी समीक्षक ने इस तरह बयान किया है कि मुसलमानों का केस वर्तमान ज़माने में पेरानोइया (Paranoia) का केस बन गया है।

पेरानोइक वह है जो ‘पिदरम सुल्तान बूद’ के मनोविज्ञान में जीने लगे। ऐसे लोग सदैव अपने बारे में गर्व का शिकार रहते हैं, मगर दूसरे लोगों से उन्हें इसके विरुद्ध अनुभव होता है, क्योंकि दूसरे लोग उनको उनके वर्तमान के अनुसार देखते हैं और उनके वर्तमान के हिसाब से उनके साथ व्यवहार करते हैं। परिणाम में ऐसे लोग नफ़रत और झुंझलाहट का शिकार हो जाते हैं, क्योंकि वे महसूस करते हैं कि लोग हमारी हैसियत के अनुसार हमारा सम्मान नहीं कर रहे हैं।

गुज़रे हुए लोगों की बड़ाई में जीना हमारी नज़र में केवल विनाश है, इसके सिवा और कुछ नहीं। इसमें एक समय में दो बड़ी हानियाँ छुपी हुई हैं।

इसका एक नुक़सान यह होता है कि जो लोग इस सोच का शिकार हो जाते हैं, वे अपनी सोचने और ख़ुद कुछ करने की ताक़त खो बैठते हैं। उनकी सोच पुराने लोगों की सोच में उलझी रहती है। वे अपने पूर्वजों के कामों को बढ़ा-चढ़ाकर बताने को ही काम करना समझ लेते हैं। ऐसे लोग कभी ख़ुद कोई काम करने वाले नहीं बन पाते।

दूसरा नुक़सान यह होता है कि जिन लोगों के बीच उन्हें रहना होता है, वे उनके बारे में हक़ीक़त से बहुत अलग राय बना लेते हैं। ये लोग उन्हें उनके आज के हाल के हिसाब से देखते हैं, इसलिए उन्हें ज़्यादा अहमियत नहीं देते। दूसरों का यह रवैया सही बात पर टिका होता है, लेकिन जो लोग इतिहास में जीते हैं, वे इससे अपने आपको छोटा समझने लगते हैं, और पूरी तरह मान लेते हैं कि बाकी सभी लोग उनके दुश्मन हैं।

इस मानसिकता के लोग या तो अमल नहीं करते या अगर वे अमल करते हैं, तो उनकी योजनाएँ हमेशा इस कल्पना पर आधारित होती हैं कि दूसरे लोग सब-के-सब उनके पक्ष में ज़ालिम और पक्षपाती हैं। ऐसी योजना वास्तविकता पर आधारित नहीं होती, और जो योजना वास्तविकता पर आधारित न हो, उसके लिए ख़ुदा की इस दुनिया में कामयाब होना भी आवश्यक नहीं है।

मूल समस्या

मदरसा इमदादुल इस्लाम (मेरठ) के सदर अध्यापक और शैखुल हदीस मौलाना शकील अहमद कासमी (उम्र 38 साल) से 18 दिसंबर 1993 को

दिल्ली में मुलाकात हुई। उन्होंने एक अनुभव बताया जो बहुत ही सीख देने वाला था।

उन्होंने बताया कि नवंबर 1992 में मेरठ के सदर बाज़ार इलाके के एक पढ़े-लिखे हिंदू, मिस्टर इन्द्रजीत सिंह अहलूवालिया, उनके मदरसे में आए। उन्होंने कहा कि वे अपने दो बेटों—गौरव अहलूवालिया और चार्ली अहलूवालिया—को उर्दू और अरबी भाषा सिखाना चाहते हैं। इसके लिए उन्होंने किसी शिक्षक की व्यवस्था करने को कहा। मौलाना कासमी ने उनसे पूछा कि वे अपने बच्चों को उर्दू और अरबी क्यों सिखाना चाहते हैं? इस पर उन्होंने जवाब दिया कि वे चाहते हैं कि उनके बच्चों की सोच खुली हो और वे संकीर्ण मानसिकता से ऊपर उठकर सोचें। बाद में पता चला कि मिस्टर इन्द्रजीत सिंह अहलूवालिया आर. एस. एस. से जुड़े हुए हैं और भारतीय जनता पार्टी के सक्रिय सदस्य भी हैं।

मौलाना शकील अहमद कासमी ने सोचा कि अगर मैं मदरसा के किसी छात्र को इस काम पर नियुक्त करूँ तो शायद वह ठीक से उसको अंजाम न दे सके। अतः उन्होंने फ़ैसला किया कि वे स्वयं ही इस काम को करेंगे। उन्होंने जब मिस्टर अहलूवालिया से यह बात कही तो उनको बहुत हैरत हुई। फिर भी मौलाना क़ासमी के आग्रह पर उन्होंने उसको कुबूल कर लिया। अब उन्होंने पूछा कि मौलाना साहब, हमको मासिक कितना देना होगा? मौलाना क़ासमी ने कहा कि कुछ नहीं। यह तो मेरे लिए एक ख़ुशी का काम है। मेरे लिए यही क़ीमत काफ़ी है कि एक ऐसे क्षेत्र में, जहाँ उर्दू ख़त्म हो रही है, वहाँ कुछ लोग उर्दू और अरबी जानने वाले पैदा हो जाएँगे। मतलब यह कि कुछ देर की बहस के बाद तय हो गया कि मौलाना कासमी उनके घर पर जाकर उनके बच्चों को उर्दू पढ़ाया करेंगे।

मौलाना शकील अहमद कासमी ने उन बच्चों को उर्दू सिखाने के लिए मौलाना इस्माइल मेरठी की रीडर से पढ़ाना शुरू किया। यह पढ़ाई 1 दिसंबर 1992 को शुरू हुई और काफी लंबे समय तक चलती रही। इस दौरान इन हिंदू बच्चों ने कई उर्दू रीडरें पूरी कर लीं। अब वे ठीक तरह से उर्दू लिखना सीख गए हैं और उर्दू अखबार (जैसे क़ौमी आवाज़) आसानी से पढ़ सकते हैं। अब उन्होंने "मिनहाजुल अरबी" किताब से अरबी पढ़ना शुरू कर दिया है। इस समय वे इस किताब का दूसरा भाग पढ़ रहे हैं।

उनके घर में उर्दू की इतनी चर्चा होने लगी कि खुद मिस्टर इन्द्रजीत सिंह अहलूवालिया ने भी मौलाना कासमी से उर्दू पढ़ना शुरू कर दिया। उन्होंने उर्दू की किताबों के साथ-साथ बाज़ार से एक भारी-भरकम "फीरोज़ुल लुगात" (उर्दू डिक्शनरी) भी खरीद ली, ताकि वह उर्दू सीखने में उनकी मदद कर सके।

इस शिक्षा का और अधिक असर यह हुआ कि अहलूवालिया फ़ैमिली में 'उर्दू तहज़ीब' आना शुरू हो गई। वे लोग बातचीत में इंशाअल्लाह, माशाअल्लाह, ख़ुदा हाफ़िज़ जैसे शब्दों को इस्तेमाल करने लगे।

मिस्टर अहलूवालिया हर तरह मौलाना शकील अहमद कासमी की सेवा करते रहते हैं। वे हर अवसर पर उनके साथ सहयोग के लिए तैयार रहते हैं। जैसे मिस्टर अहलूवालिया एक हिन्दू इलाके में रहते हैं, अतः मौलाना क़ासमी जब उनके यहाँ से पढ़ा कर निकलते हैं, तो वे अपने बच्चों को उनके साथ दूर तक भेजते हैं, ताकि लोग उन्हें अजनबी महसूस न करें।

यह एक उदाहरण है जो यह दिखाता है कि आज के हिन्दुस्तान में हमारी असली समस्या क्या है। आज की हालत में हमारी समस्या 'हिन्दू साम्प्रदायिकता' नहीं है, बल्कि असली समस्या हिन्दू और मुस्लिम के बीच की दूरी है। अगर किसी भी तरह से हिन्दू और मुस्लिम एक-दूसरे से मिलना-

जुलना शुरू कर दें, तो सारी परेशानियाँ ऐसे खत्म हो जाएँगी जैसे वे कभी थीं ही नहीं।

दूरी से गलतफहमियाँ पैदा होती हैं, जबकि नज़दीकी से मन साफ़ होता है। आमतौर पर यह देखा गया है कि जहाँ हिन्दू और मुस्लिम के बीच दूरी बढ़ी, वहाँ गलतफहमियाँ भी आ गई। और जहाँ मिलना-जुलना बढ़ा, वहाँ अपने आप अच्छे रिश्ते बन गए।

भारत की आज़ादी से पहले हिन्दुस्तान कृषि युग में था। उस समय कृषि-जीवन के अन्तर्गत स्वाभाविक रूप से हिन्दुओं और मुसलमानों में बार-बार मिलने की सूरतें पैदा होती थीं। आज़ादी के बाद हिन्दुस्तान में औद्योगिक युग आ गया। औद्योगिक युग की ज़रूरतों के तहत ख़ानदान बिखर गए। लोग इधर-उधर जाने लगे। इस तरह मिली-जुली ज़िन्दगी की व्यवस्था टूट गयी। पिछले सम्बन्ध बाक़ी नहीं रहे। मौजूदा ज़माने में दोनों सम्प्रदायों में दूरी का सबसे बड़ा कारण यही है।

इसका समाधान यह है कि मुसलमान बड़ी संख्या में शिक्षा संस्थानों में जाएँ। वे आधुनिक आर्थिक और सामाजिक कामों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लें और ऐसा व्यवहार दिखाएँ जैसा कि मौलाना शकील अहमद क़ासमी की ऊपर बताई गई घटना में देखने को मिला। इसके बाद इंशाअल्लाह फिर से मेल-जोल और आपसी मेल-मिलाप का वह पुराना दौर लौट आएगा।

संघर्ष से बचिए

मैं एक बार कश्मीर गया था। एक दिन हम लोग शहर से बाहर वादी में गए, जहाँ एक तरफ़ ऊँचे-नीचे पहाड़ थे और दूसरी तरफ़ खुली वादी फैली हुई थी। वहाँ बहुत से पानी के झरने गिर रहे थे। पहाड़ों की बर्फ़ पिघलती है और

उसका पानी चश्मों की तरह बहकर मैदान में आता है, फिर धीरे-धीरे बहता हुआ दरिया में मिल जाता है। के नाले

अपने साथियों के साथ मैं एक झरने के किनारे बैठ गया। मैंने देखा कि जब पानी बहता हुआ आगे बढ़ता है, तो उसके रास्ते में बार-बार पत्थर के टुकड़े आते हैं। ऐसे मौके पर पानी क्या करता है? वह पत्थर को हटाने या तोड़ने की कोशिश नहीं करता, बल्कि दो धाराओं में बंटकर पत्थर के दाएँ और बाएँ से गुज़रता हुआ आगे बढ़ जाता है।

मैंने इस घटना पर विचार किया तो इसमें एक गहरी शिक्षा छुपी हुई थी। मैंने अपने साथियों से कहा कि देखिए, यह बहता हुआ पानी किस तरह अपना रास्ता निकाल रहा है। यह रुकावटों से लड़ता नहीं, बल्कि रुकावटों को अवॉइड करते हुए अपना रास्ता बना लेता है। यह प्रकृति का सन्देश है। प्रकृति इन बहते हुए झरनों के ज़रिए इंसान को यह सन्देश दे रही है कि अगर तुम्हारे रास्ते में कोई रुकावट आ जाए तो उससे टकराने की कोशिश न करो, बल्कि उसके बाज़ू की तरफ से अपना रास्ता बना लो।

तमाम दुनिया की सड़कों पर यही झरनों वाला नियम प्रचलित है। इन सड़कों पर एक समय में बहुत-सी सवारियाँ गुज़रती हैं। हर सवारी यह करती है कि वह दूसरी सवारियों से टकराए बिना दायें या बायें मुड़कर अपना रास्ता बना लेती है। अगर ये सवारियाँ इस नियम को न मानें तो सड़क- सड़क न रहे, बल्कि वह एक विशाल कब्रिस्तान बन जाए।

झरनों की यह शिक्षा मेरे जीवन के लिए एक इन्किलाबी शिक्षा थी। उसने मुझको जीवन का रहस्य बता दिया। उसके बाद मैंने इसी तरीके को अपने जीवन में अपना लिया और दूसरों को भी इसी की नसीहत करने लगा।

इस दुनिया में सामाजिक जीवन एक व्यस्त सड़क जैसा है। हर आदमी सड़क पर अपनी गाड़ी दौड़ाते हुए इसी नसीहत पर अमल करता है, जिसकी घोषणा बहते हुए झरनों के ज़रिए की जा रही है। अब इतना और करना है कि

इसी तरीके को जीवन के शेष मामलात में भी अपना लिया जाए। कामयाब जीवन और शान्तिपूर्ण समाज बनाने का यही एकमात्र तरीका है।

किसी व्यक्ति के सामने जब भी कोई बाधा आती है, या कोई दूसरा इंसान उसके रास्ते में अड़चन बनता है, तो उसके दिमाग में सबसे पहले यह ख्याल आता है कि इस रुकावट या उस व्यक्ति को अपने रास्ते से हटा दिया जाए। वह सोचता है कि जब तक ये बाधाएँ दूर नहीं होंगी, उसका सफर पूरा नहीं होगा।

यह सोच सही नहीं है। जिस तरह बहते हुए झरनों के रास्ते में हजारों पत्थर होते हैं, वैसे ही जीवन के सफर में भी अनगिनत रुकावटें आती हैं। अगर शर्त यह हो कि पहले सारी रुकावटें हटाओ, फिर सफर शुरू करो, तो ऐसा सफर कभी शुरू नहीं होगा। क्योंकि एक के बाद एक रुकावटें आती रहेंगी, और आदमी हर बार उनसे लड़ता रहेगा, जब तक उसका आखिरी समय आ न जाए।

ऐसी हालत में अमली सूरत यह है कि रुकावटों को धकेलते हुए अपना सफ़र जारी रखा जाए। आदमी जब इस नज़र से देखेगा तो उसको मालूम होगा कि रुकावटों की एक हद है। रुकावटों के बावजूद चारों तरफ़ खुले हुए स्थान मौजूद हैं। आदमी अगर अपनी निगाह को रुकावटों से हटा कर इधर-उधर देखे तो अपने क़रीब ही वह ऐसा रास्ता पा लेगा जिससे गुज़र कर वह अपनी मंज़िल की तरफ़ रवाना हो जाए।

वर्तमान संसार में इंसान के लिए जो विकल्प है वह टकराव और जीवन के बीच में नहीं है, बल्कि बिना टकराव के जीवन और तबाही के बीच में है। अब यह फ़ैसला हर इंसान को करना है कि वह दोनों में से किस विकल्प का चयन करता है।

जीवन की शिक्षा

सद्दाम हुसैन (इराक़ के राष्ट्रपति) ने 2 अगस्त 1990 को अपनी फ़ौजें कुवैत में भेजकर उसपर कब्जा कर लिया। यह स्पष्ट रूप से एक आक्रामक क़दम था। इसके बाद 6 अगस्त को बगदाद में अमेरिका के कार्यवाहक दूत जोज़फ़ ने सद्दाम हुसैन से मुलाकात की और अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश का संदेश पहुँचाया। अमेरिकी दूत ने शिष्टाचार के साथ सद्दाम को चेतावनी दी कि उनके द्वारा किया गया हमले का कार्य सही नहीं है। उन्होंने कहा कि कुवैत से जुड़े मतभेदों को बातचीत के ज़रिए ही हल किया जाना चाहिए था, न कि ताकत के प्रयोग से।

सद्दाम हुसैन उस समय विजय के उत्साह में थे। उन्होंने अमेरिकी दूत को जवाब दिया, जो अंग्रेज़ी रिपोर्ट में इस प्रकार लिखा गया था:

> "Give my regards to President Bush and tell him that Al-Sabah family has now become history."

> "राष्ट्रपति बुश को मेरा सलाम कहिए और उन्हें बताइए कि अल-सबाह परिवार अब इतिहास बन चुका है।"

सद्दाम हुसैन ने अगले दिन, 7 अगस्त को यह घोषणा भी कर दी कि कुवैत अब स्वतंत्र राज्य नहीं रहा, बल्कि इराक़ का 19वाँ राज्य बन गया है।

मगर कहानी यहीं ख़त्म नहीं। उसके बाद कुवैत की प्रार्थना पर अमेरिका सीधे सामने आ गया। उसने सद्दाम हुसैन को वार्निंग दी कि वह 15 जनवरी, 1991 ई. तक अपनी फ़ौजें कुवैत से निकाल कर वापस ले जाए। मगर सद्दाम हुसैन ने इस अल्टीमेटम की अवहेलना कर दी। उसके बाद 17 जनवरी, 1991 ई. को अमेरिका ने इराक़ के ऊपर ज़बरदस्त हमला किया।

सद्दाम की फ़ौजें उसके बचाव में नाकाम रहीं। 1 मार्च, 1991 ई. को यह लड़ाई इराक़ की सबसे बुरी पराजय पर ख़त्म हो गई।

उसके बाद अमेरिका ने चारों तरफ़ से इराक की नाकाबन्दी कर दी। इस नाकाबन्दी ने इराक की अर्थव्यवस्था को तबाह कर दिया। आख़िरकार सद्दाम हुसैन ने मजबूर होकर अमेरिका की तमाम माँगों को मान लिया। 10 नवम्बर, 1994 ई. को सद्दाम हुसैन की अगुवाई में इराकी पार्लियामेण्ट का अधिवेशन हुआ। उसमें आम सहमति से यह प्रस्ताव पास किया गया कि इराक़ एक आजाद रियासत (Independent State) के रूप से कुवैत को मान्यता देता है।

उस समय के इराक़ के डिप्टी प्राइम मिनिस्टर तारिक अज़ीज़ ने नवंबर 1994 में संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव से न्यूयॉर्क में मुलाकात की और उन्हें लिखित रूप में इराक़ के इस फ़ैसले से अवगत कराया। (टाइम्स ऑफ़ इंडिया, 15 नवंबर 1994)

सद्दाम हुसैन कुवैत को इतिहास का हिस्सा बनाना चाहते थे, लेकिन वे खुद इतिहास का हिस्सा बन गए। इस घटना से उन्होंने साबित कर दिया कि वे केवल अपने वर्तमान को जानते थे, जबकि अपने भविष्य के बारे में वे अंतिम क्षण तक अनजान रहे।

मौजूदा दुनिया में हर इंसान की यही कहानी है। हर व्यक्ति अपने आज को समझता है, लेकिन अपने कल को नहीं जान पाता। उसे अपनी कार्यवाही का ज्ञान होता है, लेकिन खुदा के फरिश्तों द्वारा उसके विरुद्ध की जा रही कार्रवाई का उसे पता नहीं होता। वह सोचता है कि वह दूसरों के बारे में निर्णय लेने की स्थिति में है, जबकि सच यह है कि वह स्वयं अपने बारे में निर्णय लेने की शक्ति से भी वंचित है।

इस घटना में यह शिक्षा है कि दूसरे की ज़मीन पर किसी के लिए अपनी प्रगति का झण्डा गाड़ना सम्भव नहीं। दूसरे की सम्पत्ति को छीन कर अपना क्षेत्रफल बढ़ाने की योजना इस दुनिया में कामयाब नहीं हो सकती। इस दुनिया में हर आदमी को ज़िन्दा रहने और प्रगति करने का अधिकार है, लेकिन कोई व्यक्ति दूसरे को मिटा कर अपनी प्रगति में वृद्धि नहीं कर सकता।

घटनाएँ बताती हैं कि अपनी हद के अन्दर रहते हुए जो प्रगति हासिल की जाती है वह प्रगति सुदृढ़ होती है और वह निरन्तर कायम रहती है। इसके विपरीत जो आदमी दूसरे का हिस्सा छीन कर अपने को उन्नतिशील बनाना चाहे, उसकी उन्नति में स्थायित्व न होगा। ऐसा आदमी आख़िरकार दुगुनी महरूमी से दो- चार होता है। वह अपने पास जो है उसे भी खो देता है और दूसरे का हिस्सा तो उसे मिलने वाला ही न था।

हर व्यक्ति, चाहे उसकी हैसियत मामूली हो या वह राजनीतिक सत्ता का मालिक हो, जीवन के इस नियम से अलग नहीं हो सकता। कोई भी इतना शक्तिशाली नहीं है कि वह इस नियम से बच सके या इसे अपने ऊपर लागू न होने दे। यह नियम न केवल एक व्यक्ति के लिए बल्कि सभी के लिए बराबर और अटल है।

समय बहुत क़ीमती है

मैंने पहले अपना समय बर्बाद कर दिया था, अब समय मुझे बर्बाद कर रहा है। अगर आपने अपने पिछले समय का सही इस्तेमाल नहीं किया, तो आप आगे आने वाले समय का भी ठीक से इस्तेमाल नहीं कर पाएँगे। इस तरह आपकी हालत और बिगड़ती जाएगी।

समय किसी भी इंसान की सबसे कीमती चीज़ है। समय इसलिए मिला है कि इंसान इसका सही इस्तेमाल करके खुद को कामयाबी के लायक बना सके। जो इंसान समय को बर्बाद करता है, वह सिर्फ़ समय नहीं बल्कि खुद को भी बर्बाद करता है। क्योंकि ऐसी लापरवाही का नुकसान किसी और को नहीं, बल्कि उसी को होता है।

जो समय आपको मिला है उसको या तो तैयारी में इस्तेमाल कीजिए या अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संघर्ष में। यही समय का सही इस्तेमाल है। यदि ऐसा है कि आप न तैयारी में लगे हुए हैं और न उद्देश्य की प्राप्ति के संघर्ष में, तो इसका मतलब यह है कि आप अपने समय को नष्ट कर रहे हैं।

मिले हुए समय को नष्ट करना निस्सन्देह सबसे बड़ी हानि है। यह ऐसी हानि है जिसकी कोई क्षतिपूर्ति सम्भव नहीं। आप खोई हुई दौलत को दोबारा कमा सकते हैं, मगर आप खोए हुए समय को दोबारा लौटाकर अपनी तरफ़ वापस नहीं ला सकते।

समय दौलत है, बल्कि समय ही दौलत है। समय के द्वारा आप दूसरी चीज़ों को हासिल कर सकते हैं, मगर आप दूसरी चीज़ों के द्वारा समय को ख़रीद नहीं सकते। इसलिए आपको चाहिए कि समय के मामले में सबसे ज़्यादा चौकन्ना रहें।

वक़्त तेज़ी से बीत रहा है, इसलिए वक़्त को पकड़िए, क्योंकि वक़्त खुद आपको पकड़ने नहीं आएगा। आपको ही उसे पकड़ना होगा।

जो इंसान समय को खो देता है, उसके हिस्से में आखिर में सिर्फ़ यही आता है कि वह समय को बीतते हुए देखे, लेकिन इससे फायदा न उठा पाता।

भविष्य को अपना निशाना बनाएं

एक लैटिन लेखक प्यूबिलस साइरस (Pubilius Syrus) गुज़रा है। वह पहली सदी ईसा-पूर्व का है। उसका जन्म रोमन काल में शाम (सीरिया) के इलाके में हुआ और उसकी मृत्यु रोम में हुई। उसका एक कथन अंग्रेज़ी अनुवाद में इस तरह है:

> "The wise man guards against the future as if it were the present."
>
> (समझदार आदमी भविष्य की ऐसे तैयारी करता है जैसे वह वर्तमान हो।)

नादान आदमी की नज़र सिर्फ़ आज पर होती है, जबकि समझदार आदमी की नज़र भविष्य पर होती है। नासमझ इंसान आज के हालात में जब कोई परेशानी देखता है, तो उससे लड़ने के लिए तुरंत खड़ा हो जाता है। लेकिन समझदार आदमी समझदारी से काम लेता है — वह सोचता है कि अगर हम आज लड़ाई करें, तो उसका नतीजा कल क्या होगा।

मूर्ख इंसान आज को देखकर काम करता है, जबकि अक्लमंद इंसान भविष्य को ध्यान में रखते हुए अपने काम की योजना बनाता है।

हर काम अपने नतीजे के हिसाब से भविष्य की घटना है। काम आज किया जाता है, मगर उसका नतीजा हमेशा बाद में निकलता है। इसलिए यही सही बात है कि व्यावहारिक काम को भविष्य के निकष से जाँचा जाए। आज की कार्रवाई के उचित या अनुचित होने का फ़ैसला उस हिसाब से किया जाए कि कार्रवाई जब अपने अंजाम पर पहुँचेगी तो उसका परिणाम किस सूरत में हमारे सामने आएगा।

एक व्यक्ति को एक भिड़ ने काट लिया। अब वह गुस्सा होकर ऐसा करे कि भिड़ों को सज़ा देने के लिए भिड़ के छत्ते में अपना हाथ डाल दे। अगर कोई आदमी ऐसा करे तो उसके बाद उसकी यह शिकायत ग़लत होगी कि पहले तो केवल एक भिड़ ने उसको मामूली तरीके पर काटा था, अब सैकड़ों भिड़ें उससे लिपट गईं और उसके सारे शरीर को डंक मार मार घायल कर दिया।

यह दुनिया समझदार लोगों के लिए है। नासमझ लोगों का हाल यह होता है कि वे बिना सोचे-समझे कोई काम कर बैठते हैं, और जब उसका बुरा नतीजा सामने आता है, तो उसके खिलाफ़ प्रदर्शन करने को तैयार हो जाते हैं।

'आज' का सही इस्तेमाल का मतलब यह नहीं कि आज को कुर्बान कर दिया जाए, बल्कि यह है कि आज का सही इस्तेमाल किया जाए। जो लोग इस बात को समझते हैं, वही इस दुनिया में बड़ी कामयाबी पाते हैं।

एक पश्चिमी विचारक ने कहा है:

> "A good soldier lives to fight for the second day."
>
> (अच्छा सिपाही पहले ही दिन लड़कर मरता नहीं, बल्कि ज़िंदा रहता है ताकि अगले दिन भी लड़ सके।)

यह बात सिर्फ़ बड़ी-बड़ी जंगों के लिए नहीं है, बल्कि रोज़मर्रा की ज़िंदगी में होने वाले आम टकरावों के लिए भी है। अगर किसी से आपकी अनबन हो जाए और आप तुरंत उससे आख़िरी लड़ाई के लिए तैयार हो जाएँ, तो आप अच्छे सिपाही नहीं माने जाएँगे। ऐसे लोग अपनी ज़िंदगी में कोई बड़ी सफलता हासिल नहीं कर सकते।

इसकी वजह यह है कि अधिकांश हालात में आदमी 'पहले दिन' ज़्यादा प्रभावी लड़ाई लड़ने की पोज़िशन में नहीं होता। इसलिए समझदार वह है जो पहले दिन लड़ाई को एवॉइड करे; वह लड़ाई के मैदान से हट कर अपने-आप को मज़बूत और सुदृढ़ बनाने की कोशिश करे; ताकि या तो उसके मुक़ाबले में उसका विरोधी इतना कमज़ोर हो जाए कि वह लड़ाई के बिना हथियार डाल दे, या वह स्वयं इतना ताक़तवर हो जाए कि हर लड़ाई कामयाबी के साथ जीत सके।

इस उसूल की सबसे अच्छी मिसाल इस्लाम का इतिहास है। पैग़ंबर इस्लाम ﷺ ने अपनी पैग़ंबरी की ज़िंदगी का ज़्यादातर हिस्सा मक्का में बिताया। वहाँ आपके विरोधियों ने हर तरह का ज़ुल्म किया, लेकिन आपने कभी उनसे टकराव नहीं किया। आपने हमेशा सब्र और समझदारी से काम लिया। जब आप मदीना की तरफ़ हिजरत कर गए और वहाँ भी दुश्मनों ने ज़ुल्म किया, तो आपने अपने लोगों को संगठित किया और उनसे जंग की। इसके बाद हुदैबिया के मौके पर एक बार फिर आपने जंग से बचना पसंद किया। और फिर जल्दी ही वह वक़्त आया जब दुश्मनों ने बिना किसी लड़ाई के हथियार डाल दिए और अपनी हार मान ली।

'पहले दिन' आपने दुश्मन के विरुद्ध धैर्य से काम लिया। 'दूसरे दिन' आपने दुश्मन से सशस्त्र मुकाबला किया और उसके ऊपर कामयाबी हासिल की। हुदैबिया के 'दूसरे दिन' तो मुकाबले की नौबत ही नहीं आई। दुश्मन ने बिना मुकाबला किए हार मान कर अपने हथियार रख दिए।

चुनौती योग्यता बढ़ाती है

अमेरिकी पत्रकार ब्रूस वान वूर्स्ट (Bruce Van Voorst) ने जंगी रिपोर्टर के तौर पर पहचान बनाई है। उन्होंने डॉमिनिकन रिपब्लिक की जंग,

ईरान में इन्कलाबियों की शाह के खिलाफ़ जंग, इराक़ और ईरान की जंग और 1991 ईस्वी की खाड़ी जंग में सीधे युद्ध के मैदान में पहुँचकर रिपोर्टिंग की है।

टाइम्स मैग्ज़ीन (4 फरवरी, 1991) में वान वूर्स्ट के कुछ अनुभव प्रकाशित हुए हैं। उन्होंने जो बातें कहीं, उनमें से एक बात जंग के समय सैनिकों की विशेषता (quality) और ईमानदारी (integrity) से जुड़ी थी। उन्होंने कहा कि जब युद्ध चल रहा होता है, तो सैनिक हैरान कर देने वाली कार्यकुशलता दिखाते हैं। वे मुश्किलों की परवाह किए बिना अपना फ़र्ज निभाते हैं:

> In battle there are no ordinary soldiers; they are all extraordinary. (p. 4)
>
> “जंग के समय ये सैनिक आम सैनिक नहीं रहते, वे सभी असाधारण बन जाते हैं”

अमेरिकी पत्रकार ने जो बात फ़ौजियों के बारे में कही, वह हर इंसान और हर मुकाबले के लिए समान रूप से सही है। इंसान के अन्दर जन्म से ही असंख्य योग्यताएँ हैं। सामान्य हालात में ये योग्यताएँ सोई हुई रहती हैं। मगर जब कोई ख़तरा पेश आता है, जब चैलेंज की स्थिति सामने आती है, तो अचानक इंसान की तमाम सोई हुई योग्यताएँ जाग उठती हैं। उससे पहले अगर उसके ‘पावर हाउस’ का केवल एक बल्ब जल रहा था तो अब उसके तमाम बल्ब एक साथ जल उठते हैं।

अब उसकी बुद्धि ज़्यादा गहरी सोच का सुबूत देती है। उसका शरीर अधिक ताकतों के साथ सक्रिय हो जाता है। उसकी पूरी हस्ती एक हीरो की भूमिका के लिए तैयार हो जाती है। चैलेंज कमज़ोर इंसान को ताकतवर इंसान बना देता है। वह नादान आदमी को होशियार आदमी बना देता

है। चैलेंज देखने में एक रुकावट है, मगर अपने नतीजे के हिसाब से वह उच्चतर प्रगति की सबसे कामयाब सीढ़ी है। मुकाबला पेश आने से पहले हर इंसान एक सामान्य इंसान है, मगर मुकाबला पेश आने के बाद हर इंसान असाधारण इंसान बन जाता है।

जहाँ कोई स्कोप नज़र नहीं आता, वहीं सबसे ज़्यादा स्कोप होता है। जहाँ देखने में कोई अवसर नहीं दिखाई देता, वहीं इंसान के लिए और भी बड़े अवसर छुपे होते हैं।

एक मुस्लिम नौजवान हैं, जिनके कुछ रिश्तेदार अमेरिका में रहते हैं। वे अमेरिका गए, वहाँ पढ़ाई की, और दो साल तक वहाँ नौकरी भी की। फिर उनके मन में यह विचार आया कि अपने देश वापस लौटें और यहीं अपना जीवन बनाएं। यह सोचकर वे भारत लौट आए।

मेरी उनसे मुलाक़ात हुई, तो उन्होंने कहा कि भारत आकर वे मानसिक उलझन में पड़ गए हैं। यहाँ उनके दोस्त और रिश्तेदार कह रहे हैं कि उन्होंने बहुत बड़ी गलती की — अमेरिका छोड़कर हिन्दुस्तान आना समझदारी नहीं थी। वहाँ उन्हें तरक़्क़ी के बड़े-बड़े मौके मिल सकते थे, जबकि यहाँ उनके लिए कोई स्कोप नहीं है।

मैंने जवाब दिया कि आपके दोस्त और रिश्तेदार सब उल्टी बातें कर रहे हैं। हिन्दुस्तान में आपके लिए प्रगति के वे तमाम अवसर हैं जो अमेरिका में हैं, बल्कि आप अमेरिका से भी ज़्यादा बड़ी प्रगति यहाँ कर सकते हैं।

असल बात यह है कि प्रगति का सम्बन्ध दो चीज़ों से है। एक बाहरी अवसर, दूसरा आन्तरिक सम्भावनाएँ। बाहरी अवसरों से तात्पर्य वे अवसर हैं जो आपके वजूद से हटकर बाहरी दुनिया में पाए जाते हैं। आन्तरिक सम्भावनाओं से तात्पर्य वह स्वाभाविक योग्यता है जो आपके ज़ेहन और आपके जिस्म के अन्दर ईश्वर ने रखी हुई है।

अक्सर लोग दुनिया के बाहरी मौकों पर ध्यान देते हैं। इसलिए वे यह कह देते हैं कि फलाँ देश में मौके हैं और फलाँ देश में नहीं हैं। लेकिन तरक़्क़ी के लिए इससे भी ज़्यादा अहमियत उन काबिलियतों की होती है जो हर इंसान को कुदरत से मिली होती हैं। ऐसा कोई इंसान नहीं जिसे ये काबिलियतें न मिली हों।

जब ज़िंदगी की मुश्किलें इंसान को चुनौती देती हैं, तब उसकी छुपी हुई काबिलियतें सामने आने लगती हैं। हालात का झटका इनको जगा कर सक्रिय कर देता है। और यही सक्रियता किसी इंसान की ज़िंदगी में उसकी तरक़्क़ी के लिए बहुत मायने रखती है।

अमेरिका में ये स्कोप है कि वहाँ बाहरी मौके ज़्यादा हैं। और हिन्दुस्तान में ये स्कोप है कि यहाँ चुनौती भरे हालात मिलते हैं, जो इंसान की अंदरूनी काबिलियतों को पूरी तरह जगा देते हैं। बाहरी मौके वाले स्कोप के मुकाबले में यह अंदरूनी जागरूकता वाला स्कोप यक़ीनन ज़्यादा कीमती है।

गुस्से का जवाब पानी से

35 वर्ष के मुहम्मद अफ़ज़ल लादीवाला मुम्बई के रहने वाले हैं। 24 फरवरी, 1991 ईस्वी की मुलाक़ात में उन्होंने अपने साथ घटी एक घटना सुनाई। 22 जनवरी, 1991 ईस्वी को रंग भवन (धोबी तालाब) में एक सांस्कृतिक कार्यक्रम हुआ। अफ़ज़ल साहब ने उसमें हिस्सा लिया। यह कार्यक्रम रात साढ़े ग्यारह बजे खत्म हुआ। इसके बाद वे मुम्बई वी.टी. पहुँचे और वहाँ से ट्रेन द्वारा कुरला पहुँचे। उस वक़्त करीब साढ़े ग्यारह बज चुके थे। स्टेशन से उनके घर तक लगभग दो किलोमीटर की दूरी थी। उन्होंने सोचा कि थ्री-व्हीलर से घर जाएँ। थ्री-व्हीलर का इंतज़ार करते हुए वे सड़क पर खड़े हो गए। तभी एक थ्री-व्हीलर आता दिखा। उस समय उनके मुँह में पान था।

जल्दी में थ्री-व्हीलर को आवाज़ देने के लिए उन्होंने पान थूका। संयोग से ठीक उसी वक़्त एक यात्री पास में आ गया और अफ़ज़ल साहब का थूका हुआ पान सीधे उसके पैरों पर गिर गया।

मुसाफ़िर तुरन्त आग-बबूला हो गया। क्रोध में आकर उसने कहा कि पान खाते हो और पान खाने की तमीज़ भी नहीं ! मगर अफ़ज़ल साहब, जो अल-रिसाला (मासिक पत्रिका) के स्थायी पाठक हैं, उन्होंने गर्म शब्दों का जवाब ठण्डे शब्दों से दिया। उन्होंने कहा कि मैं अपनी ग़लती स्वीकार करता हूँ। पान खाना भी गलत, और पान खाकर मैंने जो कुछ किया वह भी गलत। वह आदमी तेज़ होता गया। मगर अफ़ज़ल साहब ने उसकी उत्तेजित बातों का जवाब देने के बजाय कहा कि मुझे माफ़ कीजिए। उसने कहा कि यह अच्छा है कि किसी के साथ कुछ भी कर दो, उसके बाद कहो कि माफ़ कर दो।

अफ़ज़ल साहब ने कहा कि भाई, मैं रस्मी माफ़ी नहीं माँग रहा हूँ। मैं दिल से माफ़ी माँग रहा हूँ। अब आप मुझे अनुमति दीजिए कि मैं आपके पाँव धोऊँ। अफज़ल साहब ने जब पाँव धोने की बात कही तो आदमी कुछ नर्म पड़ा। कुछ और बातों के बाद आख़िरकार वह राज़ी हुआ कि अफ़ज़ल साहब उसका पाँव धो दें। क़रीब ही एक चाय का होटल था। अफ़ज़ल साहब तुरन्त उसके पास गए और कहा कि 'चचा, एक गिलास पानी देना।' अफ़ज़ल साहब गिलास लेकर आए तो आदमी बिल्कुल ठण्डा हो चुका था। उसने कहा कि मुझको दीजिए, मैं स्वयं अपने हाथ से धो लेता हूँ।

उस आदमी ने अपने पैर धोने के लिए हाथ में गिलास लेकर पानी डाला। एक गिलास से पैर पूरी तरह साफ़ नहीं हुआ, तो अफ़ज़ल साहब दौड़कर गए और एक और गिलास पानी ले आए। जब तक उसका पैर पूरी तरह साफ़ नहीं हो गया, तब तक वे लगे रहे। यह घटना रेलवे स्टेशन के बाहर हुई। बातचीत के दौरान अफ़ज़ल साहब ने उस आदमी से कहा: "भाई

साहब, आप तो मुसलमान हैं, और अगर आप ग़ैर-मुस्लिम होते, तब भी मुझे यही करना पड़ता, क्योंकि इस्लाम ने हमें यही सिखाया है।”

यह सुनकर वह आदमी अफ़ज़ल साहब से लिपट गया। उसने कहा: “भाई साहब, मैं ग़ैर-मुस्लिम ही हूँ। लेकिन आप जैसे मुसलमान मुझे ज़िंदगी में पहली बार मिले हैं। अगर सारे मुसलमान आप जैसे हो जाएँ, तो सारा झगड़ा ही ख़त्म हो जाए।”

अब वह आदमी बिल्कुल बदल गया। पहले उसके अन्दर गुस्सा और बदला भड़क उठा था। अब वह लज्जित होकर अफ़ज़ल साहब से कहने लगा कि भाई, मुझको माफ़ करना। आपको मैंने बड़ी तकलीफ़ दी। मेरी वजह से आपको पानी लाना पड़ा। आपका थ्री-व्हीलर भी छूट गया। अफ़ज़ल साहब ने कहा कि मुझको लज्जित न कीजिए। इस मामले में असल गलती तो मेरी थी। और मैं जो पानी लाया, वह मेरा कर्तव्य था जो मैंने किया। घटना के शुरू में जो आदमी दूसरे को गलत बता रहा था, घटना के आख़िर में वह स्वयं अपनी गलती मानकर लज्जित हो गया और माफ़ी माँगने लगा।

जब यह घटना पेश आयी, उस समय मुम्बई के इलाके जोगेश्वरी में बड़ा भारी साम्प्रदायिक तनाव मौजूद था। यह जगह कुरला से लगभग 15 किलोमीटर की दूरी पर है। इन हालात में अगर अफ़ज़ल साहब उत्तेजना के जवाब में उत्तेजना का अन्दाज़ अपनाते तो वही होता जो इस तरह के अवसर पर दूसरी बहुत-सी जगहों पर हो चुका है अर्थात् साम्प्रदायिक दंगा और जान व माल की तबाही। इसके बाद शायद ऐसा होता कि अफ़ज़ल साहब, ख़ुदा न करे, घर पहुँचने के बजाय अस्पताल ले जाए जाते और इलाके में हिन्दू-मुस्लिम दंगा भड़क कर सैकड़ों ख़ानदानों को बर्बाद कर देता।

अफ़ज़ल साहब ने यह घटना सुनाने के बाद कहा: उस समय मुझे रिसाले की बात याद आ गई। यही रिसाले से मिली सोच का असर था कि मैं गुस्से वाले मौके पर खुद को गुस्से से बचा पाया, और इसी वजह से

उसके बुरे नतीजों से भी बच सका। मेरे गिलास भर पानी ने सैकड़ों लोगों को उस भयानक अंजाम से बचा लिया, जिसमें उनका खून सड़कों पर बह सकता था।

हम कुछ शब्द बोलकर किसी इंसान के दिमाग को गुस्से की आग में झोंक सकते हैं, और कुछ शब्दों से उसी गुस्से को ठंडा भी कर सकते हैं। शब्द आग का भी काम करते हैं और बर्फ का भी। ये बोलने वाले पर निर्भर करता है कि वह कौन-से शब्द चुनता है—जलाने वाले या ठंडक देने वाले।

गिर कर उठना

मोहनसिंह ओबराय का जन्म 15 अगस्त, 1900 ईस्वी को झेलम के एक गाँव में हुआ था। उनके पिता पेशावर में ठेकेदारी का काम करते थे। जब मिस्टर ओबराय केवल छह महीने के थे, तभी उनके पिता का देहांत हो गया। पिता की मृत्यु के बाद वे बेसहारा हो गए। बहुत मुश्किलों के साथ उन्होंने सरगोधा से मैट्रिक किया और लाहौर से इंटरमीडिएट की परीक्षा पास की। इसके बाद आर्थिक तंगी के कारण वे अपनी पढ़ाई जारी नहीं रख सके।

मिस्टर ओबराय ने अपने जीवन के हालात को लिखा है, जो *टाइम्स ऑफ इंडिया* के संडे एडिशन (12 अगस्त, 1990) में प्रकाशित हुए। वे लिखते हैं कि इंटरमीडिएट के बाद जब मैंने देखा कि अब मैं आगे पढ़ाई नहीं कर सकता, तो यह मेरे जीवन का एक बहुत चिंताजनक समय था, क्योंकि मैंने महसूस किया कि मेरी मौजूदा शैक्षिक योग्यता से मुझे कोई नौकरी नहीं मिल सकती:

> "This was a moment of anxiety in my life as I realised that my qualification would not get me a job."

सर्विस से महरूमी उन्हें बिज़निस के मैदान में ले गई। यह कारोबारी संघर्ष की एक लम्बी कहानी है जिसको उपरोक्त अख़बार में देखा जा सकता है। सार यह है कि 1924 ई. में वे मामूली रूप से एक होटल के काम में शरीक हुए। 1939 ई. में जब दूसरा विश्वयुद्ध शुरू हुआ तो वे कोलकाता में अपना एक होटल शुरू कर चुके थे। उनका काम बढ़ता रहा। यहाँ तक कि आज वे एक 'होटल एम्पाइर' के मालिक हैं। हिन्दुस्तान के अधिकांश बड़े शहरों में उनके होटल 'ओबराए' के नाम से मौजूद हैं। इसके अलावा सिंगापुर, सऊदी अरब, श्रीलंका, नेपाल, खाड़ी देश, मिस्र और अफ्रीक़ा में उनके बड़े-बड़े होटल कामयाबी के साथ चल रहे हैं।

मिस्टर ओबराए को सर्विस के मैदान में जगह नहीं मिली, तो उन्होंने बिज़निस के मैदान में उससे ज़्यादा बड़ी जगह अपने लिए हासिल कर ली। यही मौजूदा दुनिया में कामयाबी का सबसे बड़ा रहस्य है। यहाँ कामयाब वह होता है जो गिरने के बाद दोबारा उठने की क्षमता का सुबूत दे सके।

अगर किसी एक क्षेत्र में आपको अवसर न मिले, तो किसी दूसरे क्षेत्र में मेहनत शुरू कर दीजिए। यह हो सकता है कि उसी दूसरे क्षेत्र में आपको वह सब कुछ मिल जाए जिसकी उम्मीद आपने पहले क्षेत्र से लगाई थी।

डॉ. सालिम अली (1896–1987) को पक्षी-विज्ञान (Ornithology) में असाधारण पहचान मिली। भारत सरकार ने उन्हें *पद्म भूषण* से सम्मानित किया। ब्रिटेन ने उन्हें गोल्ड मेडल दिया। हॉलैंड ने उन्हें *गोल्डन आर्क* प्रदान किया। अंतरराष्ट्रीय संगठन वाइल्ड लाइफ़ ने उन्हें इनाम के रूप में 50 हज़ार डॉलर दिए। भारत की तीन यूनिवर्सिटियों ने उन्हें मानद (Honorary) डॉक्टरेट की डिग्री दी। वे राज्यसभा के सदस्य भी बनाए गए — और भी कई सम्मान उन्हें मिले।

डॉ. सालिम अली को यह असाधारण सफलता एक असाधारण असफलता के बाद मिली। वे मुम्बई के एक भीड़भाड़ वाले इलाके खेतवाड़ी

में पैदा हुए। बी.ए. तक पढ़ाई पूरी करने के बाद उन्हें नौकरी की ज़रूरत थी। लेकिन जब वे रोज़गार की तलाश में निकले तो उनके अपने शब्दों में, "हर संस्थान और हर दफ्तर में मेरे लिए 'जगह नहीं' का बोर्ड लगा हुआ था।" लेकिन इसी नाकामी ने उनके लिए नई कामयाबी के रास्ते खोल दिए।

एक दिन उन्होंने एक छोटी चिड़िया पकड़ी। उसको देखा तो उसमें एक असाधारण विशेषता नज़र आई। उसकी गर्दन पीले रंग की थी। उन्होंने उसकी जाँच शुरू कर दी। उन्होंने पक्षी-ज्ञान के विषय पर बहुत-सी किताबें पढ़ डालीं। उनकी दिलचस्पी बढ़ती गई। यहाँ तक कि उन्होंने एक दस्ती दूरबीन हासिल की। अब उनका काम यह हो गया कि इधर-उधर जाकर चिड़ियों का अध्ययन करें और उनके हालात अपनी डायरी में लिखें। आख़िरकार उन्होंने पक्षी - ज्ञान में इतनी दक्षता पैदा की कि स्वयं उस कला को नई दिशाओं और नई व्यापकताओं से अवगत कराया। उनकी दो किताबें बहुत मशहूर हैं। एक किताब में उन्होंने हिन्द व पाक की 1200 चिड़ियों के हालात लिखे हैं। इनकी दूसरी किताब तय्यूरे हिन्द (भारतीय पक्षी) है जो ग्यारह बार छप चुकी है और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर पढ़ी जाती है।

डॉ. सालिम अली को ज़मीन पर जगह नहीं मिली, तो उन्होंने आसमान में अध्ययन का ऐसा क्षेत्र चुन लिया जो उनके लिए और भी बेहतर साबित हुआ। उन्हें साधारण नौकरी नहीं मिली थी, लेकिन अपनी बेहतरीन मेहनत और काबिलियत के बल पर वे उच्चतम सम्मान पाने के योग्य ठहरे।

सूझ-बूझ विकसित करें

भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर सी. वी. रमन (1888–1970) का जन्म त्रिचरापल्ली में हुआ था और उनका निधन बैंगलोर में हुआ। आख़िरी समय में वे रमन रिसर्च इंस्टीट्यूट के डायरेक्टर के पद पर कार्यरत थे। इसके

अलावा वे कई बौद्धिक पदों पर भी नियुक्त रहे। वर्ष 1930 में उन्हें भौतिकी (फ़िज़िक्स) के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार मिला।

रमन के बारे में एक जानकारीपूर्ण लेख *संडे रिव्यू* (17 मार्च, 1991) में प्रकाशित हुआ था। उसमें एक अंश यह था:

> Raman believed that science comes from the brain and not from equipment. When one of his pupils in spectroscopy complained that he had only a 1KW lamp whereas his competitor abroad had a 10KW lamp, Raman told him: "Don't worry. Put a 10KW brain to the problem."

> रमन का मानना था कि विज्ञान दिमाग़ से आता है, संसाधनों से नहीं। उनके एक शिष्य ने एक बार यह शिकायत की कि उसके पास रिसर्च के लिए केवल एक किलोवाट का लैम्प है, जबकि विदेश में उसी स्तर के एक छात्र के पास दस किलोवाट का लैम्प है। इस पर रमन ने जवाब दिया—चिन्ता मत करो, अपने मसले को सुलझाने के लिए दस किलोवाट का दिमाग़ लगा दो।

यह बात अत्यन्त सही है। इस दुनिया में हर काम का सम्बन्ध मस्तिष्क से है। सामान की कमी मस्तिष्क से पूरी की जा सकती है, मगर मस्तिष्क की कमी को सामान से पूरा नहीं किया जा सकता।

दो सौ साल और तीन सौ साल पहले पश्चिम में जो वैज्ञानिक पैदा हुए, उनमें से किसी के पास वह सामान नहीं था जो आज किसी यूनीवर्सिटी में एक रिसर्च छात्र के पास होता है। उनमें से हर एक ने कम सामान के साथ काम किया। जैसे न्यूटन ने किरोसीन के लैम्प के द्वारा काम किया, क्योंकि

उस समय बिजली का इस्तेमाल ही शुरू न हुआ था, आदि। मगर यही वैज्ञानिक थे जिन्होंने आधुनिक पश्चिमी साइंस की आधारशिला रखी।

इस उसूल का सम्बन्ध हर इंसान से है। जब भी किसी व्यक्ति को महसूस हो कि उसके पास पूँजी या साधन या संयन्त्रों की कमी है, तो उसको चाहिए कि वह अपनी मानसिक मेहनत को बढ़ा ले। उसकी मानसिक मेहनत उसके लिए हर दूसरी कमी की क्षतिपूर्ति बन जाएगी।

प्रकृति ने मस्तिष्क की सूरत में इंसान को आश्चर्यजनक ताकत दी है। मस्तिष्क को इस्तेमाल करके आदमी अपनी हर कमी की क्षतिपूर्ति कर सकता है।

मिस्टर कमाल अलीग (जन्म 1958) ने 1 फ़रवरी, 1989 की मुलाक़ात में एक वाक़या सुनाया। वे पहले सिगरेट पीते थे, लेकिन 1984 से उन्होंने पूरी तरह सिगरेट छोड़ दी। 1976 से 1981 के बीच वे पढ़ाई के लिए मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ़ में रहे। उस समय वे 'चैन स्मोकर' हुआ करते थे।

एक दिन की बात है। परीक्षा का समय क़रीब था और वे रात को देर तक पढ़ाई कर रहे थे। रात का एक बज गया था। तभी उन्हें सिगरेट पीने की तलब महसूस हुई। देखा तो दियासलाई ख़त्म हो चुकी थी और हीटर भी ख़राब पड़ा था। एक ओर सिगरेट पीने की ज़ोरदार इच्छा हो रही थी, दूसरी ओर कोई ऐसा साधन नहीं था जिससे सिगरेट जलाई जा सके।

करीब आधे घंटे तक उनके दिमाग़ में यही सवाल घूमता रहा कि सिगरेट को कैसे जलाया जाए। वे इसी सोच में डूबे रहे। आख़िरकार एक तरीका उन्हें सूझा। उनके कमरे में छत से एक 100 वॉट का बल्ब लटक रहा था। उन्होंने सोचा कि अगर इस जलते हुए बल्ब पर कोई हल्की चीज़ लपेट दी जाए, तो कुछ देर बाद वह गर्म होकर जल सकती है। उन्होंने एक पुराना कपड़ा लिया और उसका एक टुकड़ा फाड़कर जलते बल्ब पर लपेट दिया।

तक़रीबन पाँच मिनट बाद वह कपड़ा जल उठा। कमाल साहब ने उसी से अपनी सिगरेट सुलगाई और सिगरेट के कश लेने लगे।

इसी का नाम 'मानसिक मेहनत' है। आम लोग मेहनत के नाम से केवल शारीरिक मेहनत को जानते हैं। मगर मेहनत की ज़्यादा बड़ी क़िस्म वह है जिसका नाम मानसिक मेहनत है। दुनिया की तमाम बड़ी-बड़ी कामयाबियाँ वही हैं जो दिमागी मेहनत के द्वारा हासिल की गई हैं। शारीरिक मेहनत फावड़ा चलाने या हथौड़ा मारने का काम अंजाम दे सकती है, मगर एक साइण्टिफ़िक फॉर्म या आधुनिक तरह का एक कारख़ाना बनाने का काम केवल मानसिक मेहनत के द्वारा ही हो सकता है। शारीरिक मेहनत यदि आपको एक रुपया लाभ दे सकती हो तो आप मानसिक मेहनत के द्वारा एक करोड़ रुपये कमा सकते हैं। शारीरिक मेहनत केवल यह कर सकती है कि वह दौड़ कर बाज़ार जाए और एक दियासलाई ख़रीद कर लाए और उसके द्वारा अपनी सिगरेट सुलगाए। मगर मानसिक मेहनत ऐसी आश्चर्यजनक ताक़त है जो दियासलाई के बिना आपके सिगरेट को सुलगा दे, जो सामने नज़र आती आग के बिना आपके घर को रोशन कर दे।

चैलेंज कुबूल करें

हिन्दुस्तान के बड़े उद्योगपतियों में जे. आर. डी. टाटा का नाम आता है। जब ये पंक्तियाँ लिखी गईं, तब उनकी उम्र 85 साल थी। इसके बावजूद वे अब भी हवाई जहाज़ उड़ाते थे और बर्फ़ पर स्कीइंग (skiing) करते थे। इतनी उम्र में भी उनकी सेहत का राज़ क्या है, इस सवाल के जवाब में उन्होंने कहा:

> One of the things that keep me young is the fact that I am prepared to live dangerously. You must be prepared to take risks—risk in

> business, sport, marriage, everything to make life worthwhile. (*Hindustan Times*, 13 July 1991)
>
> ‘जो बातें मुझे लगातार जवान बनाए रखती हैं, उनमें से एक यह है कि मैं हमेशा ख़तरों में जीने के लिए तैयार रहता हूँ। ज़िन्दगी को सच्चे मायने में क़ीमती बनाने के लिए आपको हर काम में रिस्क लेने को तैयार रहना चाहिए—चाहे वह बिज़निस हो, खेल हो या शादी।’ (*हिन्दुस्तान टाइम्स*, 13 जुलाई, 1991 ई.)

अँगरेज़ी की कहावत है कि रिस्क नहीं तो कामयाबी भी नहीं (No risk no gain)। यहाँ सवाल यह है कि रिस्क और ख़तरे क्यों आदमी को कामयाबी और प्रगति की तरफ़ ले जाते हैं? इसका कारण यह है कि रिस्क आदमी की शक्तियों को जगाता है, वह एक साधारण इंसान को असाधारण इंसान बना देता है।

आदमी अगर ख़तरों का सामना न करे, रिस्क की सूरतों से दूर रहे तो वह एक सुस्त और काहिल इंसान बन जाएगा। उसकी स्वाभाविक क्षमताएँ मुर्दा हालत में पड़ी रहेंगी। वह ऐसा बीज होगा जो फटा नहीं कि पेड़ बने, वह ऐसा पानी का भण्डार होगा जिसमें मौजें नहीं उठीं, जो तूफ़ान की सूरत लें।

मगर जब आदमी को ख़तरे पेश आते हैं; जब उसका जीवन रिस्क की हालत से दो-चार होता है तो उसके व्यक्तित्व के अन्दर छुपी हुई प्राकृतिक योग्यता जाग उठती है। हालात का दबाव उसको मजबूर कर देता है कि वह सक्रिय हो जाए, वह अपनी सारी ताक़त अपने काम में लगा दे।

हर एक आदमी के अन्दर अथाह योग्यताएँ हैं, मगर ये योग्यताएँ आरम्भिक रूप में सोई हुई होती हैं। वे कभी जगाए बिना नहीं जागतीं। इन

योग्यताओं को जगाने का एक ही तरीका है, वह यह कि उन्हें चैलेंज का सामना करना पड़े; उन्हें ख़तरों का सामना करना पड़े।

सुरक्षित जीवन देखने में सुख का जीवन है, मगर सुरक्षा के जीवन की यह महँगी क़ीमत देनी पड़ती है कि आदमी का व्यक्तित्व अधूरा रह जाए; वह अपनी सम्भावित प्रगति के दर्जे तक न पहुँच सके।

6 जनवरी, 1990 ई. के अख़बारों में जो ख़बरें छपीं, उनमें एक ख़बर यह भी थी कि अजहरुद्दीन को आम सहमति से भारतीय क्रिकेट टीम का कप्तान नियुक्त किया गया है। वे न्यूज़ीलैंड जाने वाली टीम का नेतृत्व करेंगे। यह ख़बर क्रिकेट जगत के लिए बहुत ही हैरानी की बात थी, क्योंकि ज़्यादातर लोगों का मानना था कि यह ज़िम्मेदारी श्रीकांत को मिलेगी, जो इससे पहले शारजाह कप, नेहरू कप और पाकिस्तान दौरे पर टीम के कप्तान रह चुके थे।

हैदराबाद से ताल्लुक़ रखने वाले 27 वर्षीय अजहरुद्दीन को उनकी क्रिकेट प्रतिभा की वजह से वंडर बॉय (Wonder Boy) कहा जाता है। अजहरुद्दीन हिन्दुस्तानी क्रिकेट के दूसरे सबसे कम उम्र के कप्तान बने हैं। उनसे पहले मंसूर अली ख़ान पटौदी को 21 साल की उम्र में भारतीय टीम की कप्तानी सौंपी गई थी।

अजहरुद्दीन को इस ऊँचे पद तक पहुँचाने वाली चीज़ उनकी यह काबिलियत है कि जब कोई चुनौती सामने आती है तो वे हिम्मत नहीं हारते, बल्कि और मज़बूती से उसका सामना करते हैं। दिसम्बर 1989 में पाकिस्तान में हुए टेस्ट मैचों की शुरुआत में उनके करियर पर ख़तरा मंडराने लगा था, क्योंकि फ़ैसलाबाद टेस्ट की पहली पारी में वे बिना कोई रन बनाए ज़ीरो पर आउट हो गए थे। लेकिन दूसरी पारी में शानदार शतक (सेंचुरी) बनाकर उन्होंने अपना टेस्ट करियर बचा लिया।

टाइम्स ऑफ़ इण्डिया (6 जनवरी, 1990 ई.) की रिपोर्ट के अनुसार, सलेक्शन कमेटी के चैयरमेन मिस्टर राजसिंह डूंगरपुर ने कहा कि अजहरुद्दीन का चयन करने की वजह यह है कि वे चैलेंज का मुकाबला करने को पसन्द करते हैं, जैसा कि पाकिस्तान के दौरे में देखा गया, जहाँ वे पहले टेस्ट में टीम से बाहर होने के क़रीब पहुँच गए थे, और यह मार्गदर्शन का एक अत्यन्त जरूरी गुण है :

> He enjoys facing challenges, as seen during the tour of Pakistan, where he came close to being dropped from the first Test—and this is an essential quality of leadership.

यह दुनिया चैलेंज की दुनिया है। यहाँ वही लोग कामयाब होते हैं जो चैलेंज का सामना करने का उत्साह रखते हों। यह ख़ूबी किसी आदमी के अन्दर जितनी ज़्यादा होगी उतनी ही ज़्यादा बड़ी कामयाबी वह इस दुनिया में हासिल करेगा।

वक़्त की क़ीमत

लॉर्ड चेस्टरफील्ड (Lord Chesterfield) 1694 ईस्वी में लंदन में पैदा हुआ और 1773 ईस्वी में वहीं उसका निधन हुआ। उसने अपने बेटे फ़िलप स्टेन हॉप के नाम कई पत्र लिखे थे। इन पत्रों में ज़िंदगी में कामयाबी हासिल करने का तरीका बताया गया था। ये सारे पत्र उसकी मृत्यु के बाद प्रकाशित किए गए।

एक पत्र में लॉर्ड चेस्टरफील्ड ने लिखा था, “मैंने तुमसे कहा है कि तुम मिन्टों की हिफ़ाज़त करो, क्योंकि घंटे अपनी हिफ़ाज़त खुद कर लेंगे”:

I recommended you to take care of the minutes,
for the hours will take care of themselves.

अगर आप अपने मिन्ट को बर्बाद नहीं करते, तो घण्टा अपने-आप बचा रहता है, क्योंकि घंटा तो मिनिटों के जुड़ने से ही बनता है। जिसने छोटे हिस्सों का ध्यान रखा, उसने समझो पूरे का भी ध्यान रखा, क्योंकि जब बहुत सारे छोटे हिस्से इकट्ठा हो जाते हैं, तो वही मिलकर पूरा बनाते हैं।

बहुत-से लोगों का हाल यह है कि वे ज़्यादा की चिन्ता में कम को भूले रहते हैं। वे अपने ज़ेहन को अधिक की तरफ़ इतना ज़्यादा लगाते हैं कि थोड़े की तरफ़ से उनकी निगाहें हट जाती हैं, मगर आख़िरी नतीजा यह होता है कि उन्हें कुछ भी नहीं मिलता।

अपने मिले हुए समय का एक क्षण भी बर्बाद न कीजिए। क्षणों को इस्तेमाल करके आप महीनों और सालों तक के मालिक बन सकते हैं। अगर आपने क्षणों को खोया तो उसके बाद आप महीनों और सालों को भी निश्चित रूप से खो देंगे।

यदि आप रोज़ाना एक घण्टे के केवल पाँच मिनट खोते हों, तो रात दिन के बीच आपने रोज़ाना 2 घण्टे खो दिए। महीने में 60 घण्टे और साल में 720 घण्टे आपके बर्बाद हो गए। इसी तरह हर आदमी अपने मिले हुए समय का बहुत-सा हिस्सा बेकार बर्बाद कर देता है। 80 साल की उम्र पाने वाला आदमी अपनी उम्र के 40 साल भी पूरी तरह इस्तेमाल नहीं कर पाता। समय आपकी सबसे बड़ी पूँजी है। समय को बर्बाद होने से बचाइए।

छोटी-छोटी सफलताओं के समूह का नाम बड़ी सफलता है। छोटी सफलता से संतुष्ट हो जाइए, फिर आप बड़ी सफलता भी ज़रूर हासिल कर लेंगे।

मौलवी लुत्फ़ुल्लाह एक साधारण ट्यूटर थे। उनका जन्म 1802 ईस्वी में मालवा के पुराने शहर धारानगर में हुआ। उन्होंने कभी किसी अंग्रेज़ी

स्कूल में पढ़ाई नहीं की, लेकिन उनकी खुद की लिखी अंग्रेज़ी आत्मकथा 1857 ईस्वी में लंदन से प्रकाशित हुई। लंदन के प्रकाशक स्मिथ, ऐल्डर एंड कंपनी ने इस किताब का नाम रखा:

Autobiography of Lutfullah:
A Mohammedan Gentleman

इस किताब के साथ एक अंग्रेज़ मिस्टर ऐस्टवीक की प्रस्तावना भी शामिल है। इसमें उन्होंने लेखक की सही अंग्रेज़ी की सराहना की है और इस बात पर हैरानी जताई है कि एक हिन्दुस्तानी ने विदेशी भाषा में इतनी बड़ी किताब कैसे लिखी।

मौलवी लुत्फुल्लाह ने यह योग्यता कैसे पैदा की कि वे अँगरेज़ी में एक ऐसी किताब लिखें जो लन्दन से छपे और अँगरेज़ लेखक उनकी भाषा की प्रशंसा करे, इसका रहस्य उर्दू की इस मशहूर कहावत में छुपा हुआ है, 'थोड़ा-थोड़ा बहुत हो जाता है।'

मौलवी लुत्फुल्लाह ने अँगरेज़ी भाषा केवल अपनी मेहनत से सीखी। वे ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अँगरेज़ नौकरों को हिन्दुस्तानी, फ़ारसी और मराठी ज़बानें सिखाते थे। उनके अँगरेज़ शागिर्दों की संख्या सौ से ऊपर थी। अँगरेज़ों से सम्बन्ध के कारण उनके अन्दर अँगरेज़ी भाषा सीखने का शौक पैदा हुआ। उन्होंने व्यक्तिगत अध्ययन से अँगरेज़ी भाषा पढ़ना शुरू की और आठ साल की लगातार मेहनत के नतीजे में उस पर पूरी तरह अधिकार प्राप्त कर लिया। उन्होंने अपनी किताब में लिखा है कि इस आठ साल की अवधि में 'कोई एक रात ऐसी नहीं गुज़री जबकि सोने से पहले मैंने अँगरेज़ी के दस शब्द याद न किए हों और डॉक्टर गिलक्रिस्ट की ग्रामर की किताबों के कुछ पृष्ठ ध्यान से पढ़कर ज़ेहन में सुरक्षित न किए हों।' 'दस शब्द' देखने में बहुत कम मालूम होते हैं, मगर दस शब्द रोज़ाना की रफ़्तार को जब आठ साल

तक फैला दिया जाए तो वह एक व्यक्ति को ग़ैर-भाषा का ऐसा लेखक बना देती है कि भाषाविद् भी उसकी भाषा का लोहा मानें।

निरंतर पर्यास

'अमेरिका को कोलम्बस ने तलाश किया' — यह छह शब्दों का वाक्य आज कोई भी इंसान छह सेकंड से भी कम समय में बोल सकता है। लेकिन इस काम को अंजाम देने में कोलम्बस को बीस साल की कठिन मेहनत करनी पड़ी।

क्रिस्टोफ़र कोलम्बस (Christopher Columbus) का जन्म 1451 ईस्वी में इटली में हुआ था। 1506 ईस्वी में उसकी मौत स्पेन में हुई। अमेरिका की खोज असल में यूरोप के लिए एक पूर्वी समुद्री रास्ता ढूंढने की कोशिश का हिस्सा थी — यह एक तरह से उसके साथ में मिलने वाली उपलब्धि (by-product) थी। 1484 ईस्वी में कोलम्बस ने पुर्तगाल के राजा जान द्वितीय (John II) से गुज़ारिश की कि वह इस समुद्री यात्रा के लिए उसकी मदद करे। लेकिन पुर्तगाल के शाह ने इस काम को बेकार समझ कर उसकी मदद करने से मना कर दिया।

उसके बाद कोलम्बस ने कैस्टली (Castile) की मलिका इज़ावेला (Isabella) से मदद की विनती की। यहाँ भी उसको सकारात्मक जवाब नहीं मिला। फिर भी कोलम्बस ने अपनी कोशिश जारी रखी। यहाँ तक कि आठ साल के बाद मलिका ने उसको कश्तियाँ और ज़रूरी सामान उपलब्ध करा दिया।

कोलम्बस ने तीन कश्तियों के साथ अपना पहला सफ़र 3 अगस्त, 1492 ई. में शुरू किया। फिर भी उस सफ़र में वह अमेरिका के तट तक

पहुँचने में कामयाब न हो सका। हर प्रकार की मुश्किलात और आज़माइशों के बावजूद कोलम्बस अपनी कोशिश में लगा रहा।

अंततः चौथी यात्रा के बाद, 1504 ईस्वी में कोलम्बस 'नई दुनिया' को खोज निकालने में सफल हो गया। (10/691) कोलम्बस से पहले दुनिया दो हिस्सों में बँटी हुई थी। कोलम्बस की इस खोज ने नई और पुरानी, दोनों दुनियाओं को जोड़ दिया। यह यक़ीनन एक बड़ी खोज थी, लेकिन यह तभी मुमकिन हो सकी जब कोलम्बस और उसके साथियों ने बीस साल तक जान जोखिम में डालकर, बिना हार माने, इस योजना पर काम किया।

यही इस दुनिया में सफलता पाने का तरीका है। यहां हर बड़ी सफलता के लिए बीस साल की मेहनत लगती है। इसके बिना कोई बड़ी सफलता नहीं मिल सकती।

इस दुनिया में हर सफलता लम्बे संघर्ष के बाद ही मिलती है। इंसान पहले थोड़े में संतोष करता है, और फिर धीरे-धीरे वह ज्यादा तक पहुंचता है।

नील आर्मस्ट्रॉंग पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने चाँद का सफ़र किया। 21 जुलाई, 1969 ई. को उन्होंने ईगल नामक चाँदगाड़ी से उतर कर चाँद की धरती पर अपना कदम रखा। उस समय ज़मीन और चाँद के बीच बराबर अंतरिक्ष सम्पर्क कायम था। चाँद पर उतरने के बाद उन्होंने ज़मीन वालों को जो पहला सन्देश दिया वह यह था, एक व्यक्ति के हिसाब से यह एक छोटा क़दम है, मगर मानवता के लिए यह एक महान छलाँग है : That's one small step for a man, but one giant leap for mankind.

आर्मस्ट्रॉंग का मतलब यह था कि मेरा इस समय चाँद पर उतरना देखने में केवल एक व्यक्ति का चाँद पर उतरना है, मगर यह एक नए वैश्विक युग का आरम्भ है। एक व्यक्ति के पूरी सुरक्षा के साथ चाँद पर उतरने से यह साबित हो गया कि इंसान के लिए चाँद का सफ़र सम्भव है। यह खोज और

आगे बढ़ेगी। यहाँ तक कि वह समय आएगा जबकि आम लोग एक ग्रह से दूसरे ग्रह तक इसी तरह सफ़र करने लगें, जिस तरह वे मौजूदा ज़मीन के ऊपर करते हैं।

इस दुनिया में हर बड़ा काम इसी तरह होता है। शुरुआत में कोई एक व्यक्ति या कुछ लोग क़ुर्बानी देकर किसी खोज तक पहुँचते हैं। इस तरह वे इंसानों के सफर के लिए एक नया रास्ता खोलते हैं। यह शुरुआती काम वाकई बहुत मुश्किल होता है। यह ऐसा होता है जैसे किसी पहाड़ को अपनी जगह से हटाना। लेकिन जब यह शुरुआती काम पूरा हो जाता है, तो उसके बाद बाकी चीज़ें आसान हो जाती हैं। फिर लोगों के सामने एक चौड़ा रास्ता खुल जाता है जिस पर बहुत सारे लोग सफर कर सकते हैं।

जब कोई किसान ज़मीन में बीज डालता है, तो वह खेती की दिशा में एक 'छोटा कदम' होता है। फिर भी, इसी छोटे से कदम से किसान के खेती के सफर की शुरुआत हो जाती है। यह सफर चलता रहता है, और एक दिन ऐसा आता है जब उसके खेत में एक पूरी फसल खड़ी दिखाई देती है। यही तरीका इंसान के हर काम के लिए सही बैठता है — चाहे वह खेती-बागवानी हो या कोई और काम।

उपाय से हल

तेरहवीं सदी के मशहूर आलिम मौलाना जलालुद्दीन रूमी (1207–1273) को मुसलमानों में बहुत ऊँचा दर्जा हासिल है। उनकी मसनवी, जो करीब 26 हज़ार शेरों पर आधारित है, मुसलमानों के बीच बहुत ज़्यादा सम्मान के साथ पढ़ी जाती है। यह मसनवी कई सदियों तक उलमा के बीच एक राह दिखाने वाली किताब के तौर पर पढ़ाई जाती रही है।

1258 में तातारियों ने बगदाद को तबाह करने और अब्बासी सल्तनत को ख़त्म करने के बाद मुस्लिम दुनिया पर अपनी ज़ालिम हुकूमत कायम की। उस समय मौलाना रूमी की उम्र करीब पचास साल थी। उन्होंने अपनी मसनवी के ज़रिए मुसलमानों को आध्यात्मिक और नैतिक तालीम दी और उन्हें सँभालने की कोशिश की।

इसी के साथ उन्होंने उस समय की समस्याओं के मामले में भी मुसलमानों का मार्गदर्शन किया। उन्होंने अपनी फ़ारसी मसनवी में हिकायत और उपमा की भाषा में मुसलमानों को बताया कि इन हालात में मुसलमानों को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। इस सिलसिले में एक शिक्षाप्रद कहानी शेर और ख़रगोश की है जो मसनवी में 'दफ़्तर अव्वल' में विस्तार के साथ बयान हुई है। उस कहानी का सार यह है :

जंगल में एक शेर था। वह हर दिन अपनी भूख मिटाने के लिए जानवरों पर हमला करता था और पकड़ कर उन्हें अपनी ख़ुराक बनाता था। इसके नतीजे में तमाम जानवर स्थाई रूप से आतंक और भय में पड़े रहते थे। आख़िर उन्होंने उसका एक हल निकाला। उन्होंने शेर से बात करके उसको इस पर राज़ी किया कि वह उन पर हमला न करे। वे स्वयं अपनी तरफ़ से हर दिन एक जानवर उसके पास भेज दिया करेंगे।

इस प्रस्ताव पर अमल होने लगा। उसकी सूरत यह थी कि हर दिन पर्चों द्वारा यह तय किया जाता कि आज कौन-स - सा जानवर शेर की ख़ुराक बनेगा। जिस जानवर के नाम पर्चा निकलता उसको शेर के पास भेज दिया जाता। इस तरह तमाम जानवर शान्ति के साथ जंगल में रहने लगे। आख़िरकार पर्चा एक ख़रगोश के नाम निकला। यह ख़रगोश पहले से सोचे हुए था कि जब मेरे नाम पर्चा निकलेगा तो मैं अपने-आप को शेर की ख़ुराक बनने नहीं दूँगा। बल्कि उपाय के द्वारा स्वयं शेर को समाप्त कर दूँगा।

एक तय योजना के तहत, ख़रगोश एक घंटे की देरी से शेर के पास पहुँचा। शेर बहुत भूखा था। देरी देखकर वह नाराज़ हो गया, और सामने सिर्फ़ एक छोटा सा ख़रगोश देखकर उसे और गुस्सा आ गया। ख़रगोश ने नरमी और अदब से कहा, "जनाब, बात यह है कि आपकी सल्तनत में एक और शेर आ गया है। जानवरों ने आपकी आज की भूख मिटाने के लिए दो ख़रगोश भेजे थे, लेकिन रास्ते में एक दूसरा शेर हम पर झपटा। उसने एक को पकड़ लिया और मैं किसी तरह भागकर आपके पास पहुँचा हूँ।"

अब शेर का गुस्सा उस दूसरे शेर की तरफ़ मुड़ गया। वह ग़ुस्से में बोला, "कौन है वह दूसरा शेर जो मेरे राज में घुस आया? मुझे उसके पास ले चलो ताकि मैं उसका काम तमाम कर दूँ।"

फिर शेर, ख़रगोश के साथ चल पड़ा। ख़रगोश ने उसे कई रास्तों से घुमाया और आख़िर में एक कुएँ के पास ले जाकर खड़ा कर दिया। उसने कहा, "हुज़ूर, वह शेर इसी कुएँ में है। आप खुद देख सकते हैं।"

शेर ने कुएँ के ऊपर से झाँका तो नीचे पानी में उसको अपना प्रतिबिम्ब नज़र आया। उसने समझा कि ख़रगोश का कहना सही है और वास्तव में उसके अन्दर एक और शेर मौजूद है। शेर गुर्राया तो दूसरा शेर भी गुर्रा उठा। अपनी सल्तनत में इस तरह एक और शेर का घुस आना उसको सहन नहीं हुआ। वह छलाँग लगाकर कल्पित शेर के ऊपर कूद पड़ा और फिर कुएँ में पड़ा पड़ा मर गया।

इस तरह एक ख़रगोश ने उपाय की ताकत से शेर जैसे दुश्मन का ख़ात्मा कर दिया। मौलाना रूम आख़िर में कहते हैं कि उसकी युक्ति का जाल मानो शेर का फन्दा था। कैसा अजीब था वह ख़रगोश जो एक शेर को मात दे गया:

दाम मकर ओ कमन्द शेर बुवद
तरफ़ ख़रगोशे कि शेरे रा रबूवद

यह हिकायत की ज़बान में एक मार्गदर्शन था जो मौलाना रूम ने अपने ज़माने के मुसलमानों को दिया। मौलाना रूम ने मुसलमानों को मुजाहिदाना कामों पर नहीं उभारा। उन्होंने यह नहीं कहा कि जंगल के तमाम वासियों को चाहिए कि वे संगठित होकर शेर के ऊपर हमला कर दें। अगर उन्होंने शेर को मार डाला तो वे ग़ाज़ी की उपाधि पाएँगे और अगर शेर उनको मारने में कामयाब हो गया तब भी कोई हानि नहीं, क्योंकि ऐसी सूरत में वे सबके सब शहीद क़रार दिए जाएँगे; और जिसको शहादत का दर्जा मिले, उसको बहुत बड़ा दर्जा मिल गया।

इसके उलट मौलाना रूमी ने मुसलमानों को समझदारी के रास्ते पर चलने की सलाह दी। उन्होंने मौत नहीं, बल्कि ज़िंदगी जीने का रास्ता बताया। उनकी बताई गई समझदारी की राह में इंसान को शुरू में खुद को छोटा बनाना पड़ता है, लेकिन आख़िर में वह बुलंदी और कामयाबी की जगह तक पहुँच जाता है। मौलाना रूमी की यह सीख आज के समय के लिए भी उतनी ही फायदेमंद है, जितनी वह पहले के ज़माने में थी।

जानने की जिज्ञासा

किशोरावस्था में, जबकि अभी मैं पढ़ रहा था, हमारी क्लास में एक दिन ऊँट का वर्णन आया। उसके बाद उस्ताद ने पूछा, ‘यह बताओ कि ऊँट के तलवे फटे होते `हैं या जुड़े हुए होते हैं अर्थात् बैल के तलवे की तरह फटे हुए या घोड़े के तलवे की तरह जुड़े हुए?”

हमारी क्लास में उस समय दो दर्जन स्टूडेण्ट थे, मगर कोई भी विश्वास के साथ इसका जवाब न दे सका। केवल अटकल के तहत किसी ने कहा कि फटे हुए होते हैं, किसी ने कहा कि जुड़े हुए होते हैं।

इसके बाद उस्ताद ने एक लैक्चर दिया। उन्होंने कहा कि यह एक सादा सवाल था, मगर तुममें से कोई भी छात्र विश्वास के साथ इसका जवाब न दे सका। इसका कारण क्या है, इसका कारण यह है कि तुम ऊँट के तलवों के बारे में नहीं जानते और तुम अपने इस न जानने को भी नहीं जानते। यही बात है जो अरबी ज़बान की एक कहावत में इस तरह कही गई है, 'मैं नहीं जानता, ऐसा कहना आधा ज्ञान है।'

उस्ताद ने कहा कि जब मैंने तुम लोगों से पूछा कि ऊँट के तलवे फटे होते हैं या जुड़े तो तुममें से किसी छात्र ने भी यह नहीं कहा कि मैं नहीं जानता। यद्यपि अनुभव से मालूम हुआ कि तुम इससे अनभिज्ञ थे। अगर तुम अपने इस न जानने को जानते तो तुम्हारे अन्दर वह चीज़ पैदा हो जाती जिसको स्पिरिट ऑफ इन्क्वाइरी (Spirit of Enquiry) कहा जाता है। इसके बाद तुमको उसके बारे में जानने का शौक हो जाता। जब भी तुम्हारे सामने से ऊँट गुज़रता तो तुम तुरन्त उसके तलवों को देखते और फिर तुमको विश्वास के साथ मालूम हो जाता कि ऊँट के तलवे कैसे होते हैं, फटे या जुड़े।

यह एक सचाई है कि बहुत से लोग अपनी अनभिज्ञता से अवगत नहीं होते। यही वजह है कि वे अनभिज्ञता की हालत में पड़े रहते हैं और कभी उससे निकल नहीं पाते।

एक इंसान के लिए सवाल पूछने की चाहत बहुत ज़रूरी होती है। असली ज्ञान तब शुरू होता है जब इंसान यह समझता है कि वह बहुत कुछ नहीं जानता। जो आदमी यह मान लेता है कि वह सब कुछ नहीं जानता, वह लगातार सीखने की कोशिश करता रहता है और हर चीज़ को ध्यान से समझने की कोशिश करता है। लेकिन जो आदमी यह नहीं जानता कि वह

कुछ नहीं जानता, वह हमेशा अज्ञान में ही बना रहेगा और कभी भी सच्चा जानने वाला नहीं बन पाएगा।

साइंस की सारी खोजें इसी जानने की चाहत की वजह से हुई हैं। आज के ज़माने में इंसान ने कायनात या नेचर के बारे में जो ढेर सारी जानकारियाँ पाई हैं, वे सब इसी जानने की ललक के कारण मुमकिन हुई हैं। ये सारी चीज़ें तो लाखों साल से मौजूद थीं, लेकिन पुराने ज़माने के लोग बिना परखे हर बात को सच मान लेते थे। यही सोच उन्हें कायनात के राज़ों को समझने से रोकती रही।

मौजूदा ज़माने में विभिन्न कारणों के अन्तर्गत ऐसा हुआ कि इंसान हर चीज़ की हकीकत को जानने की कोशिश करने लगा। इसी का नाम स्पिरिट ऑफ़ इन्क्वाइरी है, और इसी ने इंसान को मौजूदा तमाम जानकारियों तक पहुँचाया है।

आदमी चाहे जो भी प्रगति हासिल करना चाहता हो, उसमें उसके लिए स्पिरिट ऑफ़ इन्क्वाइरी का बड़ा महत्त्व है। किसी आदमी के अन्दर यह भावना जितनी अधिक जागेगी उतना ही ज़्यादा वह अपनी मालूमात को बढ़ाएगा और उतना ही ज्यादा वह प्रगति करता चला जाएगा।

आज के दौर को जानकारी का दौर कहा जाता है। इस समय जानकारी का दायरा बहुत बड़ा हो गया है। ऐसे में जानने की चाहत और ज़्यादा ज़रूरी हो गई है। इस वजह से आज के ज़माने में जानकारी बढ़ाने की ज़रूरत पहले से कहीं ज़्यादा हो गई है। ज़्यादा से ज़्यादा जानकारी के बिना आज के समय में कोई बड़ी तरक्की मुमकिन नहीं।

अनदेखे लाभ

अपने खेत में अगर आप दाल की फसल उगाते हैं तो आपको दो तरह के लाभ मिलते हैं। पहला सीधा लाभ यह कि आपको दाल की फसल मिलती है। दूसरा छिपा हुआ लाभ यह होता है कि दाल की जड़ों में बैक्टीरिया रहते हैं जो हवा से नाइट्रोजन लेकर मिट्टी में शामिल कर देते हैं। इस तरह आपके खेत को नाइट्रोजन की खाद मिल जाती है।

ठीक इसी तरह हर काम का कुछ सीधा लाभ होता है और कुछ अप्रत्यक्ष लाभ। लोग आमतौर पर केवल सीधे लाभ को देखते हैं, जबकि अप्रत्यक्ष लाभ उनकी नजरों से छिपा रहता है। सीधे लाभ को आसानी से समझा जा सकता है, लेकिन अप्रत्यक्ष लाभ को समझने के लिए बुद्धि और सूझ-बूझ चाहिए। इसीलिए अधिकांश लोग केवल सीधे लाभ को देख पाते हैं और दूसरे लाभ को समझने से रह जाते हैं।

इस दुनिया में बड़ी कामयाबियाँ केवल उन लोगों के लिए लिखी हैं जो सीधे लाभ से ऊपर उठकर अप्रत्यक्ष लाभों को देखने वाली निगाह रखते हों।

किसी काम से सीधा लाभ सामान्य रूप से बहुत कम होता है। उसका ज़्यादा लाभ वह है जो अप्रत्यक्ष रूप से निकलता है। अप्रत्यक्ष लाभ न केवल यह कि आँखों से छुपे होते हैं अपितु यह कि कहीं ज़्यादा देर में नज़र आते हैं।

अप्रत्यक्ष लाभ निस्सन्देह सीधे लाभ से बहुत अधिक अहम और महान होते हैं। सीधे लाभ की गिनती की जा सकती है, मगर अप्रत्यक्ष लाभ की गिनती करना सम्भव नहीं।

आपके घर के सामने की सड़क पर कूड़े का ढेर हो और आप उसको साफ़ करा दें तो उसका सीधा लाभ यह है कि आपके घर का मुखाग्र साफ़ हो गया। मगर उसका जो अप्रत्यक्ष लाभ है वह उससे बहुत ज़्यादा है। इस काम ने

आपके अन्दर सकारात्मक सोच पैदा की। आस-पास के माहौल में आपका मान बढ़ गया। समाज में रचनात्मक मूल्यों को बढ़ावा हासिल हुआ। नैतिक परम्पराएँ स्थापित होने में मदद मिली। लोगों की दुआएँ आपको मिलने लगीं। इसके नतीजे में लोगों के बीच आपका भरोसा स्थापित हो गया। इसके बाद यदि आप अपने क्षेत्र में कोई अच्छा काम करना चाहें, तो तुरन्त बहुत-से लोग आपके मददगार बन जाएँगे क्योंकि आपके उपरोक्त कार्य के बाद आपने लोगों के दिलों में अपने लिए सम्मानजनक जगह बना ली।

जो व्यक्ति केवल अपने काम के सीधे लाभ को ही देखता है, वह छोटे काम तक ही सीमित रह जाता है और बड़ा काम उसके लिए संभव नहीं होता। बड़ा काम केवल उसी व्यक्ति को मिलता है जो सीधे लाभ से ऊपर उठकर अप्रत्यक्ष लाभ को भी देखने की क्षमता रखता है।

छिपे हुए लाभ को महत्व देने के लिए जरूरी है कि व्यक्ति के अंदर व्यापक दृष्टिकोण हो। वह भविष्य के लिए वर्तमान की तात्कालिकता को नजरअंदाज कर सके। वह भविष्य के बड़े लाभ के लिए अस्थायी नुकसान सहन कर सके। वह ऐसे काम को भी महत्व दे सके जिसमें बाहर वालों को श्रेय मिल सकता हो। ऐसी सोच रखने वाला व्यक्ति केवल दिखाई देने वाली चीज़ों को ही नहीं देखता, बल्कि उससे आगे बढ़कर उन चीज़ों को भी देख सकता है जो सीधे नजर नहीं आतीं।

अप्रत्यक्ष लाभ को देखते हुए केवल वे लोग काम कर सकते हैं जिनके अन्दर सूझ-बूझ हो; जो योजनाबद्ध काम करने की योग्यता रखते हों; जो न केवल अपनी व्यक्तिगत इच्छा से परिचित हों, बल्कि उन प्राकृतिक क़ानूनों से भी परिचित हों जो इंसान के बाहर क़ायम हैं और स्वयं अपने-आप चल रहे हैं।

यदि आपको बड़ा काम करना है तो इसके लिए सबसे पहले बड़ा दिल पैदा कीजिए। बड़े दिल के बिना कभी बड़ा काम नहीं हो सकता।

छिपे हुए फायेदे देख लेने को ही दूसरे शब्दों में समझदारी कहते हैं, और इस दुनिया में गहरी समझ के बिना कोई बड़ी कामयाबी हासिल नहीं की जा सकती।

इंतज़ार में हल

दुनिया की अलग-अलग भाषाओं में जो मशहूर कहावतें हैं, वे असल में इंसानों के लंबे अनुभवों के बाद बनी हैं। हर कहावत एक तरह से कामयाबी का आज़माया हुआ फ़ॉर्मूला होती है। ऐसी ही एक अंग्रेज़ी कहावत है — "प्रतीक्षा करो और देखो" (Wait and see)।

अमेरिका के मशहूर लेखक हेनरी डेविड थोरो (Henry David Thoreau) का जन्म 1817 में हुआ और उनकी मृत्यु 1862 में हुई। उन्होंने कहा था कि असली हीरो वही होता है जो समझ सके कि कहाँ रुकना है और कहाँ तेज़ी दिखानी है। हर अच्छाई उसी इंसान को मिलती है जो समझदारी से इंतज़ार करता है:

> The hero knows how to wait as well as
> to make haste.
>
> All good abides with him who waiteth wisely.

जीवन में कभी-कभी ऐसे क्षण आते हैं जबकि आदमी को तत्काल एक फ़ैसला करना होता है। फिर भी अगर आदमी तत्काल फ़ैसला लेने में चूक जाए तो उसके बाद उसके लिए जो चीज़ है वह यह नहीं है कि वह घबराकर या तुरन्त फालतू के काम करने लगे। अब उसको प्रतीक्षा करनी चाहिए। अक्लमन्द वह है जो इस अन्तर को जाने कि कब तुरन्त फ़ैसला लेना है और कब मामले को प्रतीक्षा के ख़ाने में डाल देना है। सच तो यह

है कि प्रतीक्षा भी एक कार्रवाई है। प्रतीक्षा करना कोई मामूली बात नहीं। प्रतीक्षा करने का मतलब यह है कि आदमी ने अपने मामले को प्रकृति के क़ानून के हवाले कर दिया; वह ख़ुदा के फ़ैसले का मुन्तज़िर बन गया।

अगर सही समय पर सही फ़ैसला लेना कामयाबी कहलाता है, तो मुश्किल हालात में इंतज़ार करने की नीति अपनाना भी कामयाबी ही है। फर्क बस इतना है कि एक का नतीजा अभी मिलता है और दूसरे का नतीजा कुछ समय बाद।

दुश्मन से भी मुहब्बत

ज़िंदगी का नियम एक वाक्य में यह है कि जैसा आप दूसरों को देंगे, वैसा ही आपको मिलेगा। अगर आप दूसरों को नफ़रत देंगे तो बदले में आपको भी नफ़रत ही मिलेगी। लेकिन अगर आपके पास देने के लिए प्यार है, तो लोग भी आपको प्यार देंगे। अगर आप अपने समाज की समस्याओं को सुलझाने में मदद कर रहे हैं, तो समाज आपको अपना नेता मानने लगेगा।

ईश्वर ने सेवा और मदद में बहुत ज़्यादा आकर्षण रखा है। इनमें वह ताक़त होती है जो लोगों के दिलों को जीत सकती है। ऐसा इंसान लोगों के बीच अपने आप पसंदीदा बन जाता है। उसे दूसरों से वही सब मिल जाता है जो वह चाहता था, क्योंकि उसने भी लोगों को वही दिया था जो वे अपने लिए चाहते थे।

दूसरों के हितैषी बन जाइए और फिर आपको दूसरों से कोई शिकायत न होगी। दूसरों के काम आइए और फिर आपका भी कोई काम अटका हुआ नहीं रहेगा।

वर्तमान संसार में हर आदमी मजबूर है कि वह दूसरों के साथ मिल-जुलकर जीवन गुज़ारे, यहाँ किसी के लिए भी अकेले जीवन गुज़ारना सम्भव

नहीं। ऐसी हालत में बार-बार यह सवाल सामने आता है कि दूसरों के साथ रहने का कामयाब तरीका क्या है? वह यह है कि लोगों को झुकाने की कोशिश न कीजिए, बल्कि स्वयं झुक जाइए। लोगों से लेने की कोशिश न कीजिए, बल्कि देने वाले बनिए। शिकायतों को मुद्दा न बनाइए, बल्कि शिकायतों को भूल जाइए। मतभेद को टकराव का विषय न बनाइए, बल्कि मतभेद के बावजूद लोगों के साथ अच्छा व्यवहार कीजिए। कोई व्यक्ति देखने में आपका दुश्मन नज़र आए तब भी उससे नफ़रत न कीजिए। यही दिल को जीतने का तरीका है और जब दिल को जीत लिया जाए तो उसके बाद कोई और चीज़ जीतने के लिए बाक़ी नहीं रहती।

घर से वंचित होना

दिल्ली की एक बहुत ही दुखद घटना है। 28 मार्च 1995 को मिसेज इन्दूवाही (उम्र 61 साल) ने कस्तूरबा गांधी मार्ग पर स्थित एशिया हाउस की आठवीं मंजिल से कूदकर आत्महत्या कर ली। नीचे गिरते ही उनका पूरा शरीर बुरी तरह टूट गया और उनकी मौके पर ही मौत हो गई।

मिसेज इन्दूवाही ऑल इंडिया रेडियो के हिंदी विभाग में चीफ़ न्यूज़ रीडर थीं। पिछले साल वे वहां से रिटायर हो चुकी थीं। एशिया हाउस एक सरकारी बिल्डिंग है और उसकी पहली मंजिल पर उन्हें दो कमरों का एक फ्लैट रहने के लिए मिला हुआ था। वे पिछले बीस साल से उसी फ्लैट में रह रही थीं। रिटायरमेंट के बाद अब उन्हें वह फ्लैट खाली करना था। फ्लैट छोड़ने की आख़िरी तारीख़ 31 मार्च थी। उनके पति की मौत 1989 में हो चुकी थी। अब वे अपनी बेटी सोनिया और दामाद अशोक कुमार के साथ वहां रह रही थीं। (*हिन्दुस्तान टाइम्स*, 29 मार्च, 1995)

रिटायरमेण्ट के बाद इन्दूवाही बहुत परेशान थीं। उन्होंने अगरचे यमुना पार की रेडियो कालोनी में अपना एक घर बना लिया था, मगर उनको यह विचार परेशान किए हुए था कि मौजूदा सरकारी फ़्लैट क्नॉट प्लेस के इलाके में है और इसकी वजह से उन्हें बहुत-सी सुविधाएँ हासिल हैं, मगर यमुना पार जाने के बाद वह इन शहरी सुविधाओं से महरूम हो जाएँगी। यह बात उन पर इतनी ज़्यादा सवार हुई कि एशिया हाउस की आख़िरी मंजिल पर चढ़कर उन्होंने आत्महत्या की छलाँग लगा दी।

मैंने इस ख़बर को पढ़ा तो अचानक मेरी ज़बान से निकला कि इंसान आज अच्छे घर को छोड़ कर मामूली घर में जाने को सहन नहीं कर पाता; उस दिन इंसान का क्या हाल होगा जब वह हर प्रकार के घर से महरूम कर दिया जाएगा?

इंसान आत्महत्या न करे तब भी उसे मौत तो आनी है। मौत के बाद अचानक वह महसूस करेगा कि उसकी सारी पूँजी उससे छिन चुकी है। उस दिन तमाम घर वाले बेघर हो चुके होंगे। उस दिन घर वाला केवल वह होगा जिससे ख़ुदा ख़ुश हो और अपनी तरफ़ से उसको एक घर प्रदान करे और अपनी जन्नत में रहने की इजाज़त दे दे।

संयम रखें

उस वक़्त जब मैं जवान था और उत्तर प्रदेश के एक गाँव में रहता था, तो मुझे यह इच्छा हुई कि मेरे घर के आँगन में आम का एक पेड़ हो। मैं आम का एक छोटा पौधा अपने आँगन में लगाता और सालों तक उसके बढ़ने का इंतजार करता। लेकिन नौजवानी के जोश में मैं इस इंतजार के लिए तैयार नहीं था। मैं चाहता था कि मेरे घर में तुरंत ही एक बड़ा-सा आम का पेड़ नज़र आए।

हमारे पास एक आमों का बाग़ था, जिसमें पाँच साल का एक पेड़ था, जो इंसान की ऊँचाई तक पहुँच चुका था और खूब हरा-भरा था। मैंने कई मजदूरों को उस पेड़ पर काम करने के लिए लगाया। वे दिनभर उसकी खुदाई करते रहे। आखिरकार शाम को उस पेड़ को एक बड़ी चारपाई पर रखकर घर के अंदर लाया गया और आँगन में खोदे गए खड्डे में लगाया दिया गया।

मैं बहुत ख़ुश था कि मैंने बड़ा पेड़ लगाकर पाँच साल का सफ़र एक दिन में तय कर लिया है। मगर रात को सोकर जब मैं सुबह को उठा तो पेड़ के पत्ते मुरझाए हुए नज़र आए। लेकिन मैं निराश नहीं हुआ। मैंने उसमें ख़ूब पानी डाला। मैंने समझा कि पानी पा कर उसके पत्ते हरे हो जाएँगे। मगर ऐसा नहीं हुआ। अगले दिन उसके पत्ते और ज़्यादा मुरझा गए। यहाँ तक कि कुछ दिनों में वह पेड़ बिल्कुल सूख गया।

नौजवानी की उम्र का यह अनुभव मेरे लिए बड़ा सबक़ साबित हुआ। वह मेरे लिए जीवन-भर का अनुभव बन गया। उससे मेरे अन्दर गहराई के साथ यह सोच पैदा हुई कि जीवन में कोई शॉर्टकट नहीं। जीवन एक लम्बा सफ़र है और उसको हर हाल में लम्बे दिनों ही में पूरा करना है।

इस घटना के बाद मुझ पर यह रहस्य खुला कि दुनिया में इंसान का मामला फ़िफ़्टी-फ़िफ़्टी जैसा नहीं है। अर्थात् दुनिया में जो भी काम करना हो उसमें एक हिस्सा इंसान का होता है और दूसरा हिस्सा नैचर का। दुनिया में हर घटना इंसान और नैचर, दोनों के सहयोग से पूरी होती है। इंसान यदि जल्दी चाहे और नैचर का तरीक़ा जल्दी का तरीका न हो, तो ऐसी हालत में केवल इंसान के चाहने से कोई नतीजा निकलने वाला नहीं। इस घटना ने मुझे हमेशा के लिए इस मामले में सावधान कर दिया।

इंसान और प्रकृति की तुलना एक काग व्हील से की जा सकती है। काग व्हील में दोनों काग एक साथ चलते हैं। यदि एक काग (Cog) अपनी गति को दूसरे से तेज़ करना चाहे, तो पूरी व्यवस्था बिगड़ जाती है। इंसान

का काग कमजोर है और प्रकृति का काग मजबूत। ऐसी स्थिति में यदि इंसान अपनी गति बढ़ाने की कोशिश करता है, तो उसका काग टूट सकता है, क्योंकि प्रकृति का काग इतना शक्तिशाली है कि वह कभी टूटता नहीं।

पेड़ों के मामले में जो अनुभव मुझे हुआ, वह मेरे जीवन का निर्णायक अनुभव बन गया। उसके बाद मैंने कभी ऐसा नहीं किया कि जो काम धीरे-धीरे होना है, उसे तुरंत पूरा कर लूँ। अब मैं हर काम में यह सोचता हूँ कि उसका सही आरंभिक बिंदु क्या है। क्योंकि इस दुनिया में आप बीच से या अंत से अपना सफर शुरू नहीं कर सकते। आपको हमेशा वहीं से शुरुआत करनी होती है जहाँ प्रकृति के अनुसार वह शुरू होता है।

जो परिणाम कल मिलने वाला हो, उसे आज पाने की इच्छा कोई सामान्य बात नहीं है। यह प्रकृति के नियमों के खिलाफ जाना है। यह इस दुनिया के अंदर एक अलग दुनिया बनाने जैसा है। ऐसी कोशिश कभी सफल नहीं होती। इस दुनिया में इंसान की हर सफलता प्रकृति के नियमों के साथ तालमेल बिठाकर ही संभव होती है। जो व्यक्ति प्रकृति के नियमों के खिलाफ जाता है, वह यहाँ कुछ भी हासिल नहीं कर सकता। यह एक अटल सत्य है जिस पर कोई विवाद नहीं।

उपेक्षा ही हल है

जन्म से ही यह मेरी आदत है कि मैं हर किसी की बात ध्यान से सुनता हूँ और उससे कुछ सीखने की कोशिश करता हूँ। इसका मुझे यह फायदा होता है कि मैं हर किसी से कुछ न कुछ महत्वपूर्ण सीख लेता हूँ। हर किसी के अनुभव में कोई ऐसी बात होती है जो सभी के लिए उपयोगी हो सकती है।

एक बार मैं एक गाँव में था। मैंने देखा कि गाँव के दो आदमी आपस में बातें कर रहे थे। वे दोनों दोस्त थे, लेकिन उनमें से एक को किसी बात पर

शिकायत हो गई थी। जिसको शिकायत थी वो बार-बार अपनी बात दोहरा रहा था। दूसरा आदमी बहुत कोशिश करता रहा कि शिकायत खत्म हो जाए, लेकिन जब उसने देखा कि शिकायत खत्म नहीं हो रही है, तो उसने कहा—"शिकायत को अलग रख दो, फिर हम पहले जैसे अच्छे दोस्त बन जाएंगे।"

देखने में यह एक सामान्य सी बात है, मगर, जीवन का एक बहुत बड़ा रहस्य है। कोई भी दो आदमी एक ढंग के नहीं होते। जिस तरह एक आदमी के अंगूठे का निशान दूसरे आदमी के अंगूठे के निशान से अलग होता है, उसी तरह हर आदमी अपनी सोच, अपनी भावना और अपनी पसन्द और नापसन्द के हिसाब से दूसरे तमाम लोगों से बिल्कुल भिन्न होता है। अब इस अन्तर व मतभेद के साथ समाज में सुखद जीवन कैसे गुज़ारा जाए?

इसका आसान फ़ॉर्मूला यह है कि जब किसी से मतभेद पैदा हो तो उसको समझाने की कोशिश की जाए और अगर समझाने के बाद भी मतभेद और शिकायत दूर न हो तो दोनों इस बात पर राजी हो जाएँ कि दोनों शिकायत वाली बात को अलग रख देंगे, वे एक-दूसरे से इस पर बहस नहीं करेंगे।

यह फ़ॉर्मूला हर जगह के लिए है, परिवार के अन्दर भी और परिवार के बाहर भी, अपने लोगों में भी और अजनबी लोगों में भी इस दुनिया में सुख की ज़िन्दगी बिताने का इससे ज्यादा आसान फ़ॉर्मूला और कोई नहीं।

जैसा की मालूम है हर व्यक्ति की सोच अलग होती है, इसलिए यह असंभव है कि आप दूसरों को पूरी तरह से अपने विचारों के अनुसार बदल सकें। मतभेद एक प्राकृतिक सत्य है, जो कभी समाप्त होने वाला नहीं। ऐसी स्थिति में यदि आप मतभेदों को पूरी तरह खत्म करने की कोशिश करें, तो वे कभी खत्म नहीं होंगे। यह प्रयास केवल आपको और अधिक परेशानी में डाल देगा और कभी भी आपको सुख-शांति नहीं देगा।

ऐसे में सबसे अच्छा काम यह है कि आप अपनी शिकायतों को अलग रख दें। मतभेदों के बावजूद लोगों के साथ मिल-जुलकर रहने की कोशिश करें। हर व्यक्ति से आपको कोई न कोई शिकायत होती है, लेकिन हर व्यक्ति में कुछ ऐसे गुण भी होते हैं आपके लिए लाभकारी होते हैं।

अब आपको करना यह है कि अपनी शिकायतों को बिना शिकायत वाली बातों से अलग करें। जब आप इन्हें अलग कर देंगे, तो आपको महसूस होगा कि दूसरा व्यक्ति भी आपके लिए एक सामान्य इंसान है, जैसे कि बहुत सारे दूसरे लोग।

मौजूदा दुनिया में हर आदमी मिल-जुल कर रहने पर मजबूर है। एकान्त का जीवन यहाँ व्यवहारयोग्य नहीं। आप जब भी दूसरों के साथ मिल-जुलकर रहेंगे या मिलकर काम करेंगे, तो निश्चय ही कोई-न-कोई शिकायत या मतभेद सामने आएगा। इस मसले का हल केवल यह है कि शिकायत वाली बात को भुला दिया जाए और बेशिकायत वाली बातों की बुनियाद पर लोगों के साथ जीवन गुज़ारा जाए।

उपेक्षा करना कोई कमज़ोरी की बात नहीं। यह जीवन का एक उच्च उसूल है। यह हर उस इंसान का तरीका है जो अपने सामने कोई बड़ा उद्देश्य रखता हो। इस दुनिया में अप्रिय बातों की उपेक्षा करने वाले लोग ही आगे बढ़ते हैं। जो लोग उपेक्षा न कर सकें, वे बीच में उलझकर रह जाएँगे, वे अपनी मंज़िल तक नहीं पहुँचेंगे।

जिन्दगी की सड़क

सड़क पर आमने-सामने से दो व्यक्ति गुजरे। दोनों साइकिल पर सवार थे। उनकी साइकिलें हल्की-सी टकरा गईं। टक्कर के कारण दोनों की साइकिलें रुक गईं। इसके बाद दोनों के बीच विवाद शुरू हो गया। बात इतनी बढ़ गई

कि वे आपस में लड़ पड़े। दोनों को चोटें आईं और अंत में वे सीधे अपने घर जाने के बजाय डॉक्टर के पास गए।

साइकिल की इस टक्कर से कोई गंभीर चोट नहीं आई थी, बल्कि विवाद के कारण दोनों घायल हुए। इसी बात को एक समझदार व्यक्ति ने इस तरह कहा है: दूसरा व्यक्ति किसी को उतनी चोट नहीं पहुंचाता जितनी चोट आदमी अपनी नादानी से ख़ुद को पहुंचाता है।

सोचिए तो हमारे समाज में जितने भी दंगे-फसाद हो रहे हैं उन सबका सार यही है। आरम्भ में कोई मामूली-सी बात पेश आती है। उस आरम्भिक सूरत में उससे कोई ख़ास नुक्सान नहीं होता। मगर उसके बाद लोग भावुक हो जाते हैं। और फिर जो टकराव होता है वह लोगों को बड़े-बड़े नुक्सान तक पहुँचा देता है।

जीवन का मामला सड़क जैसा है। जीवन के मैदान में एक समय में हज़ारों लोग अपनी-अपनी दौड़ लगा रहे हैं। अब स्वभावतः ऐसा होता है कि कभी एक आदमी की दूसरे आदमी से टक्कर हो जाती है। ऐसे अवसर पर करने का काम यह है कि पहले ही मरहले में सहन करके बात को वहीं ख़त्म कर दिया जाए। अगर पहले मरहले में सहन न किया जाए तो बात बढ़ेगी और फिर यह होगा कि आरम्भिक टक्कर से तो किसी को कोई विशेष हानि नहीं पहुँची थी, मगर उसके बाद की लड़ाई में दोनों अपने-आप को तबाह कर लेंगे।

किसी ने कहा है कि 'आप दुनिया से उन लोगों को खत्म नहीं कर सकते जिन्हें आप पसंद नहीं करते, लेकिन उनके साथ सहनशीलता से पेश आकर अपने जीवन को खुशहाल बना सकते हैं।' यह एक सच्चाई है जिसे पूरा इतिहास प्रमाणित करता है। जब यह सच है, तो फिर आप क्यों असंभव संघर्ष में पड़ें? क्यों न संभव रास्ता चुनकर अपना सफर आसान बनाएं! दुनिया में आपको जैसा रहना है, वैसे ही दूसरों को भी रहने देना चाहिए।

दुनिया किसी एक व्यक्ति के लिए नहीं, बल्कि सबके लिए है। इसीलिए यथार्थ यह है कि दूसरों के अस्तित्व को उसी तरह स्वीकार करें जैसे आप अपने अस्तित्व को बनाए रखना चाहते हैं। दूसरों को भी वही अधिकार दें जो आप अपने लिए चाहते हैं। यदि आप इस सोच को अपनाते हैं, तो देखेंगे कि जो दुनिया कांटों से भरी लग रही थी, वह आपके लिए फूलों से भरी दुनिया बन जाएगी।

दूसरों को जीवन का अधिकार देकर आप खुद भी जीवन का अधिकार प्राप्त करते हैं। और यदि आप दूसरों को उनका अधिकार देने से इनकार करते हैं, तो समाज में ऐसा बिगाड़ होगा कि आपको भी अपने अधिकार से वंचित होना पड़ेगा। असल में दूसरों के साथ भलाई करना अपने लिए भलाई करना है, और दूसरों के लिए बुरा चाहना अपने लिए बुरा चाहने के बराबर है। इस दुनिया में देने का नतीजा पाना है और छीनने का अंत खोना।

किसी ने कहा है कि प्रतीक्षा भी मसले का एक हल है। मगर लोगों में प्रतीक्षा करने का साहस नहीं। मतलब यह है कि वर्तमान की महरूमी पर न घबराओ। हो सकता है कि भविष्य में तुम उससे ज़्यादा अपने लिए हासिल कर लो। इसको समझने के लिए एक मिसाल लीजिए।

एक बाप के यहाँ दो बच्चे पैदा हुए। एक ने ऊँची शिक्षा हासिल की। दूसरे ने पढ़ने में मेहनत नहीं की। वह जाहिल रह गया। इसका नतीजा यह हुआ कि शिक्षित लड़के ने प्रगति हासिल की। जाहिल लड़का कोई प्रगति हासिल न कर सका। उसका दूसरा अंजाम यह हुआ कि एक आदमी को घर में इज्जत और बड़ाई मिली। दूसरा आदमी स्वयं अपने घर में इज्जत और बड़ाई पाने से वंचित हो गया।

यह दो सगे भाइयों का किस्सा है। दो आदमी चाहे सगे भाई और एक बाप की औलाद हों, मगर कभी-कभी ऐसा होता है कि दोनों में अन्तर हो जाता है। यह अन्तर प्रकृति के क़ानून के तहत होता है। और उससे कोई

वास्तविक हानि भी नहीं। अतः उपरोक्त मिसाल में जिस भाई ने ऊँची प्रगति की थी उसके लड़के मौज-मस्ती में पड़ गए। वे मेहनत न कर सके। मगर दूसरा भाई, जो प्रगति न कर सका, उसकी औलाद में मेहनत की भावना उभर आयी। उनके बाप का पिछड़ापन उनके लिए प्रेरणा बन गया। वे रात-दिन मेहनत करने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि अगली पीढ़ी में नक्शा बदल गया। एक भाई के बेटे ग़फ़लत में पड़ कर पीछे रह गए और दूसरे भाई के बेटों ने होशियारी का सुबूत देकर इतनी प्रगति की कि उन्होंने बाप की महरूमी की भी क्षतिपूर्ति कर ली। एक ही पीढ़ी में पूरा इतिहास बदल गया।

एक भाई को वर्तमान में मिला और दूसरे भाई को भविष्य में। इस तरह आख़िरकार दोनों बराबर हो गए। यह इस दुनिया के लिए क़ुदरत का कानून है। यह क़ानून लोगों के लिए भी है और क़ौमों के लिए भी। इतिहास के क्रम के दौरान अगर कोई क़ौम दूसरी क़ौम से हार जाए, तो उसको निराशा या झुंझलाहट का शिकार नहीं होना चाहिए। क्योंकि जो कुछ हुआ है वह अस्थायी है, न कि सदैव के लिए। इतिहास का चक्र दोबारा अपना काम करेगा। और फिर जल्द ही दुनिया देखेगी कि जो आगे था वह पिछली सीट पर चला गया और जो पीछे था उसने अगली सीट पर अपने लिए जगह हासिल कर ली।

'प्रकृति तारिख बनाती है, न कि कोई इंसान' — यह कथन बहुत मायने रखता है। जब भी कोई क़ौम खुद को दूसरी क़ौम के मुकाबले कमजोर पाती है, तो उसे समझना चाहिए कि जो कुछ भी हुआ है, वह प्राकृतिक नियमों के तहत हुआ है, न कि किसी के अत्याचार के कारण। इसलिए अपनी सोच को प्राकृतिक कानूनों को समझने की ओर मोड़ना चाहिए, न कि किसी क़ौम या समूह के खिलाफ नफ़रत और बदला लेने की भावना में उलझना चाहिए।

अपने नुक़सान के लिए आप किसी दूसरी क़ौम या बाहरी कारण से लड़ने के बजाय, प्राकृतिक नियमों को जानकर खुद को उसके अनुसार ढालने की कोशिश करें। आप प्राकृतिक नियमों के प्रभाव में गिरे हैं, लेकिन यदि आप इन नियमों के अनुकूल अपने आप को बनाएंगे, तो फिर से मजबूती से खड़े हो सकते हैं।

सही सोच

भारत प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु स्वामी विवेकानन्द (मृत्यु 1902 ई.) की जीवनी मैंने पढ़ी। उसमें एक घटना मुझे बहुत पसंद आई। यह घटना सिर्फ एक सामान्य घटना नहीं, बल्कि जीवन का एक रहस्य और इस दुनिया में कामयाबी की कुंजी है।

स्वामीजी के एक मसीही (ईसाई) मित्र थे जो उन्हें बहुत मानते थे। एक बार उन्होंने स्वामीजी की परीक्षा लेने का मन बनाया और उन्हें अपने घर खाने पर बुलाया। जब स्वामीजी उनके घर पहुंचे, तो उन्हें एक कमरे में बिठाया गया। उस कमरे में एक मेज़ थी, जिस पर कई धार्मिक किताबें एक के ऊपर एक रखी थीं। सबसे नीचे गीता रखी थी, जो हिंदू धर्म की पवित्र पुस्तक है, और उसके ऊपर अन्य धर्मों की किताबें रखी हुई थीं।

स्वामीजी जब कमरे में पहुँचे तो उनके मित्र ने कहा कि स्वामीजी उसको देखिए, इस पर आपकी टिप्पणी क्या है? एक सूरत यह थी कि स्वामीजी उसको देख कर भड़क उठें। वे कहें कि मेरे धर्म की किताब को सबसे नीचे रखकर तुमने मेरे धर्म का अपमान किया है। क्या तुमने मुझे इसी अपमान के लिए बुलाया था? इसके बाद मेहमान और मित्र दोनों एक-दूसरे से लड़ पड़ते।

लेकिन स्वामीजी ने ऐसा नहीं किया। वे किताब की जगह को देख कर मुस्कराए और धीरे-से अपने मेज़बान से कहा – फाउण्डेशन (नींव) तो सचमुच बहुत अच्छी है : The foundation is really good.

स्वामी विवेकानन्द की यह घटना बताती है कि उन्होंने नकारात्मक घटना को सकारात्मक घटना में ढाल लिया। एक बात जो देखने में अप्रिय थी, उसको उन्होंने सुखद सूरत दे दी।

इस दुनिया में जीवन का रहस्य यही है। यहाँ फूलों के साथ काँटे भी होते हैं। यहाँ अच्छे इंसानों के साथ बुरे इंसान भी मौजूद हैं। इसलिए इंसान को बार-बार कड़वे शब्द सुनने पड़ते हैं। यहाँ उसे नफ़रत का सामना करना पड़ता है और दूसरों की ओर से अपमान भी सहना पड़ता है।

ऐसी स्तिथि में इस दुनिया में कामयाबी का रहस्य सिर्फ ये है कि इंसान फूलों के साथ काँटों से भी निबाह करना सीख जाए, नफ़रत करने वालों से भी मोहब्बत कर सके, और अपने खिलाफ कही गई बातों में ऐसे पहलू खोज ले जो उसके लिए फायदेमंद और हितकारी हों।

मेरे अनुभव के अनुसार इंसान पत्थर नहीं होता। हर इंसान के सीने में वही नर्म दिल होता है जो किसी दूसरे के पास है। इस दुनिया में जन्म लेने वाला हर व्यक्ति इंसान है, और कोई भी जन्मजात रूप से भेड़िया नहीं होता।

अगर कोई आदमी किसी वजह से कड़वे बोल बोले तो आप उसके शब्दों को न देखिए, आप उसके सीने में छुपे हुए नर्म दिल को देखिए। आप उसके कड़वे बोलों का असर न लेते हुए उससे मीठे बोल बोलिए। वह आपको काँटा दे तो आप उसको फूल का उपहार पेश कीजिए। इसके बाद आप देखेंगे कि वही इंसान, जो देखने में आपका दुश्मन दिखाई दे रहा था, आपका दोस्त बन जाएगा।

यह अनुभव है कि जब आदमी के साथ कोई पसन्द के विरुद्ध बात पेश आए और उसको सुनकर वह गुस्सा हो जाए तो उसका असर उसकी अपनी

सूझ- बूझ पर पड़ता है। उसकी अक्ल ठीक रूप से काम नहीं कर पाती। उसकी वजह से वह दूसरों की बात का ज़्यादा अच्छा जवाब नहीं दे पाता।

यदि आप क्रोध वाली बात पर क्रोधित नहीं होते, तो सबसे पहला लाभ आपको ही मिलता है। आपकी बुद्धि सामान्य बनी रहती है। आप इस स्थिति में होते हैं कि किसी भी बात का बेहतर जवाब दे सकें। जो व्यक्ति गुस्से में आकर भड़क जाता है, वह केवल पत्थर फेंक सकता है, जबकि जो व्यक्ति खुद को गुस्से से बचाता है, वह तर्क की भाषा में बात करेगा। तर्क की भाषा पत्थर फेंकने की भाषा से हजार गुना अधिक प्रभावशाली होती है।

सकारात्मक सोच वाला व्यक्ति अपनी पूरी संभावनाओं के साथ जीवन जीता है, जबकि नकारात्मक सोच वाला व्यक्ति केवल अपनी अधूरी संभावनाओं के साथ रहता है।

निबाह करना सीखें

इंग्लिश भाषा के एक कवि फ्रेडरिक लेंगब्रिज (Frederick Langbridge) थे। उनका जन्म 1849 में हुआ और 1923 में उनकी मौत हुई। उनकी एक कविता की पंक्ति है कि रात के वक़्त दो लोग खिड़की से बाहर देखते हैं — एक को कीचड़ दिखता है और दूसरे को तारे:

> Two men look out through the same bars
>
> One sees the mud, and one the stars.

यही बात एक फ़ारसी कवि ने और भी अच्छे ढंग से इस तरह कही है कि मेरे और तुम्हारे बीच फर्क बस समझने का है। एक आवाज़ आती है; तुम उसे दरवाज़ा बंद होने की आवाज़ समझते हो, और मैं उसे दरवाज़ा खुलने की आवाज़ समझता हूँ:

तफावुत अस्त मयाने शुनीदने मन व तू

तू बस्ताने दर व मन फ़तहे बाब मी शनूम

पेड़ में काँटे के साथ फूल भी होता है। यही हाल इंसानी समाज का है। समाजी हालात देखने में चाहे कितने बुरे हों, हमेशा उनके अन्दर अच्छा पहलू भी साथ- साथ मौजूद रहता है। एक व्यक्ति, जो चीज़ों को केवल बाहरी रूप से देखने की निगाह रखता हो, वह उपरी चीज़ों को देखेगा, और ज़्यादा गहरे पहलुओं को देखने में नाकाम रहेगा। मगर जो व्यक्ति गहरी नज़र रखता हो, वह ज्यादा दूर तक देखेगा और ख़राब पहलू के साथ अच्छे पहलू को मालूम करने में कामयाब हो जाएगा।

इस दुनिया में कीचड़ भी है और यहाँ सितारे भी हैं। यह देखने की बात है कि कौन व्यक्ति किस चीज़ को देखता है। एक ही आवाज़ है, मगर नादान आदमी उसको देखकर यह समझ लेता है कि दरवाज़ा बन्द हो गया और समझदार आदमी समझता है कि दरवाज़ा उसके लिए खोल दिया गया है।

सारी समस्याएँ हमेशा सोच में पैदा होती हैं, और उन्हें सोच के अंदर ही खत्म किया जा सकता है — बस शर्त यह है कि इंसान के अंदर सही सोचने की समझ आ जाए।

सही बात यह है कि यह दुनिया अक्ल की परीक्षा है। जो इंसान अपनी अक्ल का सही इस्तेमाल करेगा, वह अपने लिए रास्ता निकाल लेगा। लेकिन जो अक्ल का इस्तेमाल नहीं करेगा, उसके हिस्से में तबाही के अलावा कुछ नहीं आएगा।

समुद्र में लहरें उठती रहती हैं। जो इंसान समंदर में अपनी नाव चलाना चाहता है, उसे ज़रूरी है कि लहरों और तूफ़ानों का सामना करते हुए अपनी नाव मंज़िल की तरफ ले जाए। जंगल में झाड़ियाँ और शिकारी जानवर होते

हैं। जो जानवर जंगल में रहते हैं, उनके पास इसके सिवा कोई और रास्ता नहीं होता कि वे कांटों और दुश्मन जानवरों के बीच जीने का तरीका ढूंढ़ें।

ऐसा ही कुछ मामला इंसानी समाज का भी है। इंसानों के अन्दर भी तरह तरह के लोग हैं। उनके हित एक-दूसरे से टकराते हैं। विभिन्न कारणों से एक और दूसरे के बीच में अरुचि पैदा होती है। यह ऊँच-नीच और यह अन्तर सामाजिक जीवन में हमेशा से हैं और हमेशा बाकी रहेंगे। उन्हें किसी तरह ख़त्म नहीं किया जा सकता।

ऐसी हालत में इंसान के लिए जीवन और कामयाबी का केवल एक ही सम्भव रास्ता है, वह 'बावजूद' शब्द को अपनी नीति बनाए। वह विरोधों के बावजूद लोगों को अपना बनाने की कोशिश करे। वह ख़राब हालात के बावजूद अपने लिए सुखद जीवन का रहस्य मालूम करे। उसके विरुद्ध दुश्मनी और साजिशें की जाएँ तब भी वह इस यक़ीन के साथ आगे बढ़े कि वह अपने सकारात्मक काम से तमाम नकारात्मक बातों का ख़ात्मा कर सकता है।

वर्तमान संसार में इंसान काँटों के होते हुए भी फूल तक पहुँचना होता है। यहाँ कई तरह की बीमारियों के कीटाणु होने के बावजूद खुद को सेहतमंद बनाए रखना पड़ता है। इसी तरह इंसान को यह करना होता है कि वह मुश्किल हालात देखकर हिम्मत न हारे और न ही शिकायत या विरोध में अपना समय बर्बाद करे। उसे उन सच्चाइयों के साथ तालमेल बिठाकर जीना चाहिए जिन्हें वह बदल नहीं सकता। रास्ते में जो पत्थर उसकी राह रोक रहे हैं, वो उनसे बचकर निकल जाए। लोगों की विरोधी बातों को आधार बनाने की बजाय उपायों के ज़रिए उनसे निपटने की कोशिश करे। उसे कम मिलने पर भी संतोष करना चाहिए ताकि आगे चलकर उसे ज़्यादा मिल सके। दुश्मनी की हालत में उसे सब्र से काम लेना चाहिए, ताकि जो आज उसके दुश्मन हैं, वे कल उसके दोस्त बन सकें।

बोझ न बनें

18–24 मार्च, 1989 के टाइम्स ऑफ़ इंडिया (पृष्ठ 6) के परिशिष्ट The Neighbourhood Star, में एक शिक्षाप्रद घटना प्रकाशित हुई थी। जब ईरान के पारसी लोग पहली बार भारत आए, तो वे देश के पश्चिमी तट पर उतरे। उस समय यादव राना गुजरात का राजा था। पारसी समुदाय के नेता ने राजा से मुलाकात की और उनसे यह प्रार्थना की कि वे उन्हें अपनी रियासत में रहने की इजाज़त दें।

राजा ने जवाब में एक दूध से भरा गिलास पारसी नेता को दे दिया। इसका मतलब यह था कि हमारी रियासत पहले ही लोगों से भरी हुई है, इसमें और लोगों के लिए कोई जगह नहीं है।

पारसी नेता ने इसका कोई जवाब शब्दों में नहीं दिया। उसने बस एक चम्मच शक्कर लेकर उस दूध में मिला दी और गिलास राजा को लौटा दिया। यह एक प्रतीक था — इसका मतलब था कि हम आपके दूध पर क़ब्ज़ा नहीं करेंगे, बल्कि उसमें मिठास जोड़ेंगे। यानी हम आपकी रियासत की ज़िंदगी में मिठास लाएँगे।

यह देखकर राजा प्रभावित हुआ और उसने पारसियों को गुजरात में बसने की इजाज़त दे दी।

इस घटना को बीते अब एक हज़ार साल की अवधि गुज़र चुकी है। इतिहास बताता है कि पारसी नेता ने जो बात कही थी उसको पारसी क़ौम ने पूरा कर दिखाया। पारसी इस देश में माँग और विरोध और प्रदर्शन का झण्डा लेकर खड़े नहीं हुए, बल्कि उन्होंने अपनी ख़ामोश मेहनत से इस देश की प्रगति में वृद्धि की। पारसियों ने दूसरों से ज़्यादा मेहनत की। वे शिक्षा, व्यापार और उद्योगों में आगे बढ़े। उन्होंने देश की दौलत और देश की प्रगति को बढ़ाया। इस देश में जहाँ बहुत से लोग लेने वाले समूह (Taker Group)

की हैसियत रखते हैं, पारसियों ने कर्म द्वारा अपने लिए देने वाले समूह (Giver Group) का दर्जा हासिल किया है। यही जीवन का रहस्य है। इस दुनिया में देने वाला पाता है। यहाँ उस आदमी को सम्मानित जगह मिलती है जो लोगों के 'दूध' में अपनी तरफ़ से 'मिठास' की वृद्धि करे। इसके विपरीत जिन लोगों के पास दूसरों को देने के लिए केवल कड़वापन हो, उन्हें इस दुनिया में भी वही चीज़ मिलती है जो उन्होंने दूसरों को दी है।

अगर आप कुछ पाना चाहते हैं तो दुनिया में 'डोनेशन कार्ड' लेकर निकलिए। अगर आप 'चन्दे की रसीद बुक' लेकर निकले तो यहाँ आपको कुछ मिलने वाला नहीं।

मिस्टर पी. टी. मल्होत्रा (जन्म 1935) से 24 अगस्त 1988 को मुलाकात हुई। वे नई दिल्ली की साहित्य अकादमी में लगभग 30 साल से पब्लिकेशन मैनेजर के तौर पर काम कर रहे हैं। उन्होंने बताया कि एक दिन उन्हें ऑफिस में देर हो गई। जब वे घर जाने के लिए निकले, तो रात के 12 बज चुके थे। वे अपने स्कूटर पर जा रहे थे कि रास्ते में एक पुलिसवाले ने उन्हें रोक लिया और कहा:

"अपना ड्राइविंग लाइसेंस दिखाओ।"

मिस्टर मल्होत्रा ने जेब में हाथ डाला, तो ड्राइविंग लाइसेंस के साथ एक और कार्ड भी बाहर आ गया। पुलिसवाले ने दोनों कार्ड हाथ में लेकर पूछा,

"यह दूसरा कार्ड क्या है?"

असल में वह नेत्रदान का कार्ड (Eye Donor Card) था। इस कार्ड पर उस इंसान के दस्तख़त के साथ ये शब्द लिखे होते हैं:

> I have gifted my eyes to the nation. Kindly inform the nearest Eye Bank immediately on my demise and help them to fulfil my desire. Thanks.
>
> "मैंने अपनी आँखें क़ौम को डोनेट कर दी हैं। कृपया मेरी मौत पर सबसे नज़दीकी आँखों के अस्पताल को तुरन्त सूचित करें और मेरी इच्छा पूरी करने में उनकी मदद करें। धन्यवाद।"

पुलिस का आदमी पहले बहुत रुखाई के साथ बात कर रहा था, मगर आँख के डोनेशन कार्ड को देखते ही उसका स्वर बदल गया। उसने आगे जाँच किए बिना कहा, 'जाइए, जाइए'।

आँख का डोनेशन मौजूदा ज़माने में एक सुकर्म समझा जाता है। टी. वी. पर उसकी अपील इन भावनात्मक शब्दों में आती है : 'दुनिया में एक ही चीज़ है जो केवल आप किसी को दे सकते हैं।' पुलिस वाले ने जब मिस्टर मल्होत्रा के पास आँख के डोनेशन का कार्ड देखा तो वह समझा कि यह एक शरीफ़ और हमदर्द इंसान है। आँख के दान का कार्ड मल्होत्रा के लिए इस बात की पहचान बन गया कि वे दूसरों को देने वाले आदमी हैं। इस चीज़ ने पुलिस के दिल को उनके पक्ष में नर्म कर दिया।

इस दुनिया में वही इंसान कुछ पाता है जो दूसरों को देता है। जो दूसरों को कुछ देता है, उसे बदले में दूसरों से भी कुछ मिलता है। यहाँ तक कि अगर किसी ने अभी तक कुछ दिया नहीं है, बल्कि सिर्फ़ देने का इरादा ज़ाहिर किया है, तो भी वह पाने का हक़दार बन जाता है।

"आत्म विकास: सफलता का रहस्य" एक प्रेरणादायक किताब है जो आत्म-विकास पर ध्यान देने की सीख देती है। यह बताती है कि सफलता केवल बाहरी संसाधनों से नहीं, बल्कि सकारात्मक सोच, इच्छा-शक्ति, धैर्य और आशावाद पर निर्भर करती है। यह सिखाती है कि आत्म-विश्वास से कठिनाइयों का सामना कैसे करें और लगातार प्रयास कैसे मंज़िल के करीब लाते हैं। सच्ची घटनाओं और रोज़मर्रा के अनुभवों से लेखक ने समझाया है कि शांति, विनम्रता, मेहनत और सकारात्मक दृष्टिकोण ही सफलता की कुंजी हैं। यह किताब हर उम्र के उन लोगों के लिए है जो जीवन में ऊँचाइयों तक पहुँचना चाहते हैं। यह सिखाती है कि धैर्य और आगे बढ़ते रहने का साहस, कठिन हालात में भी रास्ता बना सकता है।

PDF

Buy

ISBN 978-93-89766-51-6

9 789389 766516

Goodword Books
CPS International